प्रकाशक—
नाथूराम प्रेमी,
हिन्दी ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, बम्बई नं. ४.

जनवरी, १९४९
मूल्य तीन रुपया

: मुद्रक :
रघुनाथ दिपाजी देसाई,
न्यू भारत प्रिंटिंग प्रेस,
केळेवाडी, गिरगांव, बम्बई नं. ४

प्रकाशक—
नाथूराम प्रेमी,
हिन्दी ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, बम्बई नं. ४.

जनवरी, १९४६

मूल्य तीन रुपया

: मुद्रक :
रघुनाथ दिपाजी देसाई,
न्यू भारत प्रिंटिंग प्रेस,
६ केलेवाडी, गिरगांव, बम्बई नं.

जमीन-जायदाद, और तिजारत आदिके देखते हुए उनकी सम्पत्ति और सम्पदाको यदि बहुत ज्यादा या जरूरतसे ज्यादा कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। उनकी विशाल अट्टालिकाके सामनेवाले रास्तेसे जब यह जुलूस लाल पताकाओंपर लिखित नानाप्रकारके वाक्यों और किसान-मजूरोंके जोर-जोरसे जयजयकार-वहन करता हुआ गुजर रहा था तब उस मकानकी दूसरी मंजिलपर बरामदेमें खड़ा हुआ एक दीर्घाकृति वलिष्ठ युवक नीचेके सम्पूर्ण दृश्यको चुपचाप देख रहा था। अकस्मात् उसपर दृष्टि पड़ते ही विक्षुब्ध जनताका उफनता हुआ कोलाहल एक ही क्षणमें बुझ-सा गया। आगे-आगे चलनेवाले नेतृस्थानीय दो-तीन व्यक्तियोंने इधर-उधर देखकर बहुतसे लोगोंकी दृष्टिका चौंककर अनुसरण करके ऊपरकी ओर मुँह उठाते ही देखा कि वह युवक खम्भोंकी आड़में धीरे धीरे गायब हो गया। उन लोगोंने पूछा—“ कौन है ? ”

बहुतोंने दबे हुए गलेसे कहा—“ विप्रदास बाबू। ”

“ कौन विप्रदास ? गाँवका जमींदार ? ”

किसी एक जनेने कहा—“ हाँ। ”

नेता शहरके ठहरे, किसीकी ऐसी-कोई परवाह नहीं करते, उपेक्षाके साथ बोले—“ ओः—यह बात है! ” और दूसरे ही क्षण सिरके ऊपर हाथ घुमाते हुए बुलन्द आवाजसे एक साथ चीत्कार करते हुए बोले—“ बोलो भारत-माताकी जय! बोलो किसान-मजदूरोंकी जय! बोलो बन्दे मातरम्! ”

किन्तु कोई खास नतीजा नहीं निकला। अधिकांश लोग चुप रहे या मन-ही-मन बोले, और जिन दो-चार जनोंने आवाज निकाली उनके भी क्षीण कण्ठ ज्यादा ऊँचे न जा सके—उनकी आवाज विप्रदासके बरामदेको लाघ कर उनके कानोंतक पहुँची या नहीं, समझमें नहीं आया। नेताओंने अपनेको अपमानित अनुभव किया, वे झुँझलाकर बोले—“ गाँवका एक मामूली जमींदार, उससे इतना डर! ये ही तो हमारे शत्रु हैं और हमारे शरीरका खून रात-दिन चूसा करते हैं। हमारी असली लड़ाई तो इन्हींके खिलाफ है। ये ही तो—”

प्रदीप्त वाग्मितामें सहसा बाधा आ पड़ी। बहुतसे पैनाये हुए बाण अब भी उनके तरकशोंमें संचित थे, किन्तु उनके प्रयोग करनेमें विघ्न आ गया। भीड़मेंसे एक आदमीने आहिस्तेसे कहा—“ उनके भाई सा'ब हैं! ”

“ किनके ? ”

जमीन-जायदाद, और तिजारत आदिके देखते हुए उनकी सम्पत्ति और सम्पदाको यदि बहुत ज्यादा या जरूरतसे ज्यादा कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी। उनकी विशाल अट्टालिकाके सामनेवाले रास्तेसे जब यह जुलूस लाल पताकाओंपर लिखित नानाप्रकारके वाक्यों और किसान-मजूरोंके जोर-जोरसे जयजयकार-वहन करता हुआ गुजर रहा था तब उस मकानकी दूसरी मंजिलपर बरामदेमें खड़ा हुआ एक दीर्घाकृति बलिष्ठ युवक नीचेके सम्पूर्ण दृश्यको चुपचाप देख रहा था। अकस्मात् उसपर दृष्टि पड़ते ही विक्षुब्ध जनताका उफनता हुआ कोलाहल एक ही क्षणमें बुझ-सा गया। आगे-आगे चलनेवाले नेतृस्थानीय दो-तीन व्यक्तियोंने इधर-उधर देखकर बहुतसे लोगोंकी दृष्टिका चौंककर अनुसरण करके ऊपरकी ओर मुँह उठाते ही देखा कि वह युवक खम्भोंकी आड़में धीरे धीरे गायब हो गया। उन लोगोंने पूछा—" कौन है ? "

बहुतोंने दबे हुए गलेसे कहा—" विप्रदास बाबू। "

" कौन विप्रदास ? गाँवका जमींदार ? "

किसी एक जनेने कहा—" हाँ। "

नेता शहरके ठहरे, किसीकी ऐसी-कोई परवाह नहीं करते, उपेक्षाके साथ बोले—" ओः—यह बात है! " और दूसरे ही क्षण सिरके ऊपर हाथ घुमाते हुए बुलन्द आवाजसे एक साथ चीत्कार करते हुए बोले—" बोलो भारत-माताकी जय ! बोलो किसान-मजदूरोंकी जय ! बोलो बन्दे मातरम् ! "

किन्तु कोई खास नतीजा नहीं निकला। अधिकांश लोग चुप रहे या मन-ही-मन बोले, और जिन दो-चार जनोंने आवाज निकाली उनके भी क्षीण कण्ठ ज्यादा ऊँचे न जा सके—उनकी आवाज विप्रदासके बरामदेको लाँघ कर उनके कानोंतक पहुँची या नहीं, समझमें नहीं आया। नेताओंने अपनेको अपमानित अनुभव किया, वे झुँझलाकर बोले—" गाँवका एक मामूली जमींदार, उससे इतना डर! ये ही तो हमारे शत्रु हैं और हमारे शरीरका खून रात-दिन चूसा करते हैं। हमारी असली लड़ाई तो इन्हींके खिलाफ है। ये ही तो—"

प्रदीप्त वाग्मितामें सहसा बाधा आ पड़ी। बहुतसे पैनाये हुए बाण अब भी उनके तरकशोंमें संचित थे, किन्तु उनके प्रयोग करनेमें विघ्न आ गया। भीड़मेंसे एक आदमीने आहिस्तेसे कहा—" उनके भाई सा'ब हैं! "

" किनके ? "

किया। वह स्वभावतः शान्त प्रकृतिका आदमी है, और अपने बड़े भाईका अत्यन्त सम्मान करनेके कारण शायद और किसी प्रसंगमें वह चुप ही रहता; किन्तु जिस बातको लेकर उन्होंने ताना मारा उसका सहना कठिन था। फिर भी मृदुकंठसे ही उसने कहा—"भाई साहब, बनावटी दाँतोंसे जितना हो सकता है उससे ज्यादा नहीं होनेका, यह बात हम लोग जानते हैं; सिर्फ आप ही लोग नहीं जानते कि संसारमें सचमुचके दाँतवाले लोग भी हैं, काट खानेके दिन आनेपर उनकी कमी नहीं रहती।"

ऐसे जवाबकी आशा नहीं थी। विप्रदास आश्चर्यसे उसके मुँहकी ओर देखकर बोले—"अच्छा?"

द्विजदास प्रत्युत्तरमें कोई एक बात कहने जा रहा था, किन्तु डरकर रुक गया। डर विप्रदासका नहीं था, अकस्मात् दरवाजेके बाहर माका कंठस्वर सुनाई दिया—"तुम लोग दरवाजेपर परदा क्यों लटकाये रखते हो बताओ तो? छुआ-छुई किये बिना घरमें घुसना मुश्किल है। घर-गिरिस्ती विलायती फैशनसे भर गई है।"

द्विजदासने व्यस्त होकर परदा हटा दिया, और विप्रदास कुरसी छोड़कर उठ खड़े हुए। एक प्रौढ़ विधवा महिला भीतर घुस आई। उमर चालीससे ऊपर पहुँच चुकी है, किन्तु रूपकी सीमा नहीं। जरा कुछ कृश हैं, मुँहपर वैधव्यकी कठोरताकी छाप है, यह बात जरा लक्ष्य देते ही समझमें आ जाती है। छोटे लड़केकी ओर पूरी तरह पीठ करके बड़े लड़केसे बोलीं—"क्योंरे विप्र, सुना है कि एकादशीके बारेमें इस महीनेमें पतरामें गड़बड़ी है? ऐसा तो कभी नहीं होता?"

विप्रदासने कहा—"होना तो नहीं चाहिए मा।"

"तू स्मृतिरत्न पंडितजीको एक बार बुलवा तो सही। उनका क्या मत है सुन लूँ।"

विप्रदास जरा-सा हँसकर बोले—"सो बुलवाये लेता हूँ। पर उनके मतामतसे क्या होगा मा, तुम्हारे कानों तक एकबार जब कि बात पहुँच चुकी है, तब मैं जानता हूँ कि उन दोनों दिनोंमेंसे एक भी दिन तुम जल तक न छुओगी।"

मा हँस दी, बोलीं—"झूठमूठ उपासे मरनेका क्या किसीको शौक है रे? पर उपाय क्या है? इसके करनेसे पुण्य नहीं, न करनेसे अनन्त नरक है। क्यों

किया। वह स्वभावतः शान्त प्रकृतिका आदमी है, और अपने बड़े भाईका अत्यन्त सम्मान करनेके कारण शायद और किसी प्रसंगमें वह चुप ही रहता; किन्तु जिस बातको लेकर उन्होंने ताना मारा उसका सहना कठिन था। फिर भी मृदुकंठसे ही उसने कहा—"भाई साहब, बनावटी दाँतोंसे जितना हो सकता है उससे ज्यादा नहीं होनेका, यह बात हम लोग जानते हैं; सिर्फ आप ही लोग नहीं जानते कि संसारमें सचमुचके दाँतवाले लोग भी हैं, काट खानेके दिन आनेपर उनकी कमी नहीं रहती।"

ऐसे जवाबकी आशा नहीं थी। विप्रदास आश्चर्यसे उसके मुँहकी ओर देखकर बोले—"अच्छा?"

द्विजदास प्रत्युत्तरमें कोई एक बात कहने जा रहा था, किन्तु डरकर रुक गया। डर विप्रदासका नहीं था, अकस्मात् दरवाजेके बाहर माका कंठस्वर सुनाई दिया—"तुम लोग दरवाजेपर परदा क्यों लटकाये रखते हो बताओ तो? छुआ-छुई किये बिना घरमें घुसना मुश्किल है। घर-गिरिस्ती विलायती फैशनसे भर गई है।"

द्विजदासने व्यस्त होकर परदा हटा दिया, और विप्रदास कुरसी छोड़कर उठ खड़े हुए। एक प्रौढ़ विधवा महिला भीतर घुस आई। उमर चालीससे ऊपर पहुँच चुकी है, किन्तु रूपकी सीमा नहीं। जरा कुछ कृश हैं, मुँहपर वैधव्यकी कठोरताकी छाप है, यह बात जरा लक्ष्य देते ही समझमें आ जाती है। छोटे लड़केकी ओर पूरी तरह पीठ करके बड़े लड़केसे बोलीं—"क्योंरे विप्र, सुना है कि एकादशीके बारेमें इस महीनेमें पत्रामें गड़बड़ी है? ऐसा तो कभी नहीं होता?"

विप्रदासने कहा—"होना तो नहीं चाहिए मा।"

"तू स्मृतिरत्न पंडितजीको एक बार बुलवा तो सही। उनका क्या मत है सुन लूँ।"

विप्रदास जरा-सा हँसकर बोले—"सो बुलवाये लेता हूँ। पर उनके मतामतसे क्या होगा मा, तुम्हारे कानों तक एकबार जब कि बात पहुँच चुकी है, तब मैं जानता हूँ कि उन दोनों दिनोंमेंसे एक भी दिन तुम जल तक न छुओगी।"

मा हँस दी, बोलीं—"झूठमूठ उपासे मरनेका क्या किसीको शौक है रे? पर उपाय क्या है? इसके करनेसे पुण्य नहीं, न करनेसे अनन्त नरक है। क्यों

विप्रदासने आश्चर्यके साथ कहा—"यह कैसी बात है मा, पढ़ाईका खर्च बंद कर दूँ ? पढ़ेगा नहीं ?"

माने कहा—"ज़रूरत क्या है ? मेरे ससुरके स्कूलके छात्रोंने जब एक साथ दल बाँधकर आके कहा कि विदेशी शिक्षासे देशका सर्वनाश हो रहा है, तब उन्हें तू मारने दौड़ा था। और अब जब कि तेरा अपना छोटा भाई ठीक वही बात कहता डोलता है, तो तू उसका कोई प्रतिकार नहीं करेगा ? यह तेरा कैसा न्याय है ?"

विप्रदासने मुसकराते हुए कहा—"उसमें एक कारण है मा। स्कूलके क्लासमें प्रमोशन न पानेपर भी वैसी शिकायत करना मुझसे नहीं सहा जाता, मगर द्विजूकी तरह एम्० ए० पास करके विलायती शिक्षाको कोई चाहे कितना ही कोसता फिरे, मुझे उसकी परवाह नहीं।"

माने कहा—"मगर यह ? हमारे ही रुपयोंसे हमारी ही रैयतको भड़काना ?"

द्विजदास अब तक चुप था, उसने एक भी बातका जबाब न दिया था। अबकी उसने जवाव दिया, बोला—"कलकी सभा-समितिके लिए तुम लोगोंकी इस्टेटका एक पैसा भी मैंने नहीं बिगाड़ा।"

माने कमरेमें घुसनेके बाद एक बार भी पीछे मुड़कर नहीं देखा था; और अब भी नहीं देखा। विप्रदाससे पूछने लगीं—"तो इस अभागेसे पूछ तो सही, रुपये आये कहाँसे ? रोजगार कर रहा है ?"

ठीक इसी समय परदेके बाहरसे चूड़ियोंकी टुन टुन आवाज हुई। विप्रदासने कान लगाके सुनकर कहा—"बाहरसे जवाब आ रहा है न। तुम्हारे घरकी बहू ही अगर रुपयेकी मदद दे, तो उसे कौन रोक सकता है बताओ भला ?"

माको याद आ गया। बोलीं—"हाँ, यही बात है। सतीका ही काम है यह। बड़े-आदमीकी लड़की बापकी जमींदारीसे सालाना छै-हजार रुपये पाती है, इसका तो मुझे खयाल ही नहीं था।" जरा देर स्थिर रहकर फिर कहने लगीं—"तेरी सगाई करने जब समधी साहब खुद यहाँ आये, तभी मैंने तेरे बापूजीसे कहा था कि राय घरानेकी लड़की घरमें लानेकी ज़रूरत नहीं। अनाथ राय उन्हींके खानदानका तो था जो विलायत जाकर मेम ब्याह लाया था। वे लोग क्या नहीं कर सकते ? उनके लिए दुनियामें असाध्य क्या है ?"

विप्रदास उसी तरह मुसकराता हुआ चुप रहा। वह जानता था कि सतीके भाग्यसे यह उलाहना कभी जानेका नहीं। उसके मायकेके खानदानका कोई

विप्रदासने आश्चर्यके साथ कहा—"यह कैसी बात है मा, पढ़ाईका खर्च बंद कर दूँ? पढ़ेगा नहीं?"

माने कहा—"जरूरत क्या है? मेरे ससुरके स्कूलके छात्रोंने जब एक साथ दल बाँधकर आके कहा कि विदेशी शिक्षासे देशका सर्वनाश हो रहा है, तब उन्हें तू मारने दौड़ा था। और अब जब कि तेरा अपना छोटा भाई ठीक वही बात कहता डोलता है, तो तू उसका कोई प्रतिकार नहीं करेगा? यह तेरा कैसा न्याय है?"

विप्रदासने मुसकराते हुए कहा—"उसमें एक कारण है मा। स्कूलके क्लासमें प्रमोशन न पानेपर भी वैसी शिकायत करना मुझसे नहीं सहा जाता, मगर द्विजूकी तरह एम्० ए० पास करके विलायती शिक्षाको कोई चाहे कितना ही कोसता फिरे, मुझे उसकी परवाह नहीं।"

माने कहा—"मगर यह? हमारे ही रुपयोंसे हमारी ही रैयतको भड़काना?"

द्विजदास अब तक चुप था, उसने एक भी बातका जवाब न दिया था। अबकी उसने जवाब दिया, बोला—"कलकी सभा-समितिके लिए तुम लोगोंकी इस्टेटका एक पैसा भी मैंने नहीं बिगाड़ा।"

माने कमरेमें घुसनेके बाद एक बार भी पीछे मुड़कर नहीं देखा था; और अब भी नहीं देखा। विप्रदाससे पूछने लगीं—"तो इस अभागेसे पूछ तो सही, रुपये आये कहाँसे? रोजगार कर रहा है?"

ठीक इसी समय परदेके बाहरसे चूड़ियोंकी टुन टुन आवाज हुई। विप्रदासने कान लगाके सुनकर कहा—"बाहरसे जवाब आ रहा है न। तुम्हारे घरकी बहू ही अगर रुपयेकी मदद दे, तो उसे कौन रोक सकता है बताओ भला?"

माको याद आ गया। बोलीं—"हाँ, यही बात है। सतीका ही काम है यह। बड़े-आदमीकी लड़की बापकी जमींदारीसे सालाना छै-हजार रुपये पाती है, इसका तो मुझे खयाल ही नहीं था।" जरा देर स्थिर रहकर फिर कहने लगीं—"तेरी सगाई करने जब समधी साहब खुद यहाँ आये, तभी मैंने तेरे बापूजीसे कहा था कि राय घरानेकी लड़की घरमें लानेकी ज़रूरत नहीं। अनाथ राय उन्हींके खानदानका तो था जो विलायत जाकर मेम व्याह लाया था। वे लोग क्या नहीं कर सकते? उनके लिए दुनियामें असाध्य क्या है?"

विप्रदास उसी तरह मुसकराता हुआ चुप रहा। वह जानता था कि सतीके भाग्यसे यह उलाहना कभी जानेका नहीं। उसके मायकेके खानदानका कोई

सिर्फ ग्यारह सालकी उमरमें सतीने वधूके रूपमें इस घरमें प्रवेश किया था, जिससे उसके लाड़-प्यारकी सीमा नहीं थी। सास हँसके कहतीं—"ऐसी बात है ? पर यह तो तुम्हारी बड़ी बेजा बात है बहूरानी, देवरको नाम लेके पुकारना।" सती कहती—"क्यों है, मैं जो उससे उमरमें बहुत बड़ी हूँ।"

"बहुत बड़ी ? कितनी बड़ी हो बेटी ?"

"मैं जनमी हूँ बैसाख महीनेमें, वो जनमा है भादोंमें।"

मा हँसकर कहतीं—"भादोंमें ही हुआ है न, मुझे ही याद नहीं था। अब अगर फिर कभी वह शिकायत करने आयेगा तो उसके कान ऐंठ दूँगी।"

अदालतमें हारकर द्विजू जब गुस्सा होकर चला जाता तब बहूको गोदके पास खींचकर सास स्नेहके साथ कहतीं—"अभी बच्चा है न, इसीसे नहीं समझता। 'लालाजी' कहनेसे बड़ा खुश होता है। कभी-कभी 'लालाजी' भी कह दिया करना, क्यों ठीक है बहूरानी ?"

सतीने राजी होकर गरदन हिलाकर जवाब दिया था—"अच्छा मा, कभी कभी लालाजी ही कहूँगी।"

उस दिन वह थी बालिका, आज है इतने बड़े घरकी गृहिणी। विधवा होनेके बादसे सास तो लगी रहती हैं अपने जप-तप और धर्म-ध्यानमें, फिर भी उनका उस दिनका उपदेश बादमें बहुत दिनों तक सतीके बहुत काममें आया है। जैसे आज।

पिछले परिच्छेदमें वर्णित घटनाको लगभग पंद्रह-सोलह दिन हो गये हैं। आज सवेरे ही सतीने देवरके पढ़नेके कमरेमें प्रवेश करते हुए पुकारा—"लालाजी—"

द्विजदासने हाथ उठाकर रोकते हुए कहा—"रहने दो भाभी, ज्यादा खुशामदकी ज़रूरत नहीं, मैं करूँगा।"

"क्या करोगे सुनूँ भी ?"

"तुम जो हुक्म दोगी, सो ही। मगर भाई-साहबकी यह बड़ी बेजा बात है।"

"बेजा कैसे हुई बताओ ?"

द्विजदास वैसे ही नाराजीके साथ बोला—"मैं जानता हूँ। अभी-अभी मैं भाई-साहबके कमरेके सामने होकर आ रहा हूँ। भीतर वे, मा और तुम तीनों मिलकर जो षड्यंत्र रच रहे थे, सो मेरे कानों तक पहुँच गया है। उनमें साहस नहीं कि मुझसे कहें, इसीसे तुम्हें पकड़ा है काम हासिल करनेके लिए। कितनी बड़ी बेजा बात है बताओ तो !"

सिर्फ ग्यारह सालकी उमरमें सतीने वधूके रूपमें इस घरमें प्रवेश किया था, जिससे उसके लाड़-प्यारकी सीमा नहीं थी। सास हँसके कहतीं—"ऐसी बात है? पर यह तो तुम्हारी बड़ी बेजा बात है बहूरानी, देवरको नाम लेके पुकारना।" सती कहती—"क्यों है, मैं जो उससे उमरमें बहुत बड़ी हूँ।"

"बहुत बड़ी? कितनी बड़ी हो बेटी?"

"मैं जनमी हूँ बैसाख महीनेमें, वो जनमा है भादोंमें।"

मा हँसकर कहतीं—"भादोंमें ही हुआ है न, मुझे ही याद नहीं था। अब अगर फिर कभी वह शिकायत करने आयेगा तो उसके कान ऐंठ दूँगी।"

अदालतमें हारकर द्विजू जब गुस्सा होकर चला जाता तब बहूको गोदके पास खींचकर सास स्नेहके साथ कहतीं—"अभी बच्चा है न, इसीसे नहीं समझता। 'लालाजी' कहनेसे बड़ा खुश होता है। कभी-कभी 'लालाजी' भी कह दिया करना, क्यों ठीक है बहूरानी?"

सतीने राजी होकर गरदन हिलाकर जवाब दिया था—"अच्छा मा, कभी कभी लालाजी ही कहूँगी।"

उस दिन वह थी बालिका, आज है इतने बड़े घरकी गृहिणी। विधवा होनेके बादसे सास तो लगी रहती हैं अपने जप-तप और धर्म-ध्यानमें, फिर भी उनका उस दिनका उपदेश बादमें बहुत दिनों तक सतीके बहुत काममें आया है। जैसे आज।

पिछले परिच्छेदमें वर्णित घटनाको लगभग पंद्रह-सोलह दिन हो गये हैं। आज सवेरे ही सतीने देवरके पढ़नेके कमरेमें प्रवेश करते हुए पुकारा—"लालाजी—"

द्विजदासने हाथ उठाकर रोकते हुए कहा—"रहने दो भाभी, ज्यादा खुशामदकी ज़रूरत नहीं, मैं करूँगा।"

"क्या करोगे सुनूँ भी?"

"तुम जो हुकम दोगी, सो ही। मगर भाई-साहबकी यह बड़ी बेजा बात है।"

"बेजा कैसे हुई बताओ?"

द्विजदास वैसे ही नाराजीके साथ बोला—"मैं जानता हूँ। अभी-अभी मैं भाई-साहबके कमरेके सामने होकर आ रहा हूँ। भीतर वे, मा और तुम तीनों मिलकर जो षड्यंत्र रच रहे थे, सो मेरे कानों तक पहुँच गया है। उनमें साहस नहीं कि मुझसे कहें, इसीसे तुम्हें पकड़ा है काम हासिल करनेके लिए। कितनी बड़ी बेजा बात है बताओ तो!"

साथ जाना पड़ा। और मजेकी बात यह कि माने उस दिन साफ-साफ ही कहा था कि मुझ-जैसे म्लेच्छाचारीके साथ वे वैकुण्ठ जानेको भी राजी नहीं। इसीको कहते हैं भाग्यका परिहास, क्यों भाभी?"

सतीने इस उलाहनेका जवाब नहीं दिया, चुप रही।

द्विजू कहने लगा—"ख़ैर, कुछ भी हो, तुम्हारा हुक्म न टालूँगा भाभी,—उन्हें निश्चिन्त रहनेको कह देना।"

सती हँस दी, बोली—"मुझे मेजके वे निश्चिन्त ही हैं। कमरेसे बाहर निकलते ही तुम्हारे भाई साहबकी बात मेरे कानोंमें पड़ी, वे जोरके साथ मासे कह रहे थे, अब वेधड़क यात्राकी तैयारियाँ करो मा, जिन्हें दौत्य-कार्यमें नियुक्त किया गया है उनके सामने भइयाजीका तर्क नहीं चलनेका। गरदन झुकाकर मंजूर कर लेगा, तुम देख लेना।"

सुनकर द्विजदास मारे क्रोधके क्षणभर सन्न रहकर बोला—"नामंजूर नहीं कर सकता, यह जानकर ही अगर उन लोगोंने यह षड्यंत्र रचा हो कि स्त्रियोंके मनमें बेमतलबकी उठनेवाली किसी लहरको चरितार्थ करनेका वाहन मुझे ही बनना पड़ेगा, तो मेरी तरफसे तुम दादा-भाईको यह बात कह देना भाभी, कि उन्हें शरम आनी चाहिए।"

सतीने कहा—"कहनेसे कुछ लाभ नहीं होगा लालाजी, जमींदार होकर जो प्रजाका खून चूसा करते हैं उनकी यही नीति है। अपना काम हासिल करनेमें ये लोग किसी तरहकी हया-शरम महसूस नहीं करते। सम्पत्तिके आधे मालिक होते हुए भी जब तुम्हें इनकी जमींदारीसे रुपये लेनेमें संकोच मालूम होता है तब, एक तरफ जैसे मुझे दुःख होता है, वैसे ही दूसरी ओर मन खुशीसे भर उठता है। तुम्हारा नाम लेकर माको मैंने भरोसा दे दिया है कि उनके जानेमें विघ्न नहीं होगा, तुम साथ जाओगे। तीर्थसे अच्छी तरह वापस लौट आओ लालाजी, चाहे तुम्हारा कितनाही नुकसान हो मैं सबका सब पूरा कर दूँगी।"

द्विजदासने चुपकेसे चौकीपरसे उठकर भाभीके पाँवकी धूल माथेसे लगाई और फिर वापस अपनी जगहपर जा बैठा।

सतीने कहा—"अभी तक तो पराई उम्मेदवारी ही करती रही। अब मेरा अपना अनुरोध भी एक है?"

द्विजदासने हँसकर कहा—"तुम्हारा अपना? यह लेकिन मुझसे नहीं हो सकेगा भाभी।"

साथ जाना पड़ा। और मजेकी बात यह कि माने उस दिन साफ-साफ ही कहा था कि मुझ-जैसे म्लेच्छाचारीके साथ वे वैकुण्ठ जानेको भी राजी नहीं। इसीको कहते हैं भाग्यका परिहास, क्यों भाभी?"

सतीने इस उलाहनेका जवाब नहीं दिया, चुप रही।

द्विजू कहने लगा—"ख़ैर, कुछ भी हो, तुम्हारा हुक्म न टालूँगा भाभी,—उन्हें निश्चिन्त रहनेको कह देना।"

सती हँस दी, बोली—"मुझे भेजके वे निश्चिन्त ही हैं। कमरेसे बाहर निकलते ही तुम्हारे भाई साहबकी बात मेरे कानोंमें पड़ी, वे जोरके साथ मासे कह रहे थे, अब वेधड़क यात्राकी तैयारियाँ करो मा, जिन्हें दौत्य-कार्यमें नियुक्त किया गया है उनके सामने भइयाजीका तर्क नहीं चलनेका। गरदन झुकाकर मंजूर कर लेगा, तुम देख लेना।"

सुनकर द्विजदास मारे क्रोधके क्षणभर सन्न रहकर बोला—"नामंजूर नहीं कर सकता, यह जानकर ही अगर उन लोगोंने यह षड्यंत्र रचा हो कि स्त्रियोंके मनमें बेमतलबकी उठनेवाली किसी लहरको चरितार्थ करनेका वाहन मुझे ही बनना पड़ेगा, तो मेरी तरफसे तुम दादा-भाईको यह बात कह देना भाभी, कि उन्हें शरम आनी चाहिए।"

सतीने कहा—"कहनेसे कुछ लाभ नहीं होगा लालाजी, जमींदार होकर जो प्रजाका खून चूसा करते हैं उनकी यही नीति है। अपना काम हासिल करनेमें ये लोग किसी तरहकी हया-शरम महसूस नहीं करते। सम्पत्तिके आधे मालिक होते हुए भी जब तुम्हें इनकी जमींदारीसे रुपये लेनेमें संकोच मालूम होता है तब, एक तरफ जैसे मुझे दुःख होता है, वैसे ही दूसरी ओर मन खुशीसे भर उठता है। तुम्हारा नाम लेकर माको मैंने भरोसा दे दिया है कि उनके जानेमें विघ्न नहीं होगा, तुम साथ जाओगे। तीर्थसे अच्छी तरह वापस लौट आओ लालाजी, चाहे तुम्हारा कितनाही नुकसान हो मैं सबका सब पूरा कर दूँगी।"

द्विजदासने चुपकेसे चौकीपरसे उठकर भाभीके पाँवकी धूल माथेसे लगाई और फिर वापस अपनी जगहपर जा बैठा।

सतीने कहा—"अभी तक तो पराई उम्मेदवारी ही करती रही। अब मेरा अपना अनुरोध भी एक है?"

द्विजदासने हँसकर कहा—"तुम्हारा अपना? यह लेकिन मुझसे नहीं हो सकेगा भाभी।"

इन्कार न करेंगी। इसके सिवा वे खुद जब यहाँ नहीं रहेंगी तब दो-तीन महीने वह आसानीसे मेरे पास रह सकेगी।"

द्विजदासने मन-ही-मन समझ लिया कि सासकी आज्ञा न मिलनेपर भी इस मौकेपर वह अपनी प्रवासिनी बहनको एक बार पास बुलाना चाहती है। उसने पूछा—"तुम्हारे चाचा क्या ब्राह्मसमाजी हैं?"

सतीने कहा—"नहीं। लेकिन हिन्दू-समाज भी उन्हें नहीं अपनाता। वे खुद भी शायद नहीं जानते कि उनका कहाँ स्थान है। इसी तरह दिन कट रहे हैं।

ऐसी अवस्था बहुतोंकी है। द्विजदास मन-ही-मन खिन्न होकर बोला—"जानेमें मुझे कोई ऐतराज नहीं भाभी; लेकिन मेरा कहना है कि माके रहते तुम उसे यहाँ मत बुलाओ। माको तो जानती ही हो, कुछ नहीं तो खाने-पीनेकी छुआछूतको लेकर ही ऐसा बखेड़ा खड़ा कर देंगी कि बहनको लेकर तुम्हें इतनी शर्मिन्दा होना पड़ेगा कि जिसकी हद नहीं। इससे तो बल्कि हम लोगोंके चले जानेपर बुलानेका इन्तजाम करना—सब तरफसे अच्छा रहेगा।"

यह अच्छी सलाह है, इस बातको सती खुद भी समझती है; मगर उसने जब कि खुद ही चिट्ठी लिखकर आनेकी प्रार्थना जताई है, तब वह किस तरह उसे किसी अनिश्चित भविष्यकी सम्भावनामें मनाईकी चिट्ठी लिख दे, यह उसकी समझमें न आया। इसका संकोच और दुःख क्या कुछ कम है? उसने कहा—"अपनी बहन होनेकी वजहसे नहीं कह रही लालाजी, बल्कि कलकत्तेमें उस बार महीने-भरके लिए उसे बहुत ही नजदीक पाकर मैंने निश्चितरूपसे समझ लिया है कि रूप और गुणमें वैसी लड़की संसारमें दुर्लभ है। बाहरसे उन लोगोंका आचार-व्योहार चाहे जैसा भी दीखे, पर, मा अगर उसे दो दिन भी अपने पास देख सकें तो म्लेच्छ लड़कियोंके बारेमें उनकी धारणा ही बदल जायगी। फिर कभी उसपर अश्रद्धा नहीं कर सकेंगी।"

द्विजदासने कहा—"लेकिन ये दो ही दिन माको दिखाना तो कठिन है भाभी। वे देखना ही नहीं चाहेंगी। यह भी सच है।"

सतीने कहा—"पर उसका रूप भी तो देखनेमें आयेगा? उसे तो मा आँख मींचकर अस्वीकार नहीं कर सकेंगी? वह भी तो एक परिचय है।"

द्विजदास चुप रहा। सती कहने लगी—"मेरा यह निश्चित विश्वास है कि चन्दनाकी उपेक्षा या अवहेलना दुनियामें कोई नहीं कर सकता। मा भी नहीं।"

इन्कार न करेंगी। इसके सिवा वे खुद जब यहाँ नहीं रहेंगी तब दो-तीन महीने वह आसानीसे मेरे पास रह सकेगी।"

द्विजदासने मन-ही-मन समझ लिया कि सासकी आज्ञा न मिलनेपर भी इस मौकेपर वह अपनी प्रवासिनी बहनको एक बार पास बुलाना चाहती है। उसने पूछा—"तुम्हारे चाचा क्या ब्राह्मसमाजी हैं?"

सतीने कहा—"नहीं। लेकिन हिन्दू-समाज भी उन्हें नहीं अपनाता। वे खुद भी शायद नहीं जानते कि उनका कहाँ स्थान है। इसी तरह दिन कट रहे हैं।

ऐसी अवस्था बहुतोंकी है। द्विजदास मन-ही-मन खिन्न होकर बोला—"जानेमें मुझे कोई ऐतराज नहीं भाभी; लेकिन मेरा कहना है कि माके रहते तुम उसे यहाँ मत बुलाओ। माको तो जानती ही हो, कुछ नहीं तो खाने-पीनेकी छुआछूतको लेकर ही ऐसा बखेड़ा खड़ा कर देंगी कि बहनको लेकर तुम्हें इतनी शर्मिन्दा होना पड़ेगा कि जिसकी हद नहीं। इससे तो बल्कि हम लोगोंके चले जानेपर बुलानेका इन्तजाम करना—सब तरफसे अच्छा रहेगा।"

यह अच्छी सलाह है, इस बातको सती खुद भी समझती है; मगर उसने जब कि खुद ही चिट्ठी लिखकर आनेकी प्रार्थना जताई है, तब वह किस तरह उसे किसी अनिश्चित भविष्यकी सम्भावनामें मनाईकी चिट्ठी लिख दे, यह उसकी समझमें न आया। इसका संकोच और दुःख क्या कुछ कम है? उसने कहा—"अपनी बहन होनेकी वजहसे नहीं कह रही लालाजी, बल्कि कलकत्तेमें उस बार महीने-भरके लिए उसे बहुत ही नजदीक पाकर मैंने निश्चितरूपसे समझ लिया है कि रूप और गुणमें वैसी लड़की संसारमें दुर्लभ है। बाहरसे उन लोगोंका आचार-व्योहार चाहे जैसा भी दीखे, पर, मा अगर उसे दो दिन भी अपने पास देख सकें तो म्लेच्छ लड़कियोंके बारेमें उनकी धारणा ही बदल जायगी। फिर कभी उसपर अश्रद्धा नहीं कर सकेंगी।"

द्विजदासने कहा—"लेकिन ये दो ही दिन माको दिखाना तो कठिन हैं भाभी। वे देखना ही नहीं चाहेंगी। यह भी सच है।"

सतीने कहा—"पर उसका रूप भी तो देखनेमें आयेगा? उसे तो मा आँख मींचकर अस्वीकार नहीं कर सकेंगी? वह भी तो एक परिचय है।"

द्विजदास चुप रहा। सती कहने लगी—"मेरा यह निश्चित विश्वास है कि चन्दनाकी उपेक्षा या अवहेलना दुनियामें कोई नहीं कर सकता। मा भी नहीं।"

सतीने पीछेकी ओर देखकर कहा—" ये मेरे देवर हैं—द्विजदास। "

द्विजदासने दूरसे नमस्कार किया। बन्दना अपनी जीजीको प्रणाम करके हँसती हुई बोली—" ओह, ये ही हैं वे ? जिनके मारे शायद जमींदारीका टिकना मुश्किल हो गया है। मुझे चिट्ठीमें लिखा था न ? वंशसे निराले, गोत्रसे निराले भयानक स्वदेशी ? "

" ऐसी वात तुझे कब लिखी थी ? "

" अभी तो, उस दिन। इतनेहीमें भूल गई ? "

सतीने गरदन हिलाकर कहा—" नहीं, यह नहीं लिखा,—तुझे याद नहीं। "

द्विजदास अब तक, न जाने कैसे एक प्रकारके संकोचके मारे जड़वत् हो रहा था। इस विषयमें वह कुछ भी तय नहीं कर पा रहा था कि एक अनात्मीय और अपरिचित युवती महिलाके सामने उसे क्या करना चाहिए। इसके पहले कभी ऐसा मौका भी नहीं आया, ज़रूरत भी नहीं पड़ी,—परन्तु इस नवागत तरुणीकी आश्चर्यजनक स्वच्छन्दतासे मानो उसने आज एक नई शिक्षा प्राप्त की। उसकी अकारण और अशोभन जड़ता क्षण-भरमें दूर हो गई; और उसने एक स्वच्छ आनन्दका स्वाद लिया। इस वातको वह अपनी बुद्धिके द्वारा बहुत समयसे स्वीकार करता आया है कि स्त्रियोंको भी शिक्षा और स्वाधीनताकी अवश्यकता है; और मा या भाई-साहबसे बहस छिड़ जानेपर वह यही युक्ति देता आया है कि स्त्री होनेपर भी वे हैं तो मनुष्य ही, लिहाज़ा शिक्षा और स्वाधीनतापर उनका हक़ है। मूर्ख रखकर उन्हें घरमें बंद रखना अन्याय है। किन्तु आज इस अतिथि युवतीके आकस्मिक परिचयसे उसने लहमे-भरमें पहले-पहल यह अनुभव किया कि उन सब मामूली हक़-हुक़ूक़ोंकी युक्तियोंसे भी बहुत बड़ी बात यह है कि पुरुषके चरम और परम प्रयोजनके लिए ही स्त्रीको शिक्षा और स्वाधीनताकी आवश्यकता है। उसे वंचित रखकर पुरुष अपनेको कितना वंचित कर रहा है, इस सत्यको उसने इतनी स्पष्टतासे इसके पहले कभी नहीं देखा। उस युवतीको लक्ष्य करके उसने मुसकराते हुए कहा—" आपकी बात ही ठीक है, भाभी भूल गई हैं। पर इस विषयको लेकर बहस करनेमें कुछ फायदा नहीं। "—इतना कहकर उसने बनावटी गम्भीरतासे चेहरा गम्भीर करके भाभीसे कहा, " भाभी, तुम्हारे जोरसे ही तो मेरा सारा जोर है, और तुम्हारी चिट्ठीमें ही ऐसी बातें ? अच्छी बात है, मुझे तुम लोग त्याग दो, और मैं भी अपना सारा अधिकार त्यागे देता हूँ। तुम

सतीने पीछेकी ओर देखकर कहा—"ये मेरे देवर हैं—द्विजदास।"

द्विजदासने दूरसे नमस्कार किया। बन्दना अपनी जीजीको प्रणाम करके हँसती हुई बोली—"ओह, ये ही हैं वे? जिनके मारे शायद जमींदारीका टिकना मुश्किल हो गया है। मुझे चिट्ठीमें लिखा था न? वंशसे निराले, गोत्रसे निराले भयानक स्वदेशी?"

"ऐसी बात तुझे कब लिखी थी?"

"अभी तो, उस दिन। इतनेहीमें भूल गई?"

सतीने गरदन हिलाकर कहा—"नहीं, यह नहीं लिखा,—तुझे याद नहीं।"

द्विजदास अब तक, न जाने कैसे एक प्रकारके संकोचके मारे जड़वत् हो रहा था। इस विषयमें वह कुछ भी तय नहीं कर पा रहा था कि एक अनात्मीय और अपरिचित युवती महिलाके सामने उसे क्या करना चाहिए। इसके पहले कभी ऐसा मौका भी नहीं आया, ज़रूरत भी नहीं पड़ी,—परन्तु इस नवागत तरुणीकी आश्चर्यजनक स्वच्छन्दतासे मानो उसने आज एक नई शिक्षा प्राप्त की। उसकी अकारण और अशोभन जड़ता क्षण-भरमें दूर हो गई; और उसने एक स्वच्छ आनन्दका स्वाद लिया। इस बातको वह अपनी बुद्धिके द्वारा बहुत समयसे स्वीकार करता आया है कि स्त्रियोंको भी शिक्षा और स्वाधीनताकी अवश्यकता है; और मा या भाई-साहबसे बहस छिड़ जानेपर वह यही युक्ति देता आया है कि स्त्री होनेपर भी वे हैं तो मनुष्य ही, लिहाजा शिक्षा और स्वाधीनतापर उनका हक़ है। मूर्ख रखकर उन्हें घरमें बंद रखना अन्याय है। किन्तु आज इस अतिथि युवतीके आकस्मिक परिचयसे उसने लहमे-भरमें पहले-पहल यह अनुभव किया कि उन सब मामूली हक़-हुकूकोंकी युक्तियोंसे भी बहुत बड़ी बात यह है कि पुरुषके चरम और परम प्रयोजनके लिए ही स्त्रीको शिक्षा और स्वाधीनताकी आवश्यकता है। उसे वंचित रखकर पुरुष अपनेको कितना वंचित कर रहा है, इस सत्यको उसने इतनी स्पष्टतासे इसके पहले कभी नहीं देखा। उस युवतीको लक्ष्य करके उसने मुसकराते हुए कहा—"आपकी बात ही ठीक है, भाभी भूल गई हैं। पर इस विषयको लेकर बहस करनेमें कुछ फ़ायदा नहीं।"—इतना कहकर उसने बनावटी गम्भीरतासे चेहरा गम्भीर करके भाभीसे कहा, "भाभी, तुम्हारे जोरसे ही तो मेरा सारा जोर है, और तुम्हारी चिट्ठीमें ही ऐसी बातें? अच्छी बात है, मुझे तुम लोग त्याग दो, और मैं भी अपना सारा अधिकार त्यागे देता हूँ। तुम

बन्दनाने पूछा—"जीजी, तुम्हारी सासुजी भी तो नहीं दीखतीं ? हैं तो घर ही में ?"

सतीने कहा—"अभी तो हैं, पर जल्दी ही कैलास-मानस-सरोवरकी तीर्थ-यात्राको जानेवाली हैं। सवेरेका वक्त तो सारा उनका पूजा-आह्निकमें ही बीत जाता है; अब, थोड़ी ही देर बाद उन्हें देख सकोगी।"

बन्दनाने पूछा—"वे ज्यादातर धर्म-कर्ममें ही लगी रहती हैं न ?"

सतीने कहा—"हाँ।"

"विधवा होनेके बाद, सुना है, वे घर-संसारका कुछ भी नहीं देखतीं,—सच है न ?"

"सच ही तो है। सब मुझे ही सम्हालना पड़ता है।"

बन्दनाने उत्सुक होकर पूछा—"वे तुम्हारी सौतेली सासु हैं न जीजी ?"

सती हँसके बोली—"आँखोंसे तो नहीं देखा बहन, लोग शायद झूठ कहते हैं।"

द्विजदास जवाबके तौरपर बोल उठा—"झूठ ही कहते हैं। यदि सौतेली-सासुके मानी भाईसाहबकी सौतेली-मा हैं, तो झूठ बात है। सौतेली-मा ज़रूर हैं, पर भाई साहबकी नहीं, मेरी। ख़ैर जाने दो, नहाने-निबटनेके बाद ये बातें होंगी,—अब ऊपर चलिए। अच्छा, मैं देखता हूँ जाकर भाभी, देर मत करो, इन्हें लेकर जल्दी आओ।"—इतना कहकर वह तैयारियोंकी देखभाल करने जा रहा था, इतनेमें माको देखकर ठिठकके खड़ा हो गया।

बहुत सम्भव है कि दयामयी खबर पाकर पूजाके बीचमेंसे ही उठके चली आई हों। उमर ज्यादा न होनेसे वे वैधव्यके बाद भी साधारणतः बाहरके मर-दोंके सामने निकलती न थीं, परदे या ओटमें रहकर ही बात करती थीं, मगर आज एकबारगी कमरेके भीतर आ खड़ी हुईं। माथेका पल्ला ललाट तक खिंचा हुआ था, किन्तु चेहरा सारका सारा दीख रहा था।

"ये मेरे मझले काकाजी हैं मा। और यह मेरी बहन बन्दना।"—इतना कहकर सतीने पास आकर सहसा सासुके पाँव ढोक दी। इस तरह बेमतलब पाँव ढोक देनेकी न तो प्रथा ही है और न कोई देता ही है। दयामयीको मन-ही-कुछ अचम्भा हुआ, किन्तु जैसे ही वह उठके खड़ी हुई वैसे ही दयामयीने स्नेहके साथ उसकी ठोड़ी छूकर अपनी उँगलियाँ चूमकर* आशीर्वाद दिया।

---

* बंगालमें स्त्रियाँ अपनेसे छोटोंको इसी तरह आशीर्वाद दिया करती हैं।

बन्दनाने पूछा—"जीजी, तुम्हारी सासुजी भी तो नहीं दीखतीं ? हैं तो घर ही में ?"

सतीने कहा—"अभी तो हैं, पर जल्दी ही कैलास-मानस-सरोवरकी तीर्थ-यात्राको जानेवाली हैं। सबेरेका वक्त तो सारा उनका पूजा-आह्निकमें ही बीत जाता है; अब, थोड़ी ही देर बाद उन्हें देख सकोगी।"

बन्दनाने पूछा—"वे ज्यादातर धर्म-कर्ममें ही लगी रहती हैं न ?"

सतीने कहा—"हाँ।"

"विधवा होनेके बाद, सुना है, वे घर-संसारका कुछ भी नहीं देखतीं,—सच है न ?"

"सच ही तो है। सब मुझे ही सम्हालना पड़ता है।"

बन्दनाने उत्सुक होकर पूछा—"वे तुम्हारी सौतेली सासु हैं न जीजी ?"

सती हँसके बोली—"आँखोंसे तो नहीं देखा बहन, लोग शायद झूठ कहते हैं।"

द्विजदास जवाबके तौरपर बोल उठा—"झूठ ही कहते हैं। यदि सौतेली-सासुके मानी भाईसाहबकी सौतेली-मा हैं, तो झूठ बात है। सौतेली-मा ज़रूर हैं, पर भाई साहबकी नहीं, मेरी। ख़ैर जाने दो, नहाने-निबटनेके बाद ये बातें होंगी,—अब ऊपर चलिए। अच्छा, मैं देखता हूँ जाकर भाभी, देर मत करो, इन्हें लेकर जल्दी आओ।"—इतना कहकर वह तैयारियोंकी देखभाल करने जा रहा था, इतनेमें माको देखकर ठिठकके खड़ा हो गया।

बहुत सम्भव है कि दयामयी खबर पाकर पूजाके बीचमेंसे ही उठके चली आई हों। उमर ज्यादा न होनेसे वे वैधव्यके बाद भी साधारणतः बाहरके मरदोंके सामने निकलती न थीं, परदे या ओटमें रहकर ही बात करती थीं, मगर आज एकबारगी कमरेके भीतर आ खड़ी हुईं। माथेका पल्ला ललाट तक खिंचा हुआ था, किन्तु चेहरा साराका सारा दीख रहा था।

"ये मेरे मझले काकाजी हैं मा। और यह मेरी बहन बन्दना।"—इतना कहकर सतीने पास आकर सहसा सासुके पाँव ढोक दी। इस तरह बेमतलब पाँव ढोक देनेकी न तो प्रथा ही है और न कोई देता ही है। दयामयीको मन-ही-कुछ अचम्भा हुआ, किन्तु जैसे ही वह उठके खड़ी हुई वैसे ही दयामयीने स्नेहके साथ उसकी ठोड़ी छूकर अपनी उँगलियाँ चूमकर* आशीर्वाद दिया।

---

* बंगालमें स्त्रियाँ अपनेसे छोटोंको इसी तरह आशीर्वाद दिया करती हैं।

"कलकत्तेमें तुम्हें कितने दिन लगेंगे?"

"पाँच-सात दिन—या आठ दिन, इससे ज्यादा नहीं।"

"लेकिन उसके बाद फिर मुझे बम्बई कौन ले जायगा?"

"उसका इन्तजाम आसानीसे हो जायगा।"—इतना कहकर उन्होंने जरा-कुछ सोचा और फिर कहा—"अच्छी बात है, तुम्हारी तबीयत हो तो तुम यहीं बनी रहो सतीके पास, लौटते वक्त मैं तुम्हें साथ लेता जाऊँगा,—क्यों?"

बन्दना कुछ देर चुप रहकर बोली—"अच्छा जीजीसे पूछ देखूँ।"

द्विजदासने कहा—"भाभी रसोईघरमें गई हैं। शायद उन्हें देर लगेगी।" फिर हाथका बण्डल दिखाता हुआ बोला—"आपको क्या दूँ?"

बन्दनाने जवाब दिया—"अखबार? अखबार मैं नहीं पढ़ती।"

"अखबार नहीं पढ़तीं?"

"नहीं। उसमें मैं धीरज खो बैठती हूँ। शामको बापूजीके मुँहसे बातें सुन लिया करती हूँ, इसीसे मेरी भूख मिट जाती है।"

"आश्चर्य है। मैंने सोचा था आप बहुत ज्यादा पढ़ती होंगी।"

बन्दनाने कहा—"मेरे सम्बन्धमें बगैर कुछ भी जाने ऐसा क्यों सोचते हैं? बड़ा बेइन्साफ करते हैं।"

द्विजदास शरमिन्दा-सा होने लगा तो बन्दना हँसके बोली, "आप लोगोंमेंसे किसने कितना देशोद्धार किया और अँग्रेजोंने उसपर कितनी आँखें लाल कीं—इस विषयमें मुझे जरा भी कुतूहल नहीं। बापूजीको है। देखिए न, खबरोंके ठेठ तलेमें डूब गये हैं, बाह्यज्ञान रहा ही नहीं।"

साहबके कानोंमें शायद लड़कीका सिर्फ "बापूजी" शब्द पहुँच गया था, पर उन्हें आँख उठाकर देखनेका वक्त नहीं मिला, बोले—"जरा ठहर जा, बताता हूँ। ठीक यही जवाब मैं ढूँढ़ रहा था।"

लड़की मुसकराती हुई गरदन हिलाकर बोली—"तुम ढूँढ़-ढूँढ़कर दिन-भर पढ़ते रहो बापूजी, मुझे जरा भी जल्दी नहीं।"—फिर द्विजदासकी तरफ लक्ष्य करके बोली—"जीजीके मुँहसे सुना था कि आपके बड़ी-भारी लाइब्रेरी है, वहीं चलिए, देखूँ आपने कितनी किताबें इकट्ठी की हैं।"

"चलिए।"

* * * *

"कलकत्तेमें तुम्हें कितने दिन लगेंगे ?"

"पाँच-सात दिन—या आठ दिन, इससे ज्यादा नहीं।"

"लेकिन उसके बाद फिर मुझे बम्बई कौन ले जायगा ?"

"उसका इन्तजाम आसानीसे हो जायगा।"—इतना कहकर उन्होंने जरा-कुछ सोचा और फिर कहा—"अच्छी बात है, तुम्हारी तबीयत हो तो तुम यहीं बनी रहो सतीके पास, लौटते वक्त मैं तुम्हें साथ लेता जाऊँगा,—क्यों ?"

बन्दना कुछ देर चुप रहकर बोली—"अच्छा जीजीसे पूछ देखूँ।"

द्विजदासने कहा—"भाभी रसोईघरमें गई हैं। शायद उन्हें देर लगेगी।" फिर हाथका बण्डल दिखाता हुआ बोला—"आपको क्या दूँ ?"

बन्दनाने जवाब दिया—"अखबार ? अखबार मैं नहीं पढ़ती।"

"अखबार नहीं पढ़तीं ?"

"नहीं। उसमें मैं धीरज खो बैठती हूँ। शामको बापूजीके मुँहसे बातें सुन लिया करती हूँ, इसीसे मेरी भूख मिट जाती है।"

"आश्चर्य है। मैंने सोचा था आप बहुत ज्यादा पढ़ती होंगी।"

बन्दनाने कहा—"मेरे सम्बन्धमें बगैर कुछ भी जाने ऐसा क्यों सोचते हैं ? बड़ा बेइन्साफ करते हैं।"

द्विजदास शरमिन्दा-सा होने लगा तो बन्दना हँसके बोली, "आप लोगोंमेंसे किसने कितना देशोद्धार किया और अँग्रेजोंने उसपर कितनी आँखें लाल कीं—इस विषयमें मुझे जरा भी कुतूहल नहीं। बापूजीको है। देखिए न, खबरोंके ठेठ तलेमें डूब गये हैं, बाह्यज्ञान रहा ही नहीं।"

साहबके कानोंमें शायद लड़कीका सिर्फ "बापूजी" शब्द पहुँच गया था, पर उन्हें आँख उठाकर देखनेका वक्त नहीं मिला, बोले—"जरा ठहर जा, बताता हूँ। ठीक यही जवाब मैं ढूँढ़ रहा था।"

लड़की मुसकराती हुई गरदन हिलाकर बोली—"तुम ढूँढ़-ढूँढ़कर दिन-भर पढ़ते रहो बापूजी, मुझे जरा भी जल्दी नहीं।"—फिर द्विजदासकी तरफ लक्ष्य करके बोली—"जीजीके मुँहसे सुना था कि आपके बड़ी-भारी लाइब्रेरी है, वहीं चलिए, देखूँ आपने कितनी किताबें इकट्ठी की हैं।"

"चलिए।"

* * * *

द्विजदासने हँसकर कहा—“मानी अगर अभी ही बता दूँ तो फिर और किसी दिन जवाब देनेकी ज़रूरत ही न होगी। आज रहने दीजिए।”

विशाल लाइब्रेरी है। आलमारी टेबिल कुरसी वग़ैरह जैसा कीमती असबाब हैं वैसे ही तरतीब और सफाईसे सजी हुई है। गँवई-गाँवमें इतना बड़ा आयोजन देखकर बन्दनाको बहुत आश्चर्य हुआ। बम्बई शहरमें इस चीज़का अभाव नहीं; उसकी तुलनामें यह शायद कुछ भी नहीं; किन्तु एक गाँवमें किसी एक व्यक्तिका इतना ज्यादा संग्रह करना सचमुच आश्चर्यकी बात थी। उसने पूछा—“क्या, वास्तवमें इतनी किताबें भाई साहब पढ़ते हैं?”

द्विजदासने कहा—“पढ़ते हैं और पढ़ी हैं। आलमारियाँ बन्द नहीं हैं, कोई भी एक किताब निकालके देख लीजिए न, उनके पढ़नेके निशान शायद नजर आ जायँ।”

“इतना वक्त उन्हें कब मिलता है? दिन-रात क्या सिर्फ़ यही करते रहते हैं?”

द्विजदासने गरदन हिलाते हुए कहा—“नहीं। कमसे-कम मैं तो नहीं जानता। इसके सिवा, हमारी जमींदारी या जमीन-जायदाद बहुत-भारी न होनेपर भी निहायत कम भी नहीं कही जा सकती। उसमें कहाँ क्या है और क्या हो रहा है, सब भाई साहबकी नजरोंमें रहता है। सिर्फ़ आजकल ही नहीं, बल्कि बापूजीके सामनेसे ही बराबर यही व्यवस्था चली आ रही है। वक्त मिलनेका रहस्य मुझे भी ठीक ढूँढे नहीं मिलता। आपकी तरह मेरा आश्चर्य भी कुछ कम नहीं,—मगर हाँ, सिर्फ़ यही सोचकर रह जाता हूँ कि संसारमें कभी कभी ऐसे भी दो-एक व्यक्ति जन्म लेते हैं जो साधारण लोगोंके हिसाबके बाहर होते हैं। भाई साहब उसी श्रेणीके जीव हैं। हम लोगोंकी तरह शायद इन्हें तकलीफ उठाकर पढ़ना भी नहीं पड़ता, छापेके हरूफ आँखोंकी राह जाकर मगजमें अपने आप छाप लगाते चले जाते हैं। पर भाई साहबकी बात अभी रहने दो। आपने उन्हें अभी तक आँखोंसे देखा भी नहीं, मेरे मुँहसे इकतरफा आलोचना अतिशयोक्ति मालूम हो सकती है।”

“मगर सुननेमें मुझे बहुत अच्छी ही लग रही है।”

“लेकिन सिर्फ़ ‘अच्छी लगना’ ही तो सब कुछ नहीं है। संसारमें हम लोग और अत्यन्त साधारण और भी बहुतसे लोग हैं? एकमात्र असाधारण

द्विजदासने हँसकर कहा—“ मानी अगर अभी ही बता दूँ तो फिर और किसी दिन जवाब देनेकी ज़रूरत ही न होगी। आज रहने दीजिए। ”

विशाल लाइब्रेरी है। आलमारी टेबिल कुरसी वग़ैरह जैसा कीमती असबाब हैं वैसे ही तरतीब और सफाईसे सजी हुई है। गँवई-गाँवमें इतना बड़ा आयोजन देखकर बन्दनाको बहुत आश्चर्य हुआ। बम्बई शहरमें इस चीज़का अभाव नहीं; उसकी तुलनामें यह शायद कुछ भी नहीं; किन्तु एक गाँवमें किसी एक व्यक्तिका इतना ज्यादा संग्रह करना सचमुच आश्चर्यकी बात थी। उसने पूछा—“ क्या, वास्तवमें इतनी किताबें भाई साहब पढ़ते हैं ? ”

द्विजदासने कहा—“ पढ़ते हैं और पढ़ी हैं। आलमारियाँ बन्द नहीं हैं, कोई भी एक किताब निकालके देख लीजिए न, उनके पढ़नेके निशान शायद नजर आ जायँ। ”

“ इतना वक्त उन्हें कब मिलता है ? दिन-रात क्या सिर्फ़ यही करते रहते हैं ? ”

द्विजदासने गरदन हिलाते हुए कहा—“ नहीं। कमसे-कम मैं तो नहीं जानता। इसके सिवा, हमारी जमींदारी या जमीन-जायदाद बहुत-भारी न होने-पर भी निहायत कम भी नहीं कही जा सकती। उसमें कहाँ क्या है और क्या हो रहा है, सब भाई साहबकी नजरोंमें रहता है। सिर्फ़ आजकल ही नहीं, बल्कि बापूजीके सामनेसे ही बराबर यही व्यवस्था चली आ रही है। वक्त मिलनेका रहस्य मुझे भी ठीक ढूँढे नहीं मिलता। आपकी तरह मेरा आश्चर्य भी कुछ कम नहीं,—मगर हाँ, सिर्फ़ यही सोचकर रह जाता हूँ कि संसारमें कभी कभी ऐसे भी दो-एक व्यक्ति जन्म लेते हैं जो साधारण लोगोंके हिसाबके बाहर होते हैं। भाई साहब उसी श्रेणीके जीव हैं। हम लोगोंकी तरह शायद इन्हें तकलीफ उठाकर पढ़ना भी नहीं पड़ता, छापेके हरूफ आँखोंकी राह जाकर मग़जमें अपने आप छाप लगाते चले जाते हैं। पर भाई साहबकी बात अभी रहने दो। आपने उन्हें अभी तक आँखोंसे देखा भी नहीं, मेरे मुँहसे इकतरफ़ा आलोचना अतिशयोक्ति मालूम हो सकती है। ”

“ मगर सुननेमें मुझे बहुत अच्छी ही लग रही है। ”

“ लेकिन सिर्फ़ ‘ अच्छी लगना ’ ही तो सब कुछ नहीं है। संसारमें हम लोग और अत्यन्त साधारण और भी बहुतसे लोग हैं ? एकमात्र असाधारण

द्विजदासने कहा—"मुझे अपनी तरफसे कोई आपत्ति नहीं, पर रुपये कहाँसे आयेंगे? वहाँ लड़के पढ़ाकर भी गुजारा नहीं किया जा सकता; और इतना भार भाभीपर भी नहीं लाद सकूँगा। यह व्यर्थकी आशा है।"

सुनकर बन्दना हँस दी। बोली—"द्विजू बाबू, यह तो आपकी नाराज़ीकी बात है। नहीं तो, जितना धन आप लोगोंके पास है उससे सिर्फ आप अकेले ही नहीं, चाहें तो आप इस गाँवके आधे आदमियोंको साथ ले जा सकते हैं। अच्छा तो ठीक है, इसकी व्यवस्था मैं किये देती हूँ, आप चलनेको तैयार हूजिए।"

द्विजदासने कहा—"सो व्यवस्था होनेकी नहीं। धन बहुत है, माना, पर वह सब भाई साहबका है, मेरा नहीं। अगर कहूँ कि मैं दयापर निर्भर हूँ तो अत्युक्ति न होगी।"

बन्दनाने फिर हँसनेकी कोशिश करते हुए कहा—"अत्युक्ति क्या और कौन-सी होती है, सो मैं भी समझती हूँ। पर यह भी नाराज़ीकी बात है। जीजीकी चिट्ठीसे एक बार मालूम हुआ था कि जिस सम्पत्तिको आपने खुद नहीं कमाया उसे आप लेना नहीं चाहते। क्या यह बात ठीक नहीं?"

द्विजदासने कहा—"अगर ठीक भी हो तो वह मनुष्यकी धर्मबुद्धिकी बात है, नाराज़ीकी नहीं। परन्तु इतना ही सम्पूर्ण कारण नहीं है।"

"सम्पूर्ण कारण क्या है, क्या सुन नहीं सकती?"

द्विजदास चुप रह गया। बन्दना क्षण-भर उसके चेहरेकी ओर देखती रही, फिर आहिस्ते-आहिस्ते बोली—"मैं स्वभावतः इतनी कुतूहली नहीं हूँ; और मेरा यह आग्रह दुनियासे न्यारा आतिशय्य या ज्यादती है, इतनी समझ मुझमें भी है; लेकिन समझ रहनेसे ही संसारकी सब ज़रूरतें नहीं मिट जातीं—अभाव मुँह बाय ताकता ही रहता है। आपकी बातें मैंने इतनी ज्यादा सुनी हैं कि आप पहले-पहल जब मेरे सामने उस कमरेमें दाखिल हुए, तो अपरिचित-से मालूम ही नहीं हुए,—ऐसी आसानीसे पहचान लिया कि जैसे कितनी ही बार देखा हो। जीजीको इतनी बातें बता सके, मुझे नहीं बता सकते? और कुछ न होऊँ, उनकी तरह मैं भी तो आपकी एक आत्मीय हूँ।"

बात सुनकर द्विजदास दंग रह गया। और, अकस्मात् सारी बातें याद आ जानेसे उसके संकोच और आश्चर्यकी सीमा न रही। बिलकुल अपरिचित जवान लड़कीके साथ एकान्तमें इस तरह बातें करनेका इतिहास उसके लिए यह

द्विजदासने कहा—"मुझे अपनी तरफसे कोई आपत्ति नहीं, पर रुपये कहाँसे आयेंगे? वहाँ लड़के पढ़ाकर भी गुजारा नहीं किया जा सकता; और इतना भार भाभीपर भी नहीं लाद सकूँगा। यह व्यर्थकी आशा है।"

सुनकर वन्दना हँस दी। बोली—"द्विजू बाबू, यह तो आपकी नाराज़ीकी बात है। नहीं तो, जितना धन आप लोगोंके पास है उससे सिर्फ आप अकेले ही नहीं, चाहें तो आप इस गाँवके आधे आदमियोंको साथ ले जा सकते हैं। अच्छा तो ठीक है, इसकी व्यवस्था मैं किये देती हूँ, आप चलनेको तैयार हूजिए।"

द्विजदासने कहा—"सो व्यवस्था होनेकी नहीं। धन बहुत है, माना, पर वह सब भाई साहबका है, मेरा नहीं। अगर कहूँ कि मैं दयापर निर्भर हूँ तो अत्युक्ति न होगी।"

वन्दनाने फिर हँसनेकी कोशिश करते हुए कहा—"अत्युक्ति क्या और कौन-सी होती है, सो मैं भी समझती हूँ। पर यह भी नाराज़ीकी बात है। जीजीकी चिट्ठीसे एक बार मालूम हुआ था कि जिस सम्पत्तिको आपने खुद नहीं कमाया उसे आप लेना नहीं चाहते। क्या यह बात ठीक नहीं?"

द्विजदासने कहा—"अगर ठीक भी हो तो वह मनुष्यकी धर्मबुद्धिकी बात है, नाराज़ीकी नहीं। परन्तु इतना ही सम्पूर्ण कारण नहीं है।"

"सम्पूर्ण कारण क्या है, क्या सुन नहीं सकती?"

द्विजदास चुप रह गया। वन्दना क्षण-भर उसके चेहरेकी ओर देखती रही, फिर आहिस्ते-आहिस्ते बोली—"मैं स्वभावतः इतनी कुतूहली नहीं हूँ; और मेरा यह आग्रह दुनियासे न्यारा आतिशय्य या ज्यादती है, इतनी समझ मुझमें भी है; लेकिन समझ रहनेसे ही संसारकी सब ज़रूरतें नहीं मिट जातीं—अभाव मुँह बाये ताकता ही रहता है। आपकी बातें मैंने इतनी ज्यादा सुनी हैं कि आप पहले-पहल जब मेरे सामने उस कमरेमें दाखिल हुए, तो अपरिचित-से मालूम ही नहीं हुए,—ऐसी आसानीसे पहचान लिया कि जैसे कितनी ही बार देखा हो। जीजीको इतनी बातें बता सके, मुझे नहीं बता सकते? और कुछ न होऊँ, उनकी तरह मैं भी तो आपकी एक आत्मीय हूँ।"

बात सुनकर द्विजदास दंग रह गया। और, अकस्मात् सारी बातें याद आ जानेसे उसके संकोच और आश्चर्यकी सीमा न रही। बिलकुल अपरिचित जवान लड़कीके साथ एकान्तमें इस तरह बातें करनेका इतिहास उसके लिए यह

" भाई साहबने नहीं करने दिया ? आश्चर्य है ।"

द्विजदासने हँसते हुए कहा—" भाई साहबको जान जायेंगी तो फिर आश्चर्य नहीं मालूम होगा । एक दिनकी बात है, शाम हो चुकी थी, नौकर तब तक उस कमरेमें बत्ती नहीं रख गये थे, मैं बगलवाले कमरेमें एक किताब ढूँढ़ रहा था, अचानक पिताजीकी बात कानोंमें आ पड़ी । भाई साहबने कहा, ' नहीं ।' पिताजी जिद करने लगे, ' नहीं क्यों विप्रदास ? मैं अपनी बाप-दादोंके जमानेसे चली आई सम्पत्तिको नष्ट नहीं होने दे सकता । परलोकमें रहकर भी मुझे शान्ति नहीं मिलेगी । ' फिर भी भाई साहबने यही जवाब दिया कि ' नहीं, ऐसा किसी तरह भी नहीं हो सकता ' । बापूजीने कहा कि ' फिर भी तुम्हारे ही हाथ मैं सब छोड़े जाता हूँ । अगर अच्छा समझो तो दे देना, अगर वैसा न समझो तो मत देना । ' इसके बाद भी पिताजी दो-तीन साल तक और जीवित रहे, पर मुझे निश्चित मालूम है कि उनकी राय नहीं बदली थी । "

बन्दनाने मृदुकंठसे पूछा—" इस बातको और भी कोई जानता है ? "

" कोई नहीं । सिर्फ मैं ही जानता हूँ; छिपके सुना था इसलिए । "

बन्दना बहुत देर तक मौन रहकर अस्फुट स्वरमें बोली—" सचमुच ही आपके भाई साहब असाधारण आदमी हैं । "

द्विजदासने शान्तभावसे कहा—" हाँ । पर अब मैं नीचे जाता हूँ, बहुत देर हो गई मुझे । आप बैठी-बैठी किताब पढ़ती रहें—जब तक कि बुलावा न आवे । "

बन्दना हँसती हुई बोली—" इस वक्त किताब पढ़नेकी रुचि नहीं है, चलिए मैं भी चलती हूँ । कमसे कम आठ-दस दिन तो यहाँ हूँ ही,—किताबें पढ़नेको बहुत वक्त मिलेगा । "

द्विजदास चलनेको तैयार हो गया था, पर तुरत ही ठिठककर खड़ा हो गया; बोला—" अपने पिताजीके साथ आप कलकत्ते नहीं जायँगी ? "

" नहीं । जब वे कलकत्तेसे वापस होंगे, तो उनके साथ ही बम्बई जाऊँगी । "

द्विजदासने कहा—" बल्कि, मैं तो कहता हूँ कि उनके वापस जाते वक्त आप कुछ दिनके लिए यहीं ठहर जायँ । "

बन्दनाने कहा—" पहले ऐसी ही इच्छा थी, पर अब देखती हूँ कि उसमें बहुत असुविधा है । मुझे पहुँचा देनेवाला कोई नहीं है । हाँ, आप अगर राजी हो जायँ तो आपकी सलाह ही मान लूँगी । "

"भाई साहबने नहीं करने दिया? आश्चर्य है।

द्विजदासने हँसते हुए कहा—"भाई साहबको जान जायेंगी तो फिर आश्चर्य नहीं मालूम होगा। एक दिनकी बात है, शाम हो चुकी थी, नौकर तब तक उस कमरेमें बत्ती नहीं रख गये थे, मैं बगलवाले कमरेमें एक किताब ढूँढ़ रहा था, अचानक पिताजीकी बात कानोंमें आ पड़ी। भाई साहबने कहा, 'नहीं।' पिताजी जिद करने लगे, 'नहीं क्यों विप्रदास? मैं अपनी बाप-दादोंके जमानेसे चली आई सम्पत्तिको नष्ट नहीं होने दे सकता। परलोकमें रहकर भी मुझे शान्ति नहीं मिलेगी।' फिर भी भाई साहबने यही जवाब दिया कि 'नहीं, ऐसा किसी तरह भी नहीं हो सकता'। बापूजीने कहा कि 'फिर भी तुम्हारे ही हाथ मैं सब छोड़े जाता हूँ। अगर अच्छा समझो तो दे देना, अगर वैसा न समझो तो मत देना।' इसके बाद भी पिताजी दो-तीन साल तक और जीवित रहे, पर मुझे निश्चित मालूम है कि उनकी राय नहीं बदली थी।"

वन्दनाने मृदुकंठसे पूछा—"इस बातको और भी कोई जानता है?"

"कोई नहीं। सिर्फ मैं ही जानता हूँ; छिपके सुना था इसलिए।"

वन्दना बहुत देर तक मौन रहकर अस्फुट स्वरमें बोली—"सचमुच ही आपके भाई साहब असाधारण आदमी हैं।"

द्विजदासने शान्तभावसे कहा—"हाँ। पर अब मैं नीचे जाता हूँ, बहुत देर हो गई मुझे। आप बैठी-बैठी किताब पढ़ती रहें—जब तक कि बुलावा न आवे।"

वन्दना हँसती हुई बोली—"इस वक्त किताब पढ़नेकी रुचि नहीं है, चलिए मैं भी चलती हूँ। कमसे कम आठ-दस दिन तो यहाँ हूँ ही,—किताबें पढ़नेको बहुत वक्त मिलेगा।"

द्विजदास चलनेको तैयार हो गया था, पर तुरत ही ठिठककर खड़ा हो गया; बोला—"अपने पिताजीके साथ आप कलकत्ते नहीं जायेंगी?"

"नहीं। जब वे कलकत्तेसे वापस होंगे, तो उनके साथ ही बम्बई जाऊँगी।"

द्विजदासने कहा—"बल्कि, मैं तो कहता हूँ कि उनके वापस जाते वक्त आप कुछ दिनके लिए यहीं ठहर जायँ।"

वन्दनाने कहा—"पहले ऐसी ही इच्छा थी, पर अब देखती हूँ कि उसमें बहुत असुविधा है। मुझे पहुँचा देनेवाला कोई नहीं है। हाँ, आप अगर राजी हो जायँ तो आपकी सलाह ही मान लूँगी।"

६

बन्दनाने नीचे आकर देखा कि पिताजी मजेसे खाने बैठे हैं। उस बैठकखानेमें ही एक छोटी-सी टेबिलपर चाँदीके थालमें खानेको परोसा गया है। एक दीर्घाकृति अत्यन्त सुन्दर व्यक्ति पास ही खड़ा है,—उसके शरीरका शक्तिसम्पन्न गठन और अत्यन्त गोरा रंग देखकर ही बन्दनाने पहचान लिया कि ये ही विप्रदास हैं। सती भी साथ ही आ रही थी, पर वह भीतर नहीं घुसी, दरवाजेकी आड़में खड़ी हो गई और बन्दनाको नमस्कार करनेका इशारा करके जता दिया कि 'हाँ, ये ही हैं'।

भारतीय लड़कीको यह बात सिखानेकी ज़रूरत नहीं थी, और इसके पहले माको जैसे उसने ढोक देकर प्रणाम किया था, बड़े बहनोईके लिए भी वैसा कर सकती थी; किन्तु सहसा न जाने कैसे उसका सम्पूर्ण मन विद्रोह-सा कर उठा। इनकी अनन्य साधारण विद्या और बुद्धिका वर्णन द्विजदासके मुँहसे न सुना होता तो शायद इस प्रचलित शिष्टाचारका लंघन करनेकी बात उसके मनमें भी न उठती, किन्तु इस परिचयहीने उसे कठोर कर डाला। जीजीका मान रखनेके लिए उसने हाथ उठाकर नमस्कार तो किया किन्तु उसमें उसकी उपेक्षा ही स्पष्टतर हो उठी। बात उसने पितासे ही की, बोली—"तुम अकेले खाने बैठे हो, मुझे बुलवा क्यों नहीं लिया ?"

साहबने मुँह उठाकर उसकी ओर देखा, और कहा—"मेरा जो गाड़ीका वक्त हो गया था बेटी, तुम्हें तो कोई जल्दी नहीं थी। फिर बोले—"मेरे चले जानेके बाद तुम लोग धीरे-सुस्ते खा-पी सकोगी।"

सतीने ओटमेंसे गरदन हिलाकर इस बातका अनुमोदन किया। बन्दनाने उसकी तरफ लक्ष्य करके कहा—"जीजी, इतने-सारे कीमती चाँदीके बरतन क्यों बिगाड़ें, बापूजीको एनामिल या चीनी मिट्टीके बरतनमें परोस देनेसे ही काम चल जाता ?"

साहबका चबाना रुक गया। अत्यन्त सरल प्रकृतिके आदमी थे वे, लड़कीकी बातका तात्पर्य कुछ भी न समझ सके; इस तरह व्यस्त और लज्जित हो उठे—जैसे यह उनका अपना ही कसूर हो; बोले—"हाँ, हाँ; ठीक तो है—इसका मैंने कुछ खयाल ही नहीं किया,—सती कहाँ गई—मुझे किसी डिशमें ही परोस देनेसे काम चल जाता,—एः—"

६

बन्दनाने नीचे आकर देखा कि पिताजी मजेसे खाने बैठे हैं। उस बैठकखानेमें ही एक छोटी-सी टेबिलपर चाँदीके थालमें खानेको परोसा गया है। एक दीर्घाकृति अत्यन्त सुन्दर व्यक्ति पास ही खड़ा है,—उसके शरीरका शक्तिसम्पन्न गठन और अत्यन्त गोरा रंग देखकर ही बन्दनाने पहचान लिया कि ये ही विप्रदास हैं। सती भी साथ ही आ रही थी, पर वह भीतर नहीं घुसी, दरवाजेकी आड़में खड़ी हो गई और बन्दनाको नमस्कार करनेका इशारा करके जता दिया कि 'हाँ, ये ही हैं'।

भारतीय लड़कीको यह बात सिखानेकी ज़रूरत नहीं थी, और इसके पहले माको जैसे उसने ढोक देकर प्रणाम किया था, बड़े बहनोईके लिए भी वैसा कर सकती थी; किन्तु सहसा न जाने कैसे उसका सम्पूर्ण मन विद्रोह-सा कर उठा। इनकी अनन्य साधारण विद्या और बुद्धिका वर्णन द्विजदासके मुँहसे न सुना होता तो शायद इस प्रचलित शिष्टाचारका लंघन करनेकी बात उसके मनमें भी न उठती, किन्तु इस परिचयहीने उसे कठोर कर डाला। जीजीका मान रखनेके लिए उसने हाथ उठाकर नमस्कार तो किया किन्तु उसमें उसकी उपेक्षा ही स्पष्टतर हो उठी। बात उसने पितासे ही की, बोली—"तुम अकेले खाने बैठे हो, मुझे बुलवा क्यों नहीं लिया?"

साहबने मुँह उठाकर उसकी ओर देखा, और कहा—"मेरा जो गाड़ीका वक्त हो गया था बेटी, तुम्हें तो कोई जल्दी नहीं थी। फिर बोले—"मेरे चले जानेके बाद तुम लोग धीरे-सुस्ते खा-पी सकोगी।"

सतीने ओटमेंसे गरदन हिलाकर इस बातका अनुमोदन किया। बन्दनाने उसकी तरफ लक्ष्य करके कहा—"जीजी, इतने-सारे कीमती चाँदीके बरतन क्यों बिगाड़े, बापूजीको एनामिल या चीनी मिट्टीके बरतनमें परोस देनेसे ही काम चल जाता?"

साहबका चबाना रुक गया। अत्यन्त सरल प्रकृतिके आदमी थे वे, लड़कीकी बातका तात्पर्य कुछ भी न समझ सके; इस तरह व्यस्त और लज्जित हो उठे—जैसे यह उनका अपना ही कसूर हो; बोले—"हाँ, हाँ, ठीक तो है—इसका मैंने कुछ खयाल ही नहीं किया,—सती कहाँ गई—मुझे किसी डिशमें ही परोस देनेसे काम चल जाता,—ए:—"

यह सुनकर साहबके मनपरसे सिर्फ एक भार ही नहीं उतर गया सम्पूर्ण हृदय खुशीसे भर उठा। बोले—"तुम्हारी यह बात, बेटा, बिलकुल सच है। भाई-साहबकी जब अचानक मौत हो गई तब सती बहुत छोटी थी। मैं परदेशमें नौकरी करता था, हमेशा घर आ नहीं सकता था, और आता था तो समाजके शासनके मारे अकेल ही रहना पड़ता था, मगर सती मौका पाते ही मेरे पास दौड़ी आती थी,—"

बन्दना चटसे बाधा देती हुई बोल उठी—"उन बातोंको रहने दो न बापूजी—"

"नहीं नहीं, मुझे सब याद है,—झूठ थोड़े ही है। एक दिन मेरे साथ एक थालीमें खाने ही बैठ गई—उसकी मा तो यह देखके—"

"आह्, बापूजी, तुम न जाने क्या कह रहे हो बिना ठीक-ठिकानेका। कब मेरी जीजी तुम्हारे साथ,—तुम्हें कुछ भी याद नहीं।"

साहबने मुँह उठाकर प्रतिवाद किया—"वाह, याद क्यों नहीं। और फिर इस बातको लेकर कहीं कोई ऊधम न उठ खड़ा हो, इस खयालसे तुम्हारी माने उस दिन कैसे डरते-डरते—"

बन्दनाने कहा—"बापूजी, आज तुम जरूर गाड़ी फेल करोगे। कितने बजे हैं मालूम है?"

साहबने व्यक्त होकर जेबसे घड़ी निकाली और समय देखकर निश्चिन्तताकी साँस छोड़ते हुए कहा, "तू तो ऐसा डरा देती है कि चौंक जाना पड़ता है। अभी बहुत देर है,—आसानीसे गाड़ी मिल जायगी।"

विप्रदासने हँसकर उनकी हाँमें हाँ मिलाते हुए कहा—"हाँ, गाड़ीमें अभी बहुत देर है। आप निश्चिन्त होकर जीमिए, मैं खुद स्टेशन जाकर आपको चढ़ा आऊँगा।"—इतना कहकर वह कमरेसे बाहर हो गया।

दरवाजेकी ओटसे निकलकर सती ज्यों ही उसके पास आके खड़ी हुई त्यों ही बन्दनाने उससे अत्यन्त मृदुस्वरसे कहा—"जीजी, बापूजीने क्या काण्ड कर डाला, सुना?"

सतीने सिर हिलाकर कहा—"हाँ।"

बन्दनाने कहा—"तुम्हारी सासुके कानों तक बात पहुँच गई तो तुम्हें दुःख उठाना पड़ेगा। है न जीजी?"

सतीने कहा—"पड़ेगा तो पड़ता रहे। अभी रहने दो, काकाजी सुन लेंगे।"

यह सुनकर साहबके मनपरसे सिर्फ़ एक भार ही नहीं उतर गया सम्पूर्ण हृदय खुशीसे भर उठा। बोले—"तुम्हारी यह बात, बेटा, बिलकुल सच है। भाई-साहबकी जब अचानक मौत हो गई तब सती बहुत छोटी थी। मैं परदेशमें नौकरी करता था, हमेशा घर आ नहीं सकता था, और आता था तो समाजके शासनके मारे अकेले ही रहना पड़ता था, मगर सती मौका पाते ही मेरे पास दौड़ी आती थी,—"

बन्दना चटसे बाधा देती हुई बोल उठी—"उन बातोंको रहने दो न बापूजी—"

"नहीं नहीं, मुझे सब याद है,—झूठ थोड़े ही है। एक दिन मेरे साथ एक थालीमें खाने ही बैठ गई—उसकी मा तो यह देखके—"

"आह्, बापूजी, तुम न जाने क्या कह रहे हो बिना ठीक-ठिकानेका। कब मेरी जीजी तुम्हारे साथ,—तुम्हें कुछ भी याद नहीं।"

साहबने मुँह उठाकर प्रतिवाद किया—"वाह, याद क्यों नहीं। और फिर इस बातको लेकर कहीं कोई ऊधम न उठ खड़ा हो, इस खयालसे तुम्हारी माने उस दिन कैसे डरते-डरते—"

बन्दनाने कहा—"बापूजी, आज तुम जरूर गाड़ी फेल करोगे। कितने बजे हैं मालूम है?"

साहबने व्यक्त होकर जेबसे घड़ी निकाली और समय देखकर निश्चिन्तताकी साँस छोड़ते हुए कहा, "तू तो ऐसा डरा देती है कि चौंक जाना पड़ता है। अभी बहुत देर है,—आसानीसे गाड़ी मिल जायगी।"

विप्रदासने हँसकर उनकी हाँमें हाँ मिलाते हुए कहा—"हाँ, गाड़ीमें अभी बहुत देर है। आप निश्चिन्त होकर जीमिए, मैं खुद स्टेशन जाकर आपको चढ़ा आऊँगा।"—इतना कहकर वह कमरेसे बाहर हो गया।

दरवाजेकी ओटसे निकलकर सती ज्यों ही उसके पास आके खड़ी हुई त्यों ही बन्दनाने उससे अत्यन्त मृदुस्वरसे कहा—"जीजी, बापूजीने क्या काण्ड कर डाला, सुना?"

सतीने सिर हिलाकर कहा—"हाँ।"

बन्दनाने कहा—"तुम्हारी सासुके कानों तक बात पहुँच गई तो तुम्हें दुःख उठाना पड़ेगा। है न जीजी?"

सतीने कहा—"पड़ेगा तो पड़ता रहे। अभी रहने दो, काकाजी सुन लेंगे।"

साहबने मन-ही-मन समझ लिया कि कोई बात हो गई है। नहीं तो, अचानक विना-कारण कुछ कर डालनेवाली लड़की नहीं है यह। उन्होंने कहा—"मैं भी यही जानता था कि कुछ दिन यह सतीके पास ही रहेगी। मगर एक बार जब गाड़ीमें बैठ गई है तो अब यह न उतरेगी।"

विप्रदासने कुछ जवाब नहीं दिया, चुपचाप उसके पीछे-पीछे आकर गाड़ीमें बैठ गये।

गाड़ी चल दी। अकस्मात् ऊपरकी ओर निगाह करते ही बन्दनाने देखा कि तीसरी मंजिलके लाइब्रेरीवाले कमरेके खुले जंगलेकी छड़ पकड़े द्विजदास चुपचाप खड़ा है। आँखें चार होते ही उसने हाथ उठाकर नमस्कार किया।

७

स्टेशन पहुँचनेपर मालूम हुआ कि कहीं कोई एक आकस्मिक दुर्घटना हो जानेसे गाड़ी आनेमें अभी काफी देर है। शायद घंटे-भरसे भी ज्यादा लेट है। परिचित स्टेशन-मास्टरके अचानक बीमार पड़ जानेसे एक मद्रासी रिलिविंग-हैण्ड कलसे काम कर रहा था, वह ठीक-ठीक खबर न दे सका, सिर्फ अनुमान ही कर सका, कि देर एक घंटेकी भी हो सकती है और दो घंटेकी भी। विप्रदासने साहबके मुँहकी ओर देखकर कहा—"कलकत्ते पहुँचनेमें रात हो जायगी, आज क्या बगैर गये नहीं चलेगा?"

"क्यों नहीं चलेगा? मेरी तो—"

बन्दना बीचहीमें बोल उठी—"नहीं बापूजी, सो नहीं हो सकता। एक बार घरसे निकलके लौटा नहीं जा सकता।"

विप्रदासने अनुनयके स्वरमें कहा—"क्यों नहीं लौटा जा सकता बन्दना? खासकर तुम बिना खाये चली आई हो, दिन-भर उपासी ही रही आओगी?"

बन्दनाने सिर हिलाकर कहा—"मुझे भूख नहीं है। वापस लौटनेपर भी मैं न खा सकूँगी।"

साहब मन-ही-मन क्षुण्ण हुए, बोले—"इन लोगोंकी शिक्षा-दीक्षा ही अलग है। एक बार जिद पकड़ लेनेपर फिर नहीं डिगाया जा सकता।"

विप्रदास चुप रह गया, उसने और अनुरोध नहीं किया।

× × × ×

साहबने मन-ही-मन समझ लिया कि कोई बात हो गई है। नहीं तो, अचानक विना-कारण कुछ कर डालनेवाली लड़की नहीं है यह। उन्होंने कहा—"मैं भी यही जानता था कि कुछ दिन यह सतीके पास ही रहेगी। मगर एक बार जब गाड़ीमें बैठ गई है तो अब यह न उतरेगी।"

विप्रदासने कुछ जवाब नहीं दिया, चुपचाप उसके पीछे-पीछे जाकर गाड़ीमें बैठ गये।

गाड़ी चल दी। अकस्मात् ऊपरकी ओर निगाह करते ही वन्दनाने देखा कि तीसरी मंजिलके लाइब्रेरीवाले कमरेके खुले जंगलेकी छड़ पकड़े द्विजदास चुपचाप खड़ा है। आँखें चार होते ही उसने हाथ उठाकर नमस्कार किया।

७

स्टेशन पहुँचनेपर मालूम हुआ कि कहीं कोई एक आकस्मिक दुर्घटना हो जानेसे गाड़ी आनेमें अभी काफी देर है। शायद घंटे-भरसे भी ज्यादा लेट है। परिचित स्टेशन-मास्टरके अचानक बीमार पड़ जानेसे एक मद्रासी रिलिविंग-हैण्ड कलसे काम कर रहा था, वह ठीक-ठीक खबर न दे सका, सिर्फ अनुमान ही कर सका, कि देर एक घंटेकी भी हो सकती है और दो घंटेकी भी। विप्रदासने साहबके मुँहकी ओर देखकर कहा—"कलकत्ते पहुँचनेमें रात हो जायगी, आज क्या बगैर गये नहीं चलेगा?"

"क्यों नहीं चलेगा? मेरी तो—"

वन्दना बीचहीमें बोल उठी—"नहीं बापूजी, सो नहीं हो सकता। एक बार घरसे निकलके लौटा नहीं जा सकता।"

विप्रदासने अनुनयके स्वरमें कहा—"क्यों नहीं लौटा जा सकता वन्दना? खासकर तुम विना खाये चली आई हो, दिन-भर उपासी ही रही आओगी?"

वन्दनाने सिर हिलाकर कहा—"मुझे भूख नहीं है। वापस लौटनेपर भी मैं न खा सकूँगी।"

साहब मन-ही-मन क्षुण्ण हुए, बोले—"इन लोगोंकी शिक्षा-दीक्षा ही अलग है। एक बार जिद पकड़ लेनेपर फिर नहीं चिगाया जा सकता।"

विप्रदास चुप रह गया, उसने और अनुरोध नहीं किया।"

× × × ×

साहब, क्या हम लोगोंसे छू-छा जानेसे घर लौटकर आपको फिरसे नहीं नहाना पड़ेगा ? ”

“ चलो न, घर चलकर अपनी आँखोंसे देख लो । ”

“ नहीं । आप जानते हैं कि माको जब मैं प्रणाम करने लगी तब वे छू जानेके डरसे दूर हट गई थीं ? ” कहते-कहते ही बन्दनाका चेहरा मारे क्रोध और लज्जाके सुर्ख हो उठा ।

विप्रदासने इसे देखा । उत्तरमें उसने शान्त भावसे सिर्फ इतना ही कहा— “ बात झूठ नहीं है, मगर सच भी नहीं । इसका असल कारण उनके पास बगैर रहे तुम नहीं समझ सकोगी । लेकिन उसकी तो सम्भावना ही नहीं रही । ”

“ हाँ, नहीं रही । ”

इस तीव्र अस्वीकारका कारण अब जाकर विप्रदासको साफ-साफ मालूम हुआ । मन-ही-मन उसके क्षोभकी सीमा न रही । क्षोभ नाना कारणोंसे हुआ । विमाताके सम्बन्धकी बात आंशिक रूपसे ही सत्य है और उसमें वह खुद भी कुछ-कुछ लपेट लिया गया है । इसपर मजा यह कि समझाकर कहने सुननेका न तो मौका है और न वक्त ही । दूसरी तरफ, धीर-चित्तसे समझने-लायक मनोवृत्तिक भी बन्दनामें बिलकुल अभाव है । लिहाजा चुप रह जानेके सिवा और कोई चारा ही न था; और वह बिलकुल चुप ही रहा ।

छोकरा-साहब पैर नीचे उतारकर जम्हाई लेते हुए उठ बैठे, पूछ उठे— “ आप ही जमींदार विप्रदास-बाबू हैं ? ”

“ हाँ । ”

“ आपका नाम सुना है । पासके गाँवमें मेरी स्त्रीकी ननसाल है,—बंगालमें जब आना हुआ ही है तो इनकी इच्छा हुई कि एक दफे भेंट-मुलाकात करती चलें । इसीसे आया था । मैं पंजाबमें प्रैक्टिस करता हूँ । ”

विप्रदासने उसकी ओर गौरसे देखा कि वह उन्हींके बराबरकी उमरका है, —एक-आध सालकी कमी-बेशी हो सकती है; इससे ज्यादा नहीं ।

साहब कहने लगा—“ कल ही आपकी बात हो रही थी । लोग कहते हैं कि आप बड़े जबरदस्त, यानी बहुत कड़े जमींदार हैं । अवश्य ही दो-चार ब्राह्मण-पण्डितोंने कट्टर-हिन्दू होनेकी वजहसे आपकी बहुत तारीफ भी की । अब देख रहा हूँ कि बात बिलकुल झूठ नहीं है । ”

एक अपरिचितकी इस बिन-चाही आलोचनासे बन्दना और उसके पिता

साहब, क्या हम लोगोंसे छू-छा जानेसे घर लौटकर आपको फिरसे नहीं नहाना पड़ेगा ?"

"चलो न, घर चलकर अपनी आँखोंसे देख लो।"

"नहीं। आप जानते हैं कि माको जब मैं प्रणाम करने लगी तब वे छू जानेके डरसे दूर हट गई थीं ?" कहते-कहते ही बन्दनाका चेहरा मारे क्रोध और लज्जाके सुर्ख हो उठा।

विप्रदासने इसे देखा। उत्तरमें उसने शान्त भावसे सिर्फ इतना ही कहा—"बात झूठ नहीं है, मगर सच भी नहीं। इसका असल कारण उनके पास बगैर रहे तुम नहीं समझ सकोगी। लेकिन उसकी तो सम्भावना ही नहीं रही।"

"हाँ, नहीं रही।"

इस तीव्र अस्वीकारका कारण अब जाकर विप्रदासको साफ-साफ मालूम हुआ। मन-ही-मन उसके क्षोभकी सीमा न रही। क्षोभ नाना कारणोंसे हुआ। विमाताके सम्बन्धकी बात आंशिक रूपसे ही सत्य है और उसमें वह खुद भी कुछ-कुछ लपेट लिया गया है। इसपर मजा यह कि समझाकर कहने सुननेका न तो मौका है और न वक्त ही। दूसरी तरफ, धीर-चित्तसे समझने-लायक मनोवृत्तिका भी बन्दनामें बिलकुल अभाव है। लिहाजा चुप रह जानेके सिवा और कोई चारा ही न था; और वह बिलकुल चुप ही रहा।

छोकरा-साहब पैर नीचे उतारकर जम्हाई लेते हुए उठ बैठे, पूछ उठे—"आप ही जमींदार विप्रदास-बाबू हैं ?"

"हाँ।"

"आपका नाम सुना है। पासके गाँवमें मेरी स्त्रीकी ननसाल है,—बंगालमें जब आना हुआ ही है तो इनकी इच्छा हुई कि एक दफे भेंट-मुलाकात करती चलें। इसीसे आया था। मैं पंजाबमें प्रैक्टिस करता हूँ।"

विप्रदासने उसकी ओर गौरसे देखा कि वह उन्हींके बराबरकी उमरका है,—एक-आध सालकी कमी-बेशी हो सकती है; इससे ज्यादा नहीं।

साहब कहने लगा—"कल ही आपकी बात हो रही थी। लोग कहते हैं कि आप बड़े जबरदस्त, यानी बहुत कड़े जमींदार हैं। अवश्य ही दो-चार ब्राह्मण-पण्डितोंने कट्टर-हिन्दू होनेकी वजहसे आपकी बहुत तारीफ भी की। अब देख रहा हूँ कि बात बिलकुल झूठ नहीं है।"

एक अपरिचितकी इस बिन-चाही आलोचनासे बन्दना और उसके पिता

किसीके कुछ बोलनेके पहले ही स्टेशनके उस रिलीविंग-हैण्डने दरवाजेके पाससे मुँह बढ़ाकर जताया कि गाड़ी डिस्टेन्स-सिगनल पार कर चुकी है,—आ ही पहुँची समझिए।"

सब व्यस्त होकर प्लॉटफॉर्मपर आ खड़े हुए।

गाड़ी खड़ी होनेपर देखा कि छुट्टियोंके कारण मुसाफिरोंकी बेशुमार भीड़ है। कहीं भी तिल रखनेको जगह मिलना मुश्किल है। सिर्फ एक डब्बा फर्स्ट क्लासका और एक ही सेकेण्ड क्लासका। सेकेण्ड क्लासमें फिरंगी रेल्वे सरवेण्टोंका दल ठसाठसा भर रहा है, जो कोई खेल देखनेके लिए कलकत्ते जा रहा है; और शायद उन्हींमेंसे कुछ लोग जगहकी कमीसे फर्स्ट क्लासमें जा बैठे हैं। हदसे ज्यादा शराब और 'बीयर' पीनेसे उन लोगोंका चेहरा जितना भीषण हो रहा था, व्यवहार भी उतना ही बदतर और ला-परवाहीका था। डब्बेका दरवाजा भीतरसे बन्द करके सबके सब बुरी तरह चिल्ला उठे—"go—जाओ—जाओ!"

स्टेशन-मास्टर आया, गार्ड साहब भी आ पहुँचा, पर उन लोगोंने किसीको कुछ समझा ही नहीं।

छोकरा-साहब बोला—"अब उपाय?"

बन्दना डरती हुई बोली—"चलिए, आज घर लौट चलें।"

विप्रदासने कहा—"नहीं।"

"नहीं तो क्या किया जाय? न हो तो रातकी गाड़ीसे—"

छोकरा-साहब कहने लगा—"इसके सिवा और चारा ही क्या है! तकलीफ तो होगी, पर हो।"

विप्रदासने गरदन हिलाकर कहा—"नहीं। डब्बेमें चार ही पाँच जने हैं, और भी चार-पाँच जनोंके लिए जगह होनी चाहिए।"

बन्दनाके पिता व्याकुल होकर कहने लगे—"चाहिए, सो तो जानता हूँ, मगर ये सबके सब मतवाले जो हैं।"

विप्रदासका सारा शरीर मानो कठिन लोहेकी तरह सीधा हो उठा, उन्हों कहा—"यह उन लोगोंका शौक है,—हमारा कसूर नहीं। चढ़िए,—मैं साथ चलूँगा।" और दूसरे ही क्षण गाड़ीका हत्था पकड़कर जोरसे धक्का मारके दरवाजा खोल डाला। फिर बन्दनाका हाथ पकड़के उसे भीतर खींचते हुए कहा—"आओ।" नौजवान साहबसे कहा—"राइट ऐस्सर्ट

किसीके कुछ बोलनेके पहले ही स्टेशनके उस रिलीविंग-हैण्डने दरवाजेके पाससे मुँह बढ़ाकर जताया कि गाड़ी डिस्टेन्स-सिगनल पार कर चुकी है,—आ ही पहुँची समझिए।"

सब व्यस्त होकर प्लॉटफॉर्मपर आ खड़े हुए।

गाड़ी खड़ी होनेपर देखा कि छुट्टियोंके कारण मुसाफिरोंकी बेशुमार भीड़ है। कहीं भी तिल रखनेको जगह मिलना मुश्किल है। सिर्फ एक डब्बा फर्स्ट क्लासका और एक ही सेकेण्ड क्लासका। सेकेण्ड क्लासमें फिरंगी रेल्वे सरवेण्टोंका दल ठसाठसा भर रहा है, जो कोई खेल देखनेके लिए कलकत्ते जा रहा है; और शायद उन्हींमेंसे कुछ लोग जगहकी कमीसे फर्स्ट क्लासमें जा बैठे हैं। हदसे ज्यादा शराब और 'बीयर' पीनेसे उन लोगोंका चेहरा जितना भीषण हो रहा था, व्यवहार भी उतना ही बदतर और ला-परवाहीका था। डब्बेका दरवाजा भीतरसे बन्द करके सबके सब बुरी तरह चिल्ला उठे—"go,—जाओ—जाओ!"

स्टेशन-मास्टर आया, गार्ड साहब भी आ पहुँचा, पर उन लोगोंने किसीको कुछ समझा ही नहीं।

छोकरा-साहब बोला—"अब उपाय?"

बन्दना डरती हुई बोली—"चलिए, आज घर लौट चलें।"

विप्रदासने कहा—"नहीं।"

"नहीं तो क्या किया जाय? न हो तो रातकी गाड़ीसे—"

छोकरा-साहब कहने लगा—"इसके सिवा और चारा ही क्या है! तकलीफ तो होगी, पर हो।"

विप्रदासने गरदन हिलाकर कहा—"नहीं। डब्बेमें चार ही पाँच जने हैं, और भी चार-पाँच जनोंके लिए जगह होनी चाहिए।"

बन्दनाके पिता व्याकुल होकर कहने लगे—"चाहिए, सो तो जानता हूँ, मगर ये सबके सब मतवाले जो हैं।"

विप्रदासका सारा शरीर मानो कठिन लोहेकी तरह सीधा हो उठा, उन्होंने कहा—"यह उन लोगोंका शौक है,—हमारा कसूर नहीं। चढ़िए,—मैं साथ चलूँगा।" और दूसरे ही क्षण गाड़ीका हत्था पकड़कर जोरसे धक्का मारके दरवाजा खोल डाला। फिर बन्दनाका हाथ पकड़के उसे भीतर खींचते हुए कहा—"आओ।" नौजवान साहबसे कहा—"राइट ऐस्सर्ट

" ओ—नो ! यह तो मेरी ड्यूटी है । "

गाड़ी छूटनेकी घंटी बजी । विप्रदास उतरनेको उद्यत होकर बोले—" अब शायद मेरे साथ जानेकी ज़रूरत नहीं । वे अब कुछ नहीं करेंगे । "

वैरिस्टरने कहा—" हिम्मत नहीं पड़ेगी । नौकरीका भी तो डर है ? "

वन्दना दरवाजा रोककर खड़ी हो गई, बोली—" सो नहीं होगा । नौकरीका डर ही चरम गैरण्टी नहीं है,—साथ आपको चलना ही पड़ेगा । "

विप्रदासने हँसकर कहा—" पुरुष होतीं तो समझतीं कि इससे बड़ी गैरण्टी संसारमें और कोई नहीं है ।—लेकिन मैं तो कुछ खा-पी नहीं आया ? "

" खा-पी तो मैं भी नहीं आई । "

" यह तुम्हारा शौक है । लेकिन थोड़ी ही देर बाद ' होटल 'वाला बड़ा स्टेशन आयेगा, वहाँ चाहो तो खा-पी सकोगी । "

वन्दनाने कहा—" पर उसकी चाह नहीं होगी । उपास मैं भी कर सकती हूँ । "

विप्रदासने कहा—" कर सकनेसे किसीको भी लाभ नहीं होगा,—मैं उतर जाऊँ । " फिर वैरिस्टर साहबसे कहा—" आप साथ हैं ही, ज़रा देखिएगा । अगर ज़रूरत पड़े तो—"

वन्दना बोल उठी—" जंजीर खींचकर गाड़ी खड़ी करा दें ? सो तो मैं भी कर सकती हूँ । " इतना कहकर खिड़कीसे मुँह निकालकर घरके नौकरोंसे कह दिया—" तुम लोग घर जाकर मासे कह देना कि बाबू साहब हम लोगोंके साथ चले गये हैं । कल या परसों लौट आयेंगे । "

गाड़ी छूट गई ।

वन्दना विप्रदासके पास आकर बैठ गई, बोली—" अच्छा मुखर्जी साहब, आप भी तो कम जिद्दी नहीं हैं ! "

" क्यों ? "

" आपने तो जबरदस्ती हम लोगोंको गाड़ीमें चढ़ा लिया, और वे लोग थे मतवाले,—अगर वे न उतरकर मारपीट कर बैठते ? "

विप्रदासने कहा—" तो उनकी नौकरी चली जाती ! "

वन्दनाने कहा—" लेकिन हम लोगोंका क्या जाता ? देहकी हड्डी-पसली ? नौकरीसे वह भी तो कोई तुच्छ वस्तु नहीं ? "

" ओ—नो ! यह तो मेरी ड्यूटी है । "

गाड़ी छूटनेकी घंटी बजी । विप्रदास उतरनेको उद्यत होकर बोले—" अब शायद मेरे साथ जानेकी ज़रूरत नहीं । वे अब कुछ नहीं करेंगे । "

वैरिस्टरने कहा—" हिम्मत नहीं पड़ेगी । नौकरीका भी तो डर है ? "

वन्दना दरवाजा रोककर खड़ी हो गई, बोली—" सो नहीं होगा । नौकरीका डर ही चरम गैरण्टी नहीं है,—साथ आपको चलना ही पड़ेगा । "

विप्रदासने हँसकर कहा—" पुरुष होतीं तो समझतीं कि इससे बड़ी गैरण्टी संसारमें और कोई नहीं है ।—लेकिन मैं तो कुछ खा-पी नहीं आया ? "

" खा-पी तो मैं भी नहीं आई । "

" यह तुम्हारा शौक है । लेकिन थोड़ी ही देर बाद 'होटल'वाला बड़ा स्टेशन आयेगा, वहाँ चाहो तो खा-पी सकोगी । "

वन्दनाने कहा—" पर उसकी चाह नहीं होगी । उपास मैं भी कर सकती हूँ । "

विप्रदासने कहा—" कर सकनेसे किसीको भी लाभ नहीं होगा,—मैं उतर जाऊँ । " फिर वैरिस्टर साहबसे कहा—" आप साथ हैं ही, ज़रा देखिएगा । अगर ज़रूरत पड़े तो—"

वन्दना बोल उठी—" जंजीर खींचकर गाड़ी खड़ी करा दें ? सो तो मैं भी कर सकती हूँ । " इतना कहकर खिड़कीसे मुँह निकालकर घरके नौकरोंसे कह दिया—" तुम लोग घर जाकर मासे कह देना कि बाबू साहब हम लोगोंके साथ चले गये हैं । कल या परसों लौट आयेंगे । "

गाड़ी छूट गई ।

वन्दना विप्रदासके पास आकर बैठ गई, बोली—" अच्छा मुखर्जी साहब, आप भी तो कम जिद्दी नहीं हैं ! "

" क्यों ? "

" आपने तो जबरदस्ती हम लोगोंको गाड़ीमें चढ़ा लिया, और वे लोग थे मतवाले,—अगर वे न उतरकर मारपीट कर बैठते ? "

विप्रदासने कहा—" तो उनकी नौकरी चली जाती ! "

वन्दनाने कहा—" लेकिन हम लोगोंका क्या जाता ? देहकी हड्डी-पसली ? नौकरीसे वह भी तो कोई तुच्छ वस्तु नहीं ? "

रखा जा सकता। तुम्हारी शादी हो जानेपर यह विद्या मैं भैयाजीको सिखा आऊँगा।"

वन्दनाने कहा—"ज़रूर। मगर सब विद्याएँ सबके लिए मौजूँ नहीं होतीं, यह भी जान रखिएगा। जीजी मेरी शुरूसे ही भली मानस हैं, अगर मैं होती तो और सबोंको मुझ ही से डरकर चलना पड़ता।"

विप्रदासने कहा—"अर्थात्, डरसे घर-भरके लोगोंका खून पानी हो जाता? कोई ज्यादा आश्चर्यकी बात नहीं। कारण, थोड़े ही समयमें जो नमूना दिखा आई हो, उससे विश्वास करनेको ही जी चाहता है। कमसे कम मा तो जल्दी नहीं भूल सकेंगी।

वन्दना मन-ही-मन ज़रा उत्तेजित हो उठी, बोली—"आपकी माने क्या किया है जानते हैं? मैं ढोक देने लगी तो वे पीछे हट गईं?"

विप्रदासने ज़रा भी आश्चर्य प्रकट न किया, कहा—"मेरी माका सिर्फ़ इतना ही देख आई हो, और कुछ देखनेका मौक़ा नहीं मिला। मिलता तो समझतीं कि इस ज़रा-सी बातपर गुस्सा होकर बगैर खाये-पीये चले आनेके बराबर भूल और कुछ हो ही नहीं सकती।"

वन्दनाने कहा—"मनुष्यके आत्म-सम्मान नामकी भी तो कोई चीज़ होती है?"

विप्रदासने ज़रा हँसकर कहा—"यह आत्म-सम्मानकी धारणा पाई कहाँसे? स्कूल-कॉलेजकी मोटी-मोटी किताबें ही पढ़के तो? मगर मा तो अँगरेजी नहीं जानतीं, किताबें भी नहीं पढ़तीं। उनके जाननेके साथ तुम्हारी धारणा मेल कैसे खा सकती है?"

वन्दनाने कहा—"पर मैं तो सिर्फ़ अपनी ही धारणाको लेकर चल सकती हूँ।"

विप्रदासने कहा—"चलनेसे अधिकांश क्षेत्रोंमें गलती होगी, जैसे कि आज तुमसे हुई है। विदेशकी किताबोंसे जो सीखा है उसीको एकान्त रूपसे मान लेनेके कारण ही घरसे इस तरह चली आ सकीं; नहीं तो नहीं आ सकतीं। बड़े-बूढ़ोंका अकारण असम्मान करनेमें संकोच होता। आत्म-मर्यादा और आत्म-अभिमानमें क्या फ़र्क है सो समझ जातीं।"

वन्दनाने फ़र्कको भले ही न समझा हो, पर यह समझ गई कि उसके आजके आचरणने विप्रदासके हृदयमें चोट पहुँचाई है। और वह अपने लिए नहीं बल्कि अपनी माके लिए।

रखा जा सकता। तुम्हारी शादी हो जानेपर यह विद्या मैं भैयाजीको सिखा आऊँगा।"

वन्दनाने कहा—"ज़रूर। मगर सब विद्याएँ सबके लिए मौजूँ नहीं होतीं, यह भी जान रखिएगा। जीजी मेरी शुरूसे ही भली मानस हैं, अगर मैं होती तो और सबोंको मुझ ही से डरकर चलना पड़ता।"

विप्रदासने कहा—"अर्थात्, डरसे घर-भरके लोगोंका खून पानी हो जाता? कोई ज्यादा आश्चर्यकी बात नहीं। कारण, थोड़े ही समयमें जो नमूना दिखा आई हो, उससे विश्वास करनेको ही जी चाहता है। कमसे कम मा तो जल्दी नहीं भूल सकेंगी।

वन्दना मन-ही-मन ज़रा उत्तेजित हो उठी, बोली—"आपकी माने क्या किया है जानते हैं? मैं ढोक देने लगी तो वे पीछे हट गई?"

विप्रदासने ज़रा भी आश्चर्य प्रकट न किया, कहा—"मेरी माका सिर्फ़ इतना ही देख आई हो, और कुछ देखनेका मौक़ा नहीं मिला। मिलता तो समझतीं कि इस ज़रा-सी बातपर गुस्सा होकर बगैर खाये-पीये चले आनेके बराबर भूल और कुछ हो ही नहीं सकती।"

वन्दनाने कहा—"मनुष्यके आत्म-सम्मान नामकी भी तो कोई चीज़ होती है?"

विप्रदासने ज़रा हँसकर कहा—"यह आत्म-सम्मानकी धारणा पाई कहाँसे? स्कूल-कॉलिजकी मोटी-मोटी किताबें ही पढ़के तो? मगर मा तो अँगरेजी नहीं जानतीं, किताबें भी नहीं पढ़तीं। उनके जाननेके साथ तुम्हारी धारणा मेल कैसे खा सकती है?"

वन्दनाने कहा—"पर मैं तो सिर्फ़ अपनी ही धारणाको लेकर चल सकती हूँ।"

विप्रदासने कहा—"चलनेसे अधिकाश क्षेत्रोंमें गलती होगी, जैसे कि आज तुमसे हुई है। विदेशकी किताबोंसे जो सीखा है उसीको एकान्त रूपसे मान लेनेके कारण ही घरसे इस तरह चली आ सकीं; नहीं तो नहीं आ सकतीं। बड़े-बूढ़ोंका अकारण असम्मान करनेमें संकोच होता। आत्म-मर्यादा और आत्म-अभिमानमें क्या फ़र्क है सो समझ जातीं।"

वन्दनाने फ़र्कको भले ही न समझा हो, पर यह समझ गई कि उसके आजके आचरणने विप्रदासके हृदयमें चोट पहुँचाई है। और वह अपने लिए नहीं बल्कि अपनी माके लिए।

इतनेमें बन्दनाके पिताने पुकारा—"बिटिया, मुझे ज़रा पानी तो दे, पीनेको।"

बन्दना उठी और सुराहीसे पानी देकर वापस अपनी जगहपर बैठ गई। इसके बाद फिर द्विजदासकी बात छेड़नेमें उसे डर मालूम हुआ। अन्य प्रसंग छेड़ते हुए उसने कहा—"जीजीकी सासुके लिए नहीं, पर स्वयं जीजीको अगर मेरे बगैर खाये-पीये चले आनेसे दुःख हुआ हो, तो मुझे भी दुःख होगा। मैं अब यही बात सोच रही हूँ।"

विप्रदासने कहा—"तुम्हारी जीजीको दुःख होगा—यह तो हुई बड़ी बात, और मेरी मा जो लज्जित होंगी, वेदना अनुभव करेंगी—वह हो गई तुच्छ बात। इसके मानी हुए, आदमी असल चीज़को नहीं पहचान सकनेपर कैसी उलटी चिन्ता करने लगता है!"

बन्दनाने कहा—"इसे उलटी चिन्ता क्यों कहते हैं? बल्कि यही तो स्वाभाविक है।"

विप्रदास चुप हो रहे। उनके क्षुण्ण मनका चेहरा बन्दनाने देख लिया।

बाहर अँधेरा होता आ रहा था, कुछ भी दीख नहीं पड़ता, फिर भी खिड़कीके बाहर देखती हुई बन्दना बहुत देर तक चुपचाप बैठी रही। और दिन इस समय गाड़ी हवड़ा पहुँच जाया करती थी, किन्तु आज अब भी तीन घंटेकी देर है। उसने मुँह फेरकर देखा कि विप्रदास जेबमेंसे एक छोटी-सी पॉकेट-बुक निकालकर उसमें कुछ लिख रहे हैं। पूछा—"अच्छा मुखर्जी साहब, एक बातका जवाब दीजिएगा?"

"कौनसी बातका?"

"आप कह रहे थे न, हम लोगोंका आत्म-सम्मान-ज्ञान सिर्फ स्कूल-कॉलेजोंकी किताबोंसे पाई हुई धारणा है। मगर आपकी मा तो स्कूल-कॉलेजमें नहीं पढ़ीं, उनकी धारणा कहाँकी शिक्षा है?"

विप्रदास विस्मित हो गया, पर कुछ बोला नहीं।

बन्दनाने फिर कहा—"उनके सम्बन्धमें अपने कुतूहलको मैं अपने मनसे हटा नहीं पा रही हूँ। वे गुरुजन हैं, मैं इन्कार नहीं करती, पर संसारमें वही बात क्या सब बातोंसे बड़ी है?"

विप्रदास पूर्ववत् स्थिर बैठा रहा।

बन्दना कहने लगी—"आज हम लोग ये उनके घरपर बिन-बुलाये

इतनेमें बन्दनाके पिताने पुकारा—"बिटिया, मुझे ज़रा पानी तो दे, पीनेको।"

बन्दना उठी और सुराहीसे पानी देकर वापस अपनी जगहपर बैठ गई। इसके बाद फिर द्विजदासकी बात छेड़नेमें उसे डर मालूम हुआ। अन्य प्रसंग छेड़ते हुए उसने कहा—"जीजीकी सासुके लिए नहीं, पर स्वयं जीजीको अगर मेरे बगैर खाये-पीये चले आनेसे दुःख हुआ हो, तो मुझे भी दुःख होगा। मैं अब यही बात सोच रही हूँ।"

विप्रदासने कहा—"तुम्हारी जीजीको दुःख होगा—यह तो हुई बड़ी बात, और मेरी मा जो लज्जित होंगी, वेदना अनुभव करेंगी—वह हो गई तुच्छ बात। इसके मानी हुए, आदमी असल चीज़को नहीं पहचान सकनेपर कैसी उलटी चिन्ता करने लगता है!"

बन्दनाने कहा—"इसे उलटी चिन्ता क्यों कहते हैं? बल्कि यही तो स्वाभाविक है।"

विप्रदास चुप हो रहे। उनके क्षुण्ण मनका चेहरा बन्दनाने देख लिया।

बाहर अँधेरा होता आ रहा था, कुछ भी दीख नहीं पड़ता, फिर भी खिड़कीके बाहर देखती हुई बन्दना बहुत देर तक चुपचाप बैठी रही। और दिन इस समय गाड़ी हवड़ा पहुँच जाया करती थी, किन्तु आज अब भी तीन घंटेकी देर है। उसने मुँह फेरकर देखा कि विप्रदास जेबमेंसे एक छोटी-सी पॉकेट-बुक निकालकर उसमें कुछ लिख रहे हैं। पूछा—"अच्छा मुखर्जी साहब, एक बातका जवाब दीजिएगा?"

"कौनसी बातका?"

"आप कह रहे थे न, हम लोगोंका आत्म-सम्मान-ज्ञान सिर्फ स्कूल-कॉलेजोंकी किताबोंसे पाई हुई धारणा है। मगर आपकी मा तो स्कूल-कॉलेजमें नहीं पढ़ीं, उनकी धारणा कहाँकी शिक्षा है?"

विप्रदास विस्मित हो गया, पर कुछ बोला नहीं।

बन्दनाने फिर कहा—"उनके सम्बन्धमें अपने कुतूहलको मैं अपने मनसे हटा नहीं पा रही हूँ। वे गुरुजन हैं, मैं इन्कार नहीं करती, पर संसारमें वही बात क्या सब बातोंसे बड़ी है?"

विप्रदास पूर्ववत् स्थिर बैठा रहा।

बन्दना कहने लगी—"आज हम लोग थे उनके घरपर बिन-बुलाये

विप्रदासने कहा—"जानती होगी शायद कि मैं माका अपना लड़का नहीं हूँ। उनकी अपनी दो सन्तानें हैं—द्विजू और कल्याणी। माने कहा,—'तुम तीनोंको एक साथ एक बिछौनेपर जिन्होंने आदमी बनानेका भार सौंपा था, उन्हींने यह विद्या मुझे दी थी बेटा, और किसीने नहीं'। उसी दिनसे जानता हूँ कि माके इस गंभीर आत्म-सम्मान-ज्ञानने ही किसीको एक दिनके लिए भी यह जानने नहीं दिया कि वे मेरी जननी नहीं हैं, विमाता हैं। समझ सकती हो इसका अर्थ?"

क्षण-भर चुप रहकर फिर वे कहने लगे—"अभिवादनके उत्तरमें किसने कितना हाथ उठाया, कौन कितना पीछे हट गया, नमस्कारके प्रति-नमस्कारमें किसने कितना सिर नवाया—इस बातको लेकर मर्यादाकी लड़ाई सभी देशोंमें है, अहंकारके नशेकी खुराक तुम्हें अपनी पाठ्य-पुस्तकोंके पन्ने-पन्नेमें मिलेगी, किन्तु मा न होकर भी पराये लड़केकी मा होकर जिस दिन माने हमारे बड़े परिवारमें प्रवेश किया था, उस दिन आश्रित आत्मीय-परिजनोंके प्रत्येक गलेमेंसे विषकी थैली मानो बाहर निकली पड़ती थी। परन्तु जिस चीज़से उन्होंने सारे विषको अमृतमें परिणत कर दिया, वह गृहस्वामिनीका अभिमान नहीं था, गृहिणी-पनेकी जबरदस्ती नहीं थी, बल्कि माकी स्वकीय मर्यादा थी। वह इतनी ऊँची है कि उसे कोई लंघन नहीं कर सका। परन्तु यह तत्त्व है सिर्फ़ हमारे ही देशमें। विदेशी तो इस बातकी खबर ही नहीं रखते, वे अखबारोंकी खबरें देखकर ही इन लोगोंको 'दासी' कह दिया करते हैं, अन्तःपुरकी बेड़ी पड़ी बाँदी बताते हैं। बाहरसे शायद ऐसा ही दीख पड़ता हो—उन्हें मैं दोष नहीं देता—किन्तु घरकी दास-दासियोंकी भी सेवाके नीचे अन्नपूर्णाकी राज्येश्वरी मूर्तिपर यदि उन लोगोंकी दृष्टि नहीं पड़ती तो न सही, पर क्या तुम लोगोंकी भी नहीं पड़ेगी?"

वन्दना अभिभूत दृष्टिसे विप्रदासके मुँहकी ओर देखती रह गई।

बैरिस्टर साहब अकस्मात् जोर-से बोल उठे—"ट्रेन हवड़ा-प्लाटफॉर्ममें 'इन' कर रही है।"

वन्दनाके पिताको शायद तन्द्रा आगई थी, वे चौंककर बोले—"जान बची।"

वन्दनाने मृदु कण्ठसे चुपकेसे कहा—"मुझे कलकत्ते उतरनेमें अब अच्छा नहीं लग रहा है, मुखर्जी साहब! इच्छा होती है कि आपकी माके पास लौट

विप्रदासने कहा—"जानती होगी शायद कि मैं माका अपना लड़का नहीं हूँ। उनकी अपनी दो सन्तानें हैं—द्विजू और कल्याणी। माने कहा,—'तुम तीनोंको एक साथ एक बिछौनेपर जिन्होंने आदमी बनानेका भार सौंपा था, उन्हींने यह विद्या मुझे दी थी बेटा, और किसीने नहीं'। उसी दिनसे जानता हूँ कि माके इस गंभीर आत्म-सम्मान-ज्ञानने ही किसीको एक दिनके लिए भी यह जानने नहीं दिया कि वे मेरी जननी नहीं हैं, विमाता हैं। समझ सकती हो इसका अर्थ?"

क्षण-भर चुप रहकर फिर वे कहने लगे—"अभिवादनके उत्तरमें किसने कितना हाथ उठाया, कौन कितना पीछे हट गया, नमस्कारके प्रति-नमस्कारमें किसने कितना सिर नवाया—इस बातको लेकर मर्यादाकी लड़ाई सभी देशोंमें है, अहंकारके नशेकी खुराक तुम्हें अपनी पाठ्य-पुस्तकोंके पन्ने-पन्नेमें मिलेगी, किन्तु मा न होकर भी पराये लड़केकी मा होकर जिस दिन माने हमारे बड़े परिवारमें प्रवेश किया था, उस दिन आश्रित आत्मीय-परिजनोंके प्रत्येक गलेमेंसे विषकी थैली मानों बाहर निकली पड़ती थी। परन्तु जिस चीज़से उन्होंने सारे विषको अमृतमें परिणत कर दिया, वह गृहस्वामिनीका अभिमान नहीं था, गृहिणी-पनेकी जबरदस्ती नहीं थी, बल्कि माकी स्वकीय मर्यादा थी। वह इतनी ऊँची है कि उसे कोई लंघन नहीं कर सका। परन्तु यह तत्त्व है सिर्फ़ हमारे ही देशमें। विदेशी तो इस बातकी खबर ही नहीं रखते, वे अखबारोंकी खबरें देखकर ही इन लोगोंको 'दासी' कह दिया करते हैं, अन्तःपुरकी बेड़ी पड़ी बाँदी बताते हैं। बाहरसे शायद ऐसा ही दीख पड़ता हो—उन्हें मैं दोष नहीं देता—किन्तु घरकी दास-दासियोंकी भी सेवाके नीचे अन्नपूर्णाकी राज्येश्वरी मूर्तिपर यदि उन लोगोंकी दृष्टि नहीं पड़ती तो न सही, पर क्या तुम लोगोंकी भी नहीं पड़ेगी?"

वन्दना अभिभूत दृष्टिसे विप्रदासके मुँहकी ओर देखती रह गई।

बैरिस्टर साहब अकस्मात् जोर-से बोल उठे—"ट्रेन हवड़ा-प्लाटफॉर्ममें 'इन' कर रही है।"

वन्दनाके पिताको शायद तन्द्रा आगई थी, वे चौंककर बोले—"जान बची।"

वन्दनाने मृदु कण्ठसे चुपकेसे कहा—"मुझे कलकत्ते उतरनेमें अब अच्छा नहीं लग रहा है, मुखर्जी साहब! इच्छा होती है कि आपकी माके पास लौट

कमरे हैं, कई बरामदे हैं, सब-कुछ साफ-सुथरा चमक रहा है। दरवाजेके बाहर एक अधेड़ उमरकी विधवा स्त्री खड़ी थी; देखनेमें शरीफ-घरानेकी-सी लगती है; उसके गलेमें आँचल डालकर* प्रणाम करते ही बन्दना मारे संकोचके चंचल हो उठी।

उसने कहा—"जीजी-बाई, आपके लिए ही खड़ी हूँ, चलिए, नहान-घर दिखा दूँ। मैं इस घरकी दासी हूँ।"

बन्दनाने पूछा—"बापूजी उठ गये?"

"नहीं, कल उन्हें सोनेमें देर हो गई थी, शायद उठनेमें भी देर हो।"

"हम लोगोंके साथ और भी दो जने जो आये थे वे?"

"नहीं, वे भी अभी नहीं उठे।"

"तुम्हारे बड़े बाबू साहब? वे भी सो रहे हैं?"

दासीने हँसकर कहा—"नहीं, वे गंगास्नान संध्या-पूजासे निवृत्त होकर आफिसमें चले गये हैं। उन्हें खबर भेजूँ क्या?"

बन्दनाने कहा—"नहीं, उसकी जरूरत नहीं।"

नहान-घर वहाँसे कुछ दूर है, एक छोटेसे बरामदेको पार करके जाना पड़ता है। बन्दनाने जाते-जाते कहा—"तुम्हारे यहाँ 'बाथरूम' सोनेके कमरेके पास नहीं रह सकता, क्यों?"

दासीने कहा—"नहीं। मा सा'ब कभी-कभी कालीजीके दर्शनके लिए कलकत्ते आती हैं तो वे इसी मकानमें रहती हैं न, इसीसे वैसा यहाँ नहीं हो सकता।"

बन्दनाने मन-ही-मन कहा, यहाँ भी वही प्रबल-प्रतापी मा! आचार-अनाचारका कठोर शासन! वह वापस जाकर धोती-अंगौछा कुड़ती वगैरह ले आई; फिर बोली—"यहाँ दो-चार रोज रहना पड़ा तो तुम्हें क्या कहकर बुलाया करूँ? यहाँ तुम्हारे सिवा शायद और कोई दासी नहीं है?"

उसने कहा—"है, पर उसे बहुत काम रहता है। ऊपर आनेका समय ही नहीं मिलता। जो भी कुछ ज़रूरत हो मुझहीसे कहिएगा, जीजी-बाई, मेरा नाम अन्नदा है। लेकिन मैं गँवई-गाँवकी हूँ, सम्भव है, मुझसे गल्तियाँ हो जायँ, कुछ खयाल न कीजिएगा।"

---

* बँगालमें स्त्रियाँ देवी-देवता और ब्राह्मण या पूजनीय जनोंको इसी तरह नमस्कार करती हैं।

कमरे हैं, कई बरामदे हैं, सब-कुछ साफ-सुथरा चमक रहा है। दरवाजेके बाहर एक अधेड़ उमरकी विधवा स्त्री खड़ी थी; देखनेमें शरीफ-घरानेकी-सी लगती है; उसके गलेमें आँचल डालकर* प्रणाम करते ही बन्दना मारे संकोचके चंचल हो उठी।

उसने कहा—"जीजी-बाई, आपके लिए ही खड़ी हूँ, चलिए, नहान-घर दिखा दूँ। मैं इस घरकी दासी हूँ।"

बन्दनाने पूछा—"बापूजी उठ गये ?"

"नहीं, कल उन्हें सोनेमें देर हो गई थी, शायद उठनेमें भी देर हो।"

"हम लोगोंके साथ और भी दो जने जो आये थे वे ?"

"नहीं, वे भी अभी नहीं उठे।"

"तुम्हारे बड़े बाबू साहब ? वे भी सो रहे हैं ?"

दासीने हँसकर कहा—"नहीं, वे गंगास्नान संध्या-पूजासे निवृत्त होकर आफिसमें चले गये हैं। उन्हें खबर भेजूँ क्या ?"

बन्दनाने कहा—"नहीं, उसकी जरूरत नहीं।"

नहान-घर वहाँसे कुछ दूर है, एक छोटेसे बरामदेको पार करके जाना पड़ता है। बन्दनाने जाते-जाते कहा—"तुम्हारे यहाँ 'बाथरूम' सोनेके कमरेके पास नहीं रह सकता, क्यों ?"

दासीने कहा—"नहीं। मा सा'ब कभी-कभी कालीजीके दर्शनके लिए कलकत्ते आती हैं तो वे इसी मकानमें रहती हैं न, इसीसे वैसा यहाँ नहीं हो सकता।"

बन्दनाने मन-ही-मन कहा, यहाँ भी वही प्रबल-प्रतापी मा! आचार-अनाचारका कठोर शासन! वह वापस जाकर धोती-अंगौछा कुड़ती वगैरह ले आई; फिर बोली—"यहाँ दो-चार रोज रहना पड़ा तो तुम्हें क्या कहकर बुलाया करूँ ? यहाँ तुम्हारे सिवा शायद और कोई दासी नहीं है ?"

उसने कहा—"है, पर उसे बहुत काम रहता है। ऊपर आनेका समय ही नहीं मिलता। जो भी कुछ ज़रूरत हो मुझहीसे कहिएगा, जीजी-बाई, मेरा नाम अन्नदा है। लेकिन मैं गँवई-गाँवकी हूँ, सम्भव है, मुझसे गल्तियाँ हो जायँ, कुछ खयाल न कीजिएगा।"

---

* बँगालमें स्त्रियाँ देवी-देवता और ब्राह्मण या पूजनीय जनोंको इसी तरह नमस्कार करती हैं।

वह मन-ही-मन मर-मर गई है—यह झूठ भी नहीं है, पर इस घरमें अकेली खड़ी होकर उन सब बातोंको सत्य मान लेनेमें भी आज उसे संकोच होने लगा।

उसके बाहर आनेपर अन्नदाने हँसते हुए कहा—“ बहुत देर हो गई जीजी-बाई, करीब दो घंटे हुए—सब नीचे रसोईघरमें आपकी बाट देख रहे हैं। चलिए। ”

“ तुम्हारे बड़े बाबू ऑफिससे आ गये ? ”

“ हाँ, वे भी नीचे आ गये हैं। ”

“ शायद हम लोगोंके साथ नहीं खायेंगे ? ”

अन्नदा हँसती हुई बोली—“ खायेंगे, तो भी वही दोपहर बाद, जीजी और आज सो भी नहीं। एकादशी है,—शामके बाद शायद कुछ फल-फलहरी खायेंगे। ”

वन्दना किसी तरह मानो समझ गई थी कि यह स्त्री इस घरमें ठीक दासी जैसी नहीं है; उसने कहा—“ वे तो कोई ब्राह्मणके घरकी विधवा नहीं हैं, फिर एकादशीका उपवास भला क्यों करने लगे ? कल रेलमें एकादशीका न सही, दशमीका उपास तो उनका यों ही हो चुका है। ”

अन्नदाने कहा—सो होने दो, उपाससे उन्हें कोई तकलीफ नहीं होती। मा कहा करती हैं कि पहले जनममें तपस्या करके विपिनने इस जनममें उपवास-सिद्धिका वर पाया है। उनका खाना देखकर दंग रह जाना पड़ता है। ”

वन्दनाने नीचे जाकर देखा कि उन लोगोंके अभ्यासके अनुसार वहाँ चाय, पावरोटी, अण्डे आदि सब चीजें टेबिलपर सजी हुई हैं; और पिता तथा सस्त्रीक वैरिस्टर सा० भूखसे चंचल हो रहे हैं। अधैर्य उन लोगोंका लगभग शेष सीमा तक पहुँच चुका है। वन्दनाको देखते ही अखबार एक तरफ फेंककर पिताने शिकायतके स्वरमें कहा—“ अह्—इतनी देर कर ली बेटी, इस जून तो अब कोई काम होता नहीं दीखता। ”

विप्रदास पास ही बैठे थे, वन्दनाने पूछा—“ मुखर्जी साहब, आप नहीं पीयेंगे ? ”

विप्रदास बातको समझ गये, हँसके बोले—“ चाय मैं नहीं पीता, सिर्फ दाल-भात खाया करता हूँ। उसका अभी वक्त नहीं हुआ,—मेरे लिए चिन्ता मत करो, तुम बैठ जाओ। ”

वन्दनाने इसका उत्तर नहीं दिया, पिता और अन्य दोनों अतिथियोंको

वह मन-ही-मन मर-मर गई है—यह झूठ भी नहीं है, पर इस घरमें अकेली खड़ी होकर उन सब बातोंको सत्य मान लेनेमें भी आज उसे संकोच होने लगा।

उसके बाहर आनेपर अन्नदाने हँसते हुए कहा—" बहुत देर हो गई जीजी-बाई, करीब दो घंटे हुए—सब नीचे रसोईघरमें आपकी बाट देख रहे हैं। चलिए।"

" तुम्हारे बड़े बाबू ऑफिससे आ गये ?"

" हाँ, वे भी नीचे आ गये हैं।"

" शायद हम लोगोंके साथ नहीं खायँगे ?"

अन्नदा हँसती हुई बोली—" खायँगे, तो भी वही दोपहर बाद, जीजी और आज सो भी नहीं। एकादशी है,—शामके बाद शायद कुछ फल-फलहरी खायँगे।"

वन्दना किसी तरह मानो समझ गई थी कि यह स्त्री इस घरमें ठीक दासी जैसी नहीं है; उसने कहा—" वे तो कोई ब्राह्मणके घरकी विधवा नहीं हैं, फिर एकादशीका उपवास भला क्यों करने लगे ? कल रेलमें एकादशीका न सही, दशमीका उपास तो उनका यों ही हो चुका है।"

अन्नदाने कहा—सो होने दो, उपाससे उन्हें कोई तकलीफ नहीं होती। मा कहा करती हैं कि पहले जनममें तपस्या करके विपिनने इस जनममें उपवास-सिद्धिका वर पाया है। उनका खाना देखकर दंग रह जाना पड़ता है।"

वन्दनाने नीचे जाकर देखा कि उन लोगोंके अभ्यासके अनुसार वहाँ चाय, पावरोटी, अण्डे आदि सब चीजें टेबिलपर सजी हुई हैं; और पिता तथा सस्त्रीक बैरिस्टर सा० भूखसे चंचल हो रहे हैं। अधैर्य उन लोगोंका लगभग शेष सीमा तक पहुँच चुका है। वन्दनाको देखते ही अखबार एक तरफ फेंककर पिताने शिकायतके स्वरमें कहा—" अह्—इतनी देर कर ली बेटी, इस जून तो अब कोई काम होता नहीं दीखता।"

विप्रदास पास ही बैठे थे, वन्दनाने पूछा—" मुखर्जी साहब, आप नहीं पीयेंगे ?"

विप्रदास बातको समझ गये, हँसके बोले—" चाय मैं नहीं पीता, सिर्फ दाल-भात खाया करता हूँ। उसका अभी वक्त नहीं हुआ,—मेरे लिए चिन्ता मत करो, तुम बैठ जाओ।"

वन्दनाने इसका उत्तर नहीं दिया, पिता और अन्य दोनों अतिथियोंको

रायसाहब कपड़े बदलनेके लिए अपने कमरेमें चले गये। बन्दनाकी अपने कमरेके सामने अन्नदासे भेंट हो गई। अन्नदाने हँसमुख हो शिकायतके स्वरमें उससे कहा—" जीजीबाई, सारा दिन तो बिना खाये-पीये बिता दिया,—अब जरा जल्दीसे हाथ-मुँह धो लीजिए, आपके लिए फल-फलहरी सब आ गई है, तब तक मैं उसे तैयार कर रखती हूँ। क्यों ठीक है न ?"

" मगर बड़े बाबू—मुखर्जी साहब ? वे ?"

अन्नदाने कहा—" उनके लिए व्याकुल होनेकी जरूरत नहीं जीजी-बाई, यह तो उनका रोजका हाल है। खानेकी वनिस्वत न-खाना ही उनका नियम है।"

" मगर वे हैं कहाँ ?"

" दक्षिणेश्वर कालीजीके दर्शन करने गये हैं। आते ही होंगे।"

बन्दनाने कहा—" अच्छा तो ठीक है, उनके आनेपर तैयारी करना। लेकिन और सब लोग ? उनका क्या इन्तजाम हुआ ? अच्छा, चलो तो अन्नदा, तुम लोगोंका रसोईघर देख आऊँ।"

अन्नदाने कहा—" चलिए, लेकिन इस जून उन लोगोंके खाने-पीनेका इन्तजाम रसोई-घरमें नहीं हुआ, जीजीबाई, होटलसे इन्तजाम किया गया है,—वहींसे सब सामान आयेगा।"

बन्दना चकित रह गई; बोली—" यह कैसी बात ? यह सलाह तुम लोगोंको किसने दी ?"

" बड़े बाबू खुद ही हुकम दे गये हैं।"

" मगर वहाँका अखाद्य-कुखाद्य ये लोग खायेंगे कहाँ ? इसी मकानमें ? तुम लोगोंकी मा सुनेंगी तो क्या कहेंगी ?"

अन्नदा सकपका-सी गई, बोली—" नहीं, वे नहीं सुन पायेंगी। नीचेके एक कमरेमें इन्तजाम किया गया है। बासन-बरतन होटलवाले ही तो आयेंगे, कोई दिक्कत न होगी।"

बन्दनाने कहा—" हुकम तो दे गये हैं, पर उसे तामील किसने किया ? उसके पास एक बार मुझे ले जा सकती हो ?"

" चलिए।"

मुखर्जियोंका एक बड़ा-भारी तिजारती कारोबार कलकत्तेमें चालू है। नीचेके मंजिलके तीन-चार कमरोंमें उसका दफ्तर है; मुनीम-गुमाश्ते, क्लार्क, दरबान,

रायसाहब कपड़े बदलनेके लिए अपने कमरेमें चले गये। वन्दनाकी अपने कमरेके सामने अन्नदासे भेंट हो गई। अन्नदाने हँसमुख हो शिकायतके स्वरमें उससे कहा—"जीजीबाई, सारा दिन तो बिना खाये-पीये बिता दिया,—अब जरा जल्दीसे हाथ-मुँह धो लीजिए, आपके लिए फल-फलहरी सब आ गई है, तब तक मैं उसे तैयार कर रखती हूँ। क्यों ठीक है न ?"

"मगर बड़े बाबू—मुखर्जी साहब ? वे ?"

अन्नदाने कहा—"उनके लिए व्याकुल होनेकी जरूरत नहीं जीजी-बाई, यह तो उनका रोजका हाल है। खानेकी बनिस्बत न-खाना ही उनका नियम है।"

"मगर वे हैं कहाँ ?"

"दक्षिणेश्वर कालीजीके दर्शन करने गये हैं। आते ही होंगे।"

वन्दनाने कहा—"अच्छा तो ठीक है, उनके आनेपर तैयारी करना। लेकिन और सब लोग ? उनका क्या इन्तजाम हुआ ? अच्छा, चलो तो अन्नदा, तुम लोगोंका रसोईघर देख आऊँ।"

अन्नदाने कहा—"चलिए, लेकिन इस जून उन लोगोंके खाने-पीनेका इन्तजाम रसोई-घरमें नहीं हुआ, जीजीबाई, होटलसे इन्तजाम किया गया है,—वहींसे सब सामान आयेगा।"

वन्दना चकित रह गई; बोली—"यह कैसी बात ? यह सलाह तुम लोगोंको किसने दी ?"

"बड़े बाबू खुद ही हुकम दे गये हैं।"

"मगर वहाँका अखाद्य-कुखाद्य ये लोग खायेंगे कहाँ ? इसी मकानमें ? तुम लोगोंकी मा सुनेंगी तो क्या कहेंगी ?"

अन्नदा सकपका-सी गई, बोली—"नहीं, वे नहीं सुन पायेंगी। नीचेके एक कमरेमें इन्तजाम किया गया है। बासन-बरतन होटलवाले ही तो आयेंगे, कोई दिक्कत न होगी।"

वन्दनाने कहा—"हुकम तो दे गये हैं, पर उसे तामील किसने किया ? उसके पास एक बार मुझे ले जा सकती हो ?"

"चलिए।"

मुखर्जियोंका एक बड़ा-भारी तिजारती कारोबार कलकत्तेमें चालू है। नीचेके मंजिलके तीन-चार कमरोंमें उसका दफ्तर है; मुनीम-गुमाश्ते, क्लार्क, दरबान,

बन्दनाने कहा—“ जिनका बिना डिनरके काम ही नहीं चल सकता उन्हें किसीके साथ होटल भिजवा दीजिएगा। बिल्के रुपये मैं दूँगी।”

“ मजाक नहीं है बन्दना, शायद यह अच्छा नहीं हुआ।”

“ शायद अच्छा तब होता जब उन सब चीजोंको घर मँगाया जाता ? मा सुनतीं तो क्या कहतीं—बताइए तो ?”

विप्रदासने यह बात सोची नहीं हो, सो बात नहीं; पर वह कुछ तय नहीं कर पाये थे, बोले—“ वे जान नहीं पातीं।”

बन्दनाने सिर हिलाकर कहा—“ जान जातीं। मैं चिट्ठी लिखके जता देती।”

“ क्यों ?”

“ क्यों ? जो बात कभी नहीं की, दो दिन इन बाहरके लोगोंको खुश करनेके लिए क्यों आप करें ? हरगिज नहीं।”

सुनकर विप्रदास सिर्फ खुश ही नहीं हुआ, आश्चर्यान्वित भी हुआ।

कुछ देर चुप रहकर वह बोला—“ मगर तुमने जो कल सुबहसे कुछ नहीं खाया बन्दना ? गुस्सा क्या नहीं उतरेगा ?” उसके कंठ-स्वरमें अबकी बार कुछ स्नेहका पुट लगा हुआ था।

बन्दनाने मृदु कण्ठसे जवाब दिया—“ गुस्सा दिलाया क्यों था ? लेकिन सुनिए, आपके खानेकी फल-फलहरी सब आ चुकी है, तब तक आप, संध्या-पूजा कर लीजिए, इतनेमें मैं बनार-बुनूरकर तैयार कर देती हूँ। लेकिन यदि और किसीने किया तो मैं आज भी नहीं खाऊँगी, कहे देती हूँ।”

“ अच्छा, मैं आया।”—कहकर विप्रदास ऊपर चला गया।

लगभग घंटे-भर बाद बन्दना एक सफेद संगमरमरके थालमें फल-फलहरी और कुछ मिठाई लेकर विप्रदासके कमरेमें जा खड़ी हुई। अन्नदाके हाथमें आसन और पानीका गिलास था। उसने पानी छिड़ककर और सावधानीसे पोंछके आसन बिछा दिया।

विप्रदासने बन्दनाकी ओर देखकर विस्मयके साथ कहा—“ तुम क्या फिर अभी नहाई हो ?”

“ आप खाने तो बैठिए।”—कहकर उसने थाल सामने रख दिया।

बन्दनाने कहा—“ जिनका बिना डिनरके काम ही नहीं चल सकता उन्हें किसीके साथ होटल भिजवा दीजिएगा। बिल्के रुपये मैं दूँगी। ”

“ मजाक नहीं है बन्दना, शायद यह अच्छा नहीं हुआ। ”

“ शायद अच्छा तब होता जब उन सब चीजोंको घर मँगाया जाता ? मा सुनतीं तो क्या कहतीं—बताइए तो ? ”

विप्रदासने यह बात सोची नहीं हो, सो बात नहीं; पर वह कुछ तय नहीं कर पाये थे, बोले—“ वे जान नहीं पातीं। ”

बन्दनाने सिर हिलाकर कहा—“ जान जातीं। मैं चिट्ठी लिखके जता देती। ”

“ क्यों ? ”

“ क्यों ? जो बात कभी नहीं की, दो दिन इन बाहरके लोगोंको खुश करनेके लिए क्यों आप करें ? हरगिज नहीं। ”

सुनकर विप्रदास सिर्फ खुश ही नहीं हुआ, आश्चर्यान्वित भी हुआ।

कुछ देर चुप रहकर वह बोला—“ मगर तुमने जो कल सुबहसे कुछ नहीं खाया बन्दना ? गुस्सा क्या नहीं उतरेगा ? ” उसके कंठ-स्वरमें अबकी बार कुछ स्नेहका पुट लगा हुआ था।

बन्दनाने मृदु कण्ठसे जवाब दिया—“ गुस्सा दिलाया क्यों था ? लेकिन सुनिए, आपके खानेकी फल-फलहरी सब आ चुकी है, तब तक आप, संध्या-पूजा कर लीजिए, इतनेमें मैं बनार-बुनूरकर तैयार कर देती हूँ। लेकिन यदि और किसीने किया तो मैं आज भी नहीं खाऊँगी, कहे देती हूँ। ”

“ अच्छा, मैं आया। ”—कहकर विप्रदास ऊपर चला गया।

लगभग घंटे-भर बाद बन्दना एक सफेद संगमरमरके थालमें फल-फलहरी और कुछ मिठाई लेकर विप्रदासके कमरेमें जा खड़ी हुई। अन्नदाके हाथमें आसन और पानीका गिलास था। उसने पानी छिड़ककर और सावधानीसे पोंछके आसन बिछा दिया।

विप्रदासने बन्दनाकी ओर देखकर विस्मयके साथ कहा—“ तुम क्या फिर अभी नहाई हो ? ”

“ आप खाने तो बैठिए। ”—कहकर उसने थाल सामने रख दिया।

जान लिया है। यह इतनी बड़ी दुर्घटना होती कि जीजी मुझे कभी भी क्षमा नहीं करतीं, हमेशा अभिसम्पात करती रहतीं कि बन्दनाके लिए ही ऐसा हुआ। इसीसे ऐसा काम मैं आपको हरगिज नहीं करने दे सकती थी।"

विप्रदासने कहा—"तुम परम आत्मीय हो, रिश्तेदारोंमें सबसे बड़ी हो। यह तुम्हारे लायक बात है। पर, दुबकाचोरी बगैर किये तुम्हारे हाथका मैं खा सकता हूँ कि नहीं, यह बात उस आदमीसे पूछी थी क्या? नहीं तो अब जाकर मालूम कर आओ, तब तक मैं इन्तजार करूँगा।" इतना कहकर उसने हँसते हुए सामनेके थालको जरा अलग हटा दिया।

बन्दनाका चेहरा पहले तो मारे शर्मके सुर्ख हो उठा; फिर अपनेको सम्हाल-कर उसने कहा—"नहीं, यह बात मैं उससे पूछने नहीं जा सकती, आपको खानेकी ज़रूरत नहीं।"

विप्रदासने कहा—"पर मुश्किल तो यह है कि अपने घरमें मैं तुम्हें उपासी भी तो नहीं रख सकता।" यह कहते हुए उन्होंने खाना शुरू कर दिया।

बन्दनाने क्षण-भर चुप रहकर पूछा—"लेकिन इसके बाद क्या कीजिएगा?"

"घर जाकर गोबर खाके प्रायश्चित्त करूँगा।"—कहकर वे हँस दिये। परन्तु उनके हँसनेपर भी बन्दना यह समझ न सकनेके कारण कि सच है या परिहास, स्तब्ध रह गई।

विप्रदासने कहा—"माके साथ तो समझौता कुछ न कुछ होगा ही, पर तुम्हारी जीजीकी सजासे जो छुटकारा पाऊँगा, वह उससे भी बड़ी बात होगी।"—इतना कहकर फिर हँसकर कहा, "क्यों, विश्वास नहीं हुआ? अच्छा, पहले ब्याह हो जाने दो, तब तुम मुखर्जी साहबकी बात समझ जाओगी।"—कहते हुए वे भोजनका थाल बिलकुल सफा करके उठ खड़े हुए।

उधर डिनर तो रद्द हुई, पर अन्यान्य रुचिकर खाद्योंके आयोजनमें अवहेला नहीं की गई। लिहाजा, परितृप्तिके लिहाजसे कुछ भी कमी नहीं रही। परन्तु सब कामोंसे छुट्टी पाकर बन्दना जब बिस्तरपर लेटी तब सोचने लगी, उसके सम्बन्धमें विप्रदासका आचरण अप्रत्याशित भी नहीं था और शायद उसे बेजा भी नहीं कहा जा सकता; और निकट-आत्मीय या अपना होनेपर भी जिस वजहसे अबतक उनसे घनिष्ठता और परिचय नहीं था वह भी इतने दिनोंकी पुरानी कहानी है कि उससे नये प्रकारसे आघात अनुभव करना बाहुल्य नहीं बल्कि विडम्बना है। बन्दनाके ढोक देते वक्त विप्रदासकी मा जो

जान लिया है। यह इतनी बड़ी दुर्घटना होती कि जीजी मुझे कभी भी क्षमा नहीं करतीं, हमेशा अभिसम्पात करती रहतीं कि बन्दनाके लिए ही ऐसा हुआ। इसीसे ऐसा काम मैं आपको हरगिज नहीं करने दे सकती थी।"

विप्रदासने कहा—"तुम परम आत्मीय हो, रिश्तेदारोंमें सबसे बड़ी हो। यह तुम्हारे लायक बात है। पर, दुबकाचोरी बगैर किये तुम्हारे हाथका मैं खा सकता हूँ कि नहीं, यह बात उस आदमीसे पूछी थी क्या? नहीं तो अब जाकर मालूम कर आओ, तब तक मैं इन्तजार करूँगा।" इतना कहकर उसने हँसते हुए सामनेके थालको जरा अलग हटा दिया।

बन्दनाका चेहरा पहले तो मारे शर्मके सुर्ख हो उठा; फिर अपनेको सम्हाल-कर उसने कहा—"नहीं, यह बात मैं उससे पूछने नहीं जा सकती, आपको खानेकी ज़रूरत नहीं।"

विप्रदासने कहा—"पर मुश्किल तो यह है कि अपने घरमें मैं तुम्हें उपासी भी तो नहीं रख सकता।" यह कहते हुए उन्होंने खाना शुरू कर दिया।

बन्दनाने क्षण-भर चुप रहकर पूछा—"लेकिन इसके बाद क्या कीजिएगा?"

"घर जाकर गोबर खाके प्रायश्चित्त करूँगा।"—कहकर वे हँस दिये। परन्तु उनके हँसनेपर भी बन्दना यह समझ न सकनेके कारण कि सच है या परिहास, स्तब्ध रह गई।

विप्रदासने कहा—"माके साथ तो समझौता कुछ न कुछ होगा ही, पर तुम्हारी जीजीकी सजासे जो छुटकारा पाऊँगा, वह उससे भी बड़ी बात होगी।"—इतना कहकर फिर हँसकर कहा, "क्यों, विश्वास नहीं हुआ? अच्छा, पहले ब्याह हो जाने दो, तब तुम मुखर्जी साहबकी बात समझ जाओगी।"—कहते हुए वे भोजनका थाल बिलकुल सफा करके उठ खड़े हुए।

उधर डिनर तो रद्द हुई, पर अन्यान्य रुचिकर खाद्योंके आयोजनमें अवहेला नहीं की गई। लिहाजा, परितृप्तिके लिहाजसे कुछ भी कमी नहीं रही। परन्तु सब कामोंसे छुट्टी पाकर बन्दना जब बिस्तरपर लेटी तब सोचने लगी, उसके सम्बन्धमें विप्रदासका आचरण अप्रत्याशित भी नहीं था और शायद उसे वेजा भी नहीं कहा जा सकता; और निकट-आत्मीय या अपना होनेपर भी जिस वजहसे अबतक उनसे घनिष्ठता और परिचय नहीं था वह भी इतने दिनोंकी पुरानी कहानी है कि उससे नये प्रकारसे आघात अनुभव करना बाहुल्य नहीं बल्कि विडम्बना है। बन्दनाके ढोक देते वक्त विप्रदासकी मा जो

उसका कुतूहल अदम्य हो उठा। उसने समझा कि सहसा भेंट हो जानेसे मारे शर्मके वह मर मिटेगी, इतनी रातमें कमरेमेंसे निकलकर नीचे आनेका कोई कारण हीं नहीं समझाया जा सकेगा; मगर फिर भी वह अपने आग्रहको न दबा सकी।

ध्यानकी बात बन्दनाने पुस्तकोंमें पढ़ी है, तसवीरोंमें देखी है, किन्तु इसके पहले कभी उसने अपनी आँखोंसे किसीको ध्यानस्थ नहीं देखा। निःशब्द रात्रिके निःसंग अंधकारमें वही दृश्य आज उसके दृष्टिगोचर हुआ। विप्रदासकी दोनों आँखें मुँदी हुई हैं, उसका बलिष्ठ दीर्घ शरीर आसनपर स्तब्ध होकर विराज रहा है, ऊपरकी बत्तीका प्रकाश उसके मुँह और ललाटपर पड़कर प्रतिफलित हो रहा है,—कोई खास बात नहीं थी। शायद और किसी वक्त देखनेसे बन्दनाको हँसी आ जाती, किन्तु तन्द्रा-जड़ित आँखोंसे आज इस मूर्तिने उसे मुग्ध कर दिया। इस तरह वह कितनी देरतक खड़ी रही, उसे होश नहीं; किन्तु सहसा जब चैतन्य हुआ तब पूर्वका आकाश अरुण हो गया था, और नौकर-चाकर जागने ही वाले थे। तकदीर अच्छी थी जो इस बीचमें कोई जगकर उसके सामने नहीं आ पड़ा। अब वह नहीं ठहरी, धीरे-धीरे ऊपर जाकर अपने कमरमें जा बिस्तरपर पड़ रही और पड़ते ही गहरी नींद आनेमें उसे ज़रा भी देर न लगी।

दरवाजेपर हाथ ठोककर अन्नदाने पुकारा—"जीजी-बाई, बहुत दिन चढ़ गया है, उठोगी नहीं?"

बन्दना व्यस्तताके साथ दरवाजा खोलकर बाहर आ खड़ी हुई; देखा कि वास्तवमें बहुत अबेर हो चुकी है, लज्जित होकर उसने पूछा—"वे सब शायद आज भी मेरी बाट देखते होंगे? जरा सबेरे मुझे जगा क्यों नहीं दिया? नहा-धोकर घंटेभरसे पहले तो तैयार न हो सकूँगी अन्नदा?"

उसके विपन्न चेहरेकी तरफ देखकर अन्नदाने हँसते हुए कहा—"डरनेकी कोई बात नहीं जीजी-बाई, आज वे लोग सब्र नहीं कर सके, सब खतम कर चुके हैं,—अब जब तक चाहो नहाओ-धोओ, कोई टोकेगा नहीं।"

सुनकर बन्दनाके जीमें जी आया। वह हँसमुख हो बोली—"सचमुच ही तुम लोगोंकी बहुत-सी बातें मुझे पसन्द नहीं, पर यह पसन्द है। सब दल बाँधके घड़ीका काँटा मिलाकर निगलने नहीं बैठ जाते, इससे बड़ा आराम मिलता है।"

अन्नदाने कहा—"पर सबेरे क्या आपको भूख नहीं लगती जीजी-बाई?"

उसका कुतूहल अदम्य हो उठा। उसने समझा कि सहसा भेंट हो जानेसे मारे शर्मके वह मर मिटेगी, इतनी रातमें कमरेमेंसे निकलकर नीचे आनेका कोई कारण हीं नहीं समझाया जा सकेगा; मगर फिर भी वह अपने आग्रहको न दबा सकी।

ध्यानकी बात बन्दनाने पुस्तकोंमें पढ़ी है, तसवीरोंमें देखी है, किन्तु इसके पहले कभी उसने अपनी आँखोंसे किसीको ध्यानस्थ नहीं देखा। निःशब्द रात्रिके निःसंग अंधकारमें वही दृश्य आज उसके दृष्टिगोचर हुआ। विप्रदासकी दोनों आँखें मुँदी हुई हैं, उसका बलिष्ठ दीर्घ शरीर आसनपर स्तब्ध होकर विराज रहा है, ऊपरकी बत्तीका प्रकाश उसके मुँह और ललाटपर पड़कर प्रतिफलित हो रहा है,—कोई खास बात नहीं थी। शायद और किसी वक्त देखनेसे बन्दनाको हँसी आ जाती, किन्तु तन्द्रा-जड़ित आँखोंसे आज इस मूर्तिने उसे मुग्ध कर दिया। इस तरह वह कितनी देरतक खड़ी रही, उसे होश नहीं; किन्तु सहसा जब चैतन्य हुआ तब पूर्वका आकाश अरुण हो गया था, और नौकर-चाकर जागने ही वाले थे। तकदीर अच्छी थी जो इस बीचमें कोई जगकर उसके सामने नहीं आ पड़ा। अब वह नहीं ठहरी, धीरे-धीरे ऊपर जाकर अपने कमरमें जा बिस्तरपर पड़ रही और पड़ते ही गहरी नींद आनेमें उसे ज़रा भी देर न लगी।

दरवाजेपर हाथ ठोककर अन्नदाने पुकारा—"जीजी-बाई, बहुत दिन चढ़ गया है, उठोगी नहीं?"

बन्दना व्यस्तताके साथ दरवाजा खोलकर बाहर आ खड़ी हुई; देखा कि वास्तवमें बहुत अबेर हो चुकी है, लज्जित होकर उसने पूछा—"वे सब शायद आज भी मेरी बाट देखते होंगे? जरा सबेरे मुझे जगा क्यों नहीं दिया? नहा-धोकर घंटेभरसे पहले तो तैयार न हो सकूँगी अन्नदा?"

उसके विपन्न चेहरेकी तरफ देखकर अन्नदाने हँसते हुए कहा—"डरनेकी कोई बात नहीं जीजी-बाई, आज वे लोग सब्र नहीं कर सके, सब खतम कर चुके हैं,—अब जब तक चाहो नहाओ-धोओ, कोई टोकेगा नहीं।"

सुनकर बन्दनाके जीमें जी आया। वह हँसमुख हो बोली—"सचमुच ही तुम लोगोंकी बहुत-सी बातें मुझे पसन्द नहीं, पर यह पसन्द है। सब दल बाँधके घड़ीका काँटा मिलाकर निगलने नहीं बैठ जाते, इससे बड़ा आराम मिलता है।"

अन्नदाने कहा—"पर सबेरे क्या आपको भूख नहीं लगती जीजी-बाई?"

बन्दनाने विस्मयके साथ पूछा—"सस्त्रीक बैरिस्टर साहब सीट रिज़र्व करा सकते हैं, पर बापूजी क्यों कराने लगे? उनकी छुट्टियाँ खतम होनेमें अभी तो आठ-दस दिन बाकी हैं। इसके सिवा मुझे बिना बताये?"

विप्रदासने कहा—"कहनेका समय नहीं मिला, शायद वापस आकर बतायेंगे। सबेरे बम्बईके ऑफिससे ज़रूरी तार आया था,—चेहरेका भाव देखकर तो यही मालूम होता था कि बगैर गये काम नहीं चल सकता।"

"लेकिन मैं? इतनी जल्दी मैं क्यों जाने लगी?"

विप्रदासने भी उसके स्वरमें स्वर मिलाकर कहा—"ज़रूर, तुम क्यों जाने लगीं? मैं भी ठीक यही कहता हूँ।"

बन्दना कुछ समझ न सकनेके कारण जिज्ञासु दृष्टिसे मुँहकी ओर देखती रह गई।

विप्रदासने कहा—"बहनको एक तार कर दो न,—देवरको साथ लेकर यहाँ आ जायँ। तुम लोगोंकी पटरी भी खूब बैठ जायगी, और अतिथि-सत्कारके दायित्वसे छुटकारा पाकर मेरी भी जान बच जायगी।"

बन्दना डरते हुए व्यग्र स्वरसे पूछ उठी—"ऐसा क्या संभव हो सकता है मुखर्जी साहब? मा क्या इस प्रस्तावपर कभी राजी हो सकती हैं? मैं तो उन्हें देखे नहीं सुहाती।"

विप्रदासने कहा—"एक बार कोशिश कर देखो न। कहो तो तारका एक फार्म भेज दूँ,—क्या कहती हो?"

बन्दना उत्सुक दृष्टिसे क्षण-भर चुपचाप देखती रही, फिर न जाने क्या सोचकर बोली—"रहने दीजिए मुखर्जी साहब,—यह मुझसे न होगा।"

"तो रहने दो।"

"मैं बल्कि पिताजीके साथ चली ही जाऊँ।"

"सो ही ठीक है।"—कहकर विप्रदास चले गये।

खानेकी टेबिलपर पिताके नाम आया हुआ टेलिग्राफ पड़ा हुआ था; बन्दनाने उसे खोलकर देखा कि सचमुच ही बंबई-आफिसका तार है। बहुत ज़रूरी,—देर नहीं की जा सकती।

बन्दना अपने कमरेमें जाकर फिर एक बार अपना सामान सजानेमें लग गई।

पिता अभी तक वापस नहीं आये थे। कई घण्टे बाद अन्नदाने कमरेमें आकर कहा—"आपके नाम एक तार आया है जीजी-बाई, यह लीजिए।"

बन्दनाने विस्मयके साथ पूछा—" सस्त्रीक बैरिस्टर साहब सीट रिज़र्व करा सकते हैं; पर बापूजी क्यों कराने लगे ? उनकी छुट्टियाँ खतम होनेमें अभी तो आठ-दस दिन बाकी हैं। इसके सिवा मुझे बिना बताये ? "

विप्रदासने कहा—" कहनेका समय नहीं मिला, शायद वापस आकर बतायेंगे। सबेरे बम्बईके ऑफिससे ज़रूरी तार आया था,—चेहरेका भाव देखकर तो यही मालूम होता था कि बगैर गये काम नहीं चल सकता। "

" लेकिन मैं ? इतनी जल्दी मैं क्यों जाने लगी ? "

विप्रदासने भी उसके स्वरमें स्वर मिलाकर कहा—" ज़रूर, तुम क्यों जाने लगीं ? मैं भी ठीक यही कहता हूँ। "

बन्दना कुछ समझ न सकनेके कारण जिज्ञासु दृष्टिसे मुँहकी ओर देखती रह गई।

विप्रदासने कहा—" बहनको एक तार कर दो न,—देवरको साथ लेकर यहाँ आ जायँ। तुम लोगोंकी पटरी भी खूब बैठ जायगी, और अतिथि-सत्कारके दायित्वसे छुटकारा पाकर मेरी भी जान बच जायगी। "

बन्दना डरते हुए व्यग्र स्वरसे पूछ उठी—" ऐसा क्या संभव हो सकता है मुखर्जी साहब ? मा क्या इस प्रस्तावपर कभी राजी हो सकती हैं ? मैं तो उन्हें देखे नहीं सुहाती। "

विप्रदासने कहा—" एक बार कोशिश कर देखो न। कहो तो तारका एक फार्म भेज दूँ,—क्या कहती हो ? "

बन्दना उत्सुक दृष्टिसे क्षण-भर चुपचाप देखती रही, फिर न जाने क्या सोचकर बोली—" रहने दीजिए मुखर्जी साहब,—यह मुझसे न होगा। "

" तो रहने दो। "

" मैं बल्कि पिताजीके साथ चली ही जाऊँ। "

" सो ही ठीक है। "—कहकर विप्रदास चले गये।

खानेकी टेबिलपर पिताके नाम आया हुआ टेलिग्राफ पड़ा हुआ था; बन्दनाने उसे खोलकर देखा कि सचमुच ही बंबई-आफिसका तार है। बहुत ज़रूरी,—देर नहीं की जा सकती।

बन्दना अपने कमरेमें जाकर फिर एक बार अपना सामान सजानेमें लग गई।

पिता अभी तक वापस नहीं आये थे। कई घण्टे बाद अन्नदाने कमरेमें आकर कहा—" आपके नाम एक तार आया है जीजी-बाई, यह लीजिए। "

कही जा सकती है, किन्तु पुत्रके विवाहोत्सवमें जीमनेका निमंत्रण नहीं दिया जा सकता। इस घनिष्ठ संबंधकी बात वे सोच ही नहीं सकते।

कल बन्दनाने रसोईघरकी दासीको सरल और कुछ निर्बोध समझकर बातों ही बातोंमें उससे इसका कारण दरियाफ्त करना चाहा था, मगर बहुत जिरह करनेके बाद भी वह सिर्फ इतनी ही बात निकाल सकी कि वह इसका कारण नहीं जानती, सब-कोई डरते हैं इसलिए वह भी डरती है, और अन्य किसीसे पूछने पर भी शायद यही उत्तर मिलता। मुखर्जी-परिवारमें मानों यह एक संक्रामक व्याधि है। उस दिन रेलमें, उस आकस्मिक छोटी-सी घटनाको आश्रय करके विप्रदासकी जो बलिष्ठ प्रकृति उसे क्षण-भरके लिए दिखाई दी थी, उसने तुरन्त ही अपनेको सम्पूर्ण रूपसे छिपा लिया था। गाड़ीमें उस दिन पास बैठकर हास्य-परिहासकी कितनी ही बातें हो गईं,—किन्तु आज मालूम ही नहीं होता कि वही आदमी इस मकानका बड़ा-बाबू है।

सहसा नीचेसे एक शोर उठा, किसी आदमीने दौड़कर खबर दी कि उसके पिता राय-साहब स्टेशनसे लँगड़े होकर लौटे हैं। बन्दनाने जंगलेमेंसे झाँककर देखा कि पंजाबके बैरिस्टर और उनकी पत्नी उसके पिताकी दोनों बाँहें पकड़कर उन्हें मोटरसे नीचे उतार रहे हैं। उनके एक पैरका जूता-जुर्राब खुला हुआ है और उसपर दो-तीन भीगे-हुए रूमाल लिपटे हैं। प्लाटफॉर्मपर भीड़की धकापेलमें किसीने उनके पाँवपर एक भारी बकस पटक दिया, जिससे यह हाल हुआ। लोगोंने पकड़-पकड़ाके उन्हें ऊपर लाकर विस्तरपर लिटा दिया,— दरवान डाक्टर बुलाने दौड़ा। डाक्टरने आकर बैण्डेज बाँधा और दवा दी,— विशेष कोई बात नहीं, पर कुछ दिनके लिए घूमना-फिरना बन्द हो गया।

दूसरे दिन तीसरे पहर सती आ पहुँची। बन्दना कलरवके साथ उसकी अभ्यर्थना करनेके लिए नीचे पहुँची तो ठिठकके खड़ी हो गई, देखा कि मोटरसे सिर्फ उसकी जीजी ही नहीं उतर रहीं, साथमें सासु भी हैं—दयामयी। बन्दनाका उच्छ्वसित आनन्द-कलरव बुझ-सा गया, वह जड़की तरह किसी प्रकार प्रणाम करके एक तरफ हटके खड़ी हो रही थी, पर दयामयीने पास आकर आज उसकी ठोड़ी छूकर चूमी और हँसते हुए पूछा—"अच्छी तरह तो हो बेटी?"

बन्दनाने सिर हिलाके हामी भरी—"अच्छी हूँ मा, अचानक आप कैसे चली आईं?"

कही जा सकती है, किन्तु पुत्रके विवाहोत्सवमें जीमनेका निमंत्रण नहीं दिया जा सकता। इस घनिष्ठ संबंधकी बात वे सोच ही नहीं सकते।

कल बन्दनाने रसोईघरकी दासीको सरल और कुछ निर्बोध समझकर बातों ही बातोंमें उससे इसका कारण दरियाफ्त करना चाहा था, मगर बहुत जिरह करनेके बाद भी वह सिर्फ़ इतनी ही बात निकाल सकी कि वह इसका कारण नहीं जानती, सब-कोई डरते हैं इसलिए वह भी डरती है, और अन्य किसीसे पूछने पर भी शायद यही उत्तर मिलता। मुखर्जी-परिवारमें मानों यह एक संक्रामक व्याधि है। उस दिन रेलमें, उस आकस्मिक छोटी-सी घटनाको आश्रय करके विप्रदासकी जो बलिष्ठ प्रकृति उसे क्षण-भरके लिए दिखाई दी थी, उसने तुरन्त ही अपनेको सम्पूर्ण रूपसे छिपा लिया था। गाड़ीमें उस दिन पास बैठकर हास्य-परिहासकी कितनी ही बातें हो गईं,—किन्तु आज मालूम ही नहीं होता कि वही आदमी इस मकानका बड़ा-बाबू है।

सहसा नीचेसे एक शोर उठा, किसी आदमीने दौड़कर खबर दी कि उसके पिता राय-साहब स्टेशनसे लँगड़े होकर लौटे हैं। बन्दनाने जंगलेमेंसे झाँककर देखा कि पंजाबके बैरिस्टर और उनकी पत्नी उसके पिताकी दोनों बाँहें पकड़कर उन्हें मोटरसे नीचे उतार रहे हैं। उनके एक पैरका जूता-जुर्राब खुला हुआ है और उसपर दो-तीन भीगे-हुए रूमाल लिपटे हैं। प्लाटफॉर्मपर भीड़की धकापेलमें किसीने उनके पाँवपर एक भारी बकस पटक दिया, जिससे यह हाल हुआ। लोगोंने पकड़-पकड़के उन्हें ऊपर लाकर बिस्तरपर लिटा दिया,—दरबान डाक्टर बुलाने दौड़ा। डाक्टरने आकर बैण्डेज बाँधा और दवा दी,—विशेष कोई बात नहीं, पर कुछ दिनके लिए घूमना-फिरना बन्द हो गया।

दूसरे दिन तीसरे पहर सती आ पहुँची। बन्दना कलरवके साथ उसकी अभ्यर्थना करनेके लिए नीचे पहुँची तो ठिठकके खड़ी हो गई, देखा कि मोटरसे सिर्फ़ उसकी जीजी ही नहीं उतर रहीं, साथमें सासु भी हैं—दयामयी। बन्दनाका उच्छ्वसित आनन्द-कलरव बुझ-सा गया, वह जड़की तरह किसी प्रकार प्रणाम करके एक तरफ़ हटके खड़ी हो रही थी, पर दयामयीने पास आकर आज उसकी ठोड़ी छूकर चूमी और हँसते हुए पूछा—"अच्छी तरह तो हो बेटी?"

बन्दनाने सिर हिलाके हामी भरी—"अच्छी हूँ मा, अचानक आप कैसे चली आईं?"

राय-साहबने इसीपर विश्वास कर लिया; और इस अनुग्रह और सहानुभूतिके लिए बहुत धन्यवाद दिया।

"फिर मिलूँगी,—जाऊँ अब ज़रा हाथ-पैर धोऊँ जाकर।"—कहकर दयामयी उनसे विदा होके अपने कमरेमें चली गई।

दूसरी मोटरमें आ पहुँचा द्विजदास और उसका भतीजा वासुदेव। सतीके लड़केको बन्दना उस दिन देख नहीं पाई थी। वह था पाठशालामें और उसकी छुट्टी होनेसे पहले ही बन्दना वहाँसे चली आई थी। दादीको छोड़के वासू रहता नहीं, इसीसे साथ आया है और उन्हींके साथ वह घर चला जायगा।

काकाके परिचय करा देनेपर वासुदेवने बन्दनाको पालागन किया। बन्दनाके पाँवोंमें जूते देखकर वह मन-ही-मन विस्मित तो हुआ; पर कुछ बोला नहीं। आठ नौ सालका लड़का है, पर जानता सब है।

बन्दनाने उसे स्नेहके साथ छातीसे लगा लिया और कहा—"मुझे पहचान नहीं सके वासू?"

"पहचान तो लिया मौसीजी।"

"पर तुम तो तब पाँच-छै सालके थे बेटा,—याद कैसे रख सके?"

"फिर भी याद है मौसीजी,—तुम्हें देखते ही पहचान गया था। हमारे यहाँसे तुम गुस्सा होकर चली आईं, मैं पाठशालासे घर लौटा, तो तुम वहाँ थी नहीं।"

"गुस्सा होके चली आई, यह तुमने किससे सुना?"

"चाचाजी कह रहे थे दादीजीसे।"

बन्दनाने द्विजेदासकी ओर देखकर पूछा—"गुस्सा होनेकी बात आपने भी कैसे जानी?"

द्विजदासने कहा—"सिर्फ मैं ही नहीं, घर-भरके जानते हैं। और फिर, आपने छिपानेकी विशेष चेष्टा भी नहीं की।"

बन्दनाने कहा—"सब मेरे गुस्सा होनेकी ही बात जानते हैं, उसका कारण क्या, सो भी कोई जानता है?"

द्विजदासने कहा—"सब न जानें, पर मैं जानता हूँ। राय-साहबको अलग टेबिलपर जिमाया गया था इसलिए।"

बन्दनाने कहा—"कारण यदि यही हो, तो मेरे गुस्सा होनेको आप उचित समझते हैं?"

राय-साहबने इसीपर विश्वास कर लिया; और इस अनुग्रह और सहानुभूतिके लिए बहुत धन्यवाद दिया।

"फिर मिलूँगी,—जाऊँ अब ज़रा हाथ-पैर धोऊँ जाकर।"—कहकर दयामयी उनसे विदा होके अपने कमरेमें चली गई।

दूसरी मोटरमें आ पहुँचा द्विजदास और उसका भतीजा वासुदेव। सतीके लड़केको बन्दना उस दिन देख नहीं पाई थी। वह था पाठशालामें और उसकी छुट्टी होनेसे पहले ही बन्दना वहाँसे चली आई थी। दादीको छोड़के वासू रहता नहीं, इसीसे साथ आया है और उन्हींके साथ वह घर चला जायगा।

काकाके परिचय करा देनेपर वासुदेवने बन्दनाको पालागन किया। बन्दनाके पाँवोंमें जूते देखकर वह मन-ही-मन विस्मित तो हुआ; पर कुछ बोला नहीं। आठ नौ सालका लड़का है, पर जानता सब है।

बन्दनाने उसे स्नेहके साथ छातीसे लगा लिया और कहा—"मुझे पहचान नहीं सके वासू?"

"पहचान तो लिया मौसीजी।"

"पर तुम तो तब पाँच-छै सालके थे बेटा,—याद कैसे रख सके?"

"फिर भी याद है मौसीजी,—तुम्हें देखते ही पहचान गया था। हमारे यहाँसे तुम गुस्सा होकर चली आईं, मैं पाठशालासे घर, लौटा, तो तुम वहाँ थी नहीं।"

"गुस्सा होके चली आई, यह तुमने किससे सुना?"

"चाचाजी कह रहे थे दादीजीसे।"

बन्दनाने द्विजदासकी ओर देखकर पूछा—"गुस्सा होनेकी बात आपने भी कैसे जानी?"

द्विजदासने कहा—"सिर्फ मैं ही नहीं, घर-भरके जानते हैं। और फिर, आपने छिपानेकी विशेष चेष्टा भी नहीं की।"

बन्दनाने कहा—"सब मेरे गुस्सा होनेकी ही बात जानते हैं, उसका कारण क्या, सो भी कोई जानता है?"

द्विजदासने कहा—"सब न जानें, पर मैं जानता हूँ। राय-साहबको अलग टेबिलपर जिमाया गया था इसलिए।"

बन्दनाने कहा—"कारण यदि यही हो, तो मेरे गुस्सा होनेको आप उचित समझते हैं?"

द्विजदासने हँसते हुए कहा—“ जीजीका नुकसान होता रहे, यही चाहती हैं क्या आप ? ”

बन्दना संकटमें पड़कर बोली—“ वाह,—सो क्यों चाहने लगी ? मैं चाहती हूँ इन लोगोंका डर मिट जाय,—सब निर्भय हो जायँ। ”

द्विजदासने कहा—“ आप चिन्ता न कीजिए, वे सब निर्भय ही हैं। कमसे कम भाई-साहबके संबंधमें यह बात बेधड़क कही जा सकती है कि वे डर-भय नामकी किसी चीजको आज तक जानते ही नहीं। यह उनकी प्रकृतिके विरुद्ध है। ”

बन्दनाने हँसते हुए कहा—“ इसके मानी यह कि भय-वस्तुको सम्पूर्ण रूपसे आप ही लोगोंने बाँट लिया है, उनके हिस्सेमें वह ज़रा भी नहीं पड़ी, यही तो ? ”

सुनकर द्विजदास भी हँस दिया, बोला—“ है तो बहुत-कुछ ऐसा ही; मगर फिर भी आपको वंचित नहीं रखा जायगा, मामूली जो कुछ बचा-खुचा है, उतना आपको भी मिल जायगा। तीन-चार दिनसे एक साथ रह रही हैं, अभी तक उन्हें पहचान न सकीं ? ”

बन्दनाने कहा—“ नहीं। आपके जरिये उन्हें पहचानना सीख लूँगी, इसी उम्मीदमें हूँ। ”

द्विजदासने कहा—“ तो पहला पाठ लीजिए। इन जूतोंको खोल डालिए। ”

इतनेमें नौकरने आकर कहा—“ मा आप लोगोंको ऊपर बुला रही हैं। ”

चलते चलते बन्दनाने पूछा—“ अचानक मा क्यों चली आईं ? ”

द्विजदासने कहा—“ पहली बात, कैलास-यात्राके बारेमें मामियोंसे सलाह करना; दूसरी बात, आपको बलरामपुर वापस ले जाना। देखिए, कहीं ‘ ना ’ न कह बैठिएगा। ”

बन्दनाने कहा—“ अच्छा, वही होगा। ”

द्विजदासने कहा—“ माके सामने आपको ‘ मिस राय ’ नहीं कहा जा सकेगा। आप मुझसे उमरमें छोटी हैं और भाभीकी छोटी बहन भी हैं, लिहाजा आपका मैं नाम लिया करूँगा। कहीं नाराज होकर फिर कोई दूसरा उपद्रव न कर बैठिएगा। ”

बन्दनाने हँसके कहा—“ नहीं, नाराज क्यों होने लगी। आप मेरा नाम लेकर पुकारा करें। पर मैं आपको क्या कहा करूँ ? ”

द्विजदासने कहा—“ मुझे द्विजू बाबू ही कहा करें। पर भाई साहबको आपका

द्विजदासने हँसते हुए कहा—"जीजीका नुकसान होता रहे, यही चाहती हैं क्या आप ?"

बन्दना संकटमें पड़कर बोली—"वाह,—सो क्यों चाहने लगी ? मैं चाहती हूँ इन लोगोंका डर मिट जाय,—सब निर्भय हो जायँ।"

द्विजदासने कहा—"आप चिन्ता न कीजिए, वे सब निर्भय ही हैं। कमसे कम भाई-साहबके संबंधमें यह बात बेधड़क कही जा सकती है कि वे डर-भय नामकी किसी चीजको आज तक जानते ही नहीं। यह उनकी प्रकृतिके विरुद्ध है।"

बन्दनाने हँसते हुए कहा—"इसके मानी यह कि भय-वस्तुको सम्पूर्ण रूपसे आप ही लोगोंने बाँट लिया है, उनके हिस्सेमें वह ज़रा भी नहीं पड़ी, यही तो ?"

सुनकर द्विजदास भी हँस दिया, बोला—"है तो बहुत-कुछ ऐसा ही; मगर फिर भी आपको वंचित नहीं रखा जायगा, मामूली जो कुछ बचा-खुचा है, उतना आपको भी मिल जायगा। तीन-चार दिनसे एक साथ रह रही हैं, अभी तक उन्हें पहचान न सकीं ?"

बन्दनाने कहा—"नहीं। आपके जरिये उन्हें पहचानना सीख लूँगी, इसी उम्मीदमें हूँ।"

द्विजदासने कहा—"तो पहला पाठ लीजिए। इन जूतोंको खोल डालिए।"

इतनेमें नौकरने आकर कहा—"मा आप लोगोंको ऊपर बुला रही हैं।"

चलते चलते बन्दनाने पूछा—"अचानक मा क्यों चली आईं ?"

द्विजदासने कहा—"पहली बात, कैलास-यात्राके बारेमें मामियोंसे सलाह करना; दूसरी बात, आपको बलरामपुर वापस ले जाना। देखिए, कहीं 'ना' न कह बैठिएगा।"

बन्दनाने कहा—"अच्छा, वही होगा।"

द्विजदासने कहा—"माके सामने आपको 'मिस राय' नहीं कहा जा सकेगा। आप मुझसे उमरमें छोटी हैं और भाभीकी छोटी बहन भी हैं, लिहाजा आपका मैं नाम लिया करूँगा। कहीं नाराज होकर फिर कोई दूसरा उपद्रव न कर बैठिएगा।"

बन्दनाने हँसके कहा—"नहीं, नाराज क्यों होने लगी। आप मेरा नाम लेकर पुकारा करें। पर मैं आपको क्या कहा करूँ ?"

द्विजदासने कहा—"मुझे द्विजू बाबू ही कहा करें। पर भाई साहबको आपका

है आपका। उनकी बात मा हरगिज नहीं टाल सकतीं,—बहुत चाहती हैं उन्हें। 'म्लेच्छ' का अपवाद शायद मिट गया।"

बन्दना कुछ देर चुप रही, फिर बोली—"बड़े आश्चर्यकी बात है।"

द्विजदासने स्वीकार करते हुए कहा—"हाँ। इस दरमियान आपने क्या किया है, अन्नदा-दीदीने मासे क्या क्या कहा है, मुझे नहीं मालूम; किन्तु आश्चर्य आपसे ज्यादा हुआ है खुद मुझको। लेकिन अब देर मत कीजिए, जाइए खाने-पीनेका इन्तजाम कीजिए। फिर भेंट होगी।" और, इसके बाद दोनों माके कमरेसे बाहर हो गये।

१२

कैलास-यात्राके विषयमें रास्तेकी दुर्गमताका हाल सुनकर मामियाँ पीछे हट गईं, स्वयं दयामयीको भी विशेष उत्साह नहीं रह गया; फिर भी, कलकत्तेमें उनके पाँच-छः दिन कट गये—दक्षिणेश्वर, कालीघाट और गंगास्नान करनेमें। कामके आदमीपर ही कामका भार पड़ता है; इस घरका प्रायः साराका सारा दायित्व आ पड़ा है बन्दनाके ऊपर। सती कुछ भी नहीं करती, सब कामोंमें बहनको आगे बढ़ा देती है, और खुद, सासुके साथ घूमती रहती है। फिर भी कहीं बाहर जानेको होती है तो उसे पुकारकर कहती है, "बन्दना, आ न बहन हम लोगोंके साथ; तेरे साथ रहनेसे किसीसे कोई बात पूछनी नहीं पड़ती।"

विप्रदासका भी आज-कल करते-करते घर जाना नहीं हो रहा है; मा बार-बार यही कह दिया करती हैं कि विपिनके चले जानेसे उन्हें घर कौन ले जायेगा? उस दिन शामको वे 'विक्टोरिया-मेमोरियल' देखके वापस आई तो विप्रदासको बुलाकर उत्तेजनाके साथ उन्होंने कहा—"विपिन, तू कुछ भी क्यों न कह, पढ़ी-लिखी लड़कियोंका ढंग-ढाँचा ही अलहदा है।"

विप्रदास समझ गया कि यह बन्दनाकी बात है। उसने पूछा—"क्या हुआ मा?"

दयामयीने कहा—"क्या हुआ है? आज एक बड़े-भारी लाल-मुँहके सर्जेण्टने आकर गाड़ी रोक दी। भाग्यसे बन्दना साथ थी, उसने अँग्रेजीमें दो-चार बातें समझाकर कहीं तो साहबने उसी वक्त गाड़ी छोड़ दी। नहीं तो क्या होता बता तो? या तो आसानीसे छोड़ता नहीं, नहीं तो थाने तक खींच ले

है आपका। उनकी बात मा हरगिज नहीं टाल सकतीं,—बहुत चाहती हैं उन्हें। 'म्लेच्छ' का अपवाद शायद मिट गया।"

वन्दना कुछ देर चुप रही, फिर बोली—"बड़े आश्चर्यकी बात है।"

द्विजदासने स्वीकार करते हुए कहा—"हाँ। इस दरमियान आपने क्या किया है, अन्नदा-दीदीने मासे क्या क्या कहा है, मुझे नहीं मालूम; किन्तु आश्चर्य आपसे ज्यादा हुआ है खुद मुझको। लेकिन अब देर मत कीजिए, जाइए खाने-पीनेका इन्तजाम कीजिए। फिर भेंट होगी।" और, इसके बाद दोनों माके कमरेसे बाहर हो गये।

१२

कैलास-यात्राके विषयमें रास्तेकी दुर्गमताका हाल सुनकर मामियाँ पीछे हट गईं, स्वयं दयामयीको भी विशेष उत्साह नहीं रह गया; फिर भी, कलकत्तेमें उनके पाँच-छः दिन कट गये—दक्षिणेश्वर, कालीघाट और गंगास्नान करनेमें। कामके आदमीपर ही कामका भार पड़ता है; इस घरका प्रायः साराका सारा दायित्व आ पड़ा है वन्दनाके ऊपर। सती कुछ भी नहीं करती, सब कामोंमें बहनको आगे बढ़ा देती है, और खुद, सासुके साथ घूमती रहती है। फिर भी कहीं बाहर जानेको होती है तो उसे पुकारकर कहती है, "वन्दना, आ न बहन हम लोगोंके साथ; तेरे साथ रहनेसे किसीसे कोई बात पूछनी नहीं पड़ती।"

विप्रदासका भी आज-कल करते-करते घर जाना नहीं हो रहा है; मा बार-बार यही कह दिया करती हैं कि विपिनके चले जानेसे उन्हें घर कौन ले जायेगा? उस दिन शामको वे 'विक्टोरिया-मेमोरियल' देखके वापस आईं तो विप्रदासको बुलाकर उत्तेजनाके साथ उन्होंने कहा—"विपिन, तू कुछ भी क्यों न कह, पढ़ी-लिखी लड़कियोंका ढंग-ढाँचा ही अलहदा है।"

विप्रदास समझ गया कि यह वन्दनाकी बात है। उसने पूछा—"क्या हुआ मा?"

दयामयीने कहा—"क्या हुआ है? आज एक बड़े-भारी लाल-मुँहके सर्जेण्टने आकर गाड़ी रोक दी। भाग्यसे वन्दना साथ थी, उसने अँग्रेजीमें दो-चार बातें समझाकर कहीं तो साहबने उसी वक्त गाड़ी छोड़ दी। नहीं तो क्या होता बता तो? या तो आसानीसे छोड़ता नहीं, नहीं तो थाने तक खींच ले

दयामयीने कहा—"जायगी सही, पर छोड़नेको जी नहीं चाहता,—इच्छा होती है कि हमेशाके लिए पकड़के रख लूँ।"

विप्रदास क्षण-भर मौन रहकर बोला—"सो तो वास्तवमें होनेका नहीं मा,—पराई लड़कीको इतना मत जकड़ो। दो-चार दिनके लिए आई है, चली जायगी—यही अच्छा।" इतना कहकर वह कुछ अन्यमनस्ककी भाँति बाहर चला गया।

बात दयामयीको ज्यादा पसन्द नहीं आई। परन्तु वह तो सिर्फ क्षण-भरकी बात थी। बलरामपुर लौटनेका कोई नाम नहीं लेता, उनके दिन उत्सवकी भाँति आनन्दसे बीतने लगे,—हँसने-खेलने, गपशप करने और चारों तरफ घूमने-फिरनेमें इसके पहले सबके साथ हास्य-परिहास करनेमें दयामयीको इतना हल्का होते किसीने भी नहीं देखा,—उनके अन्तःकरणमें मानो कहींपर एक आनन्दका सोता निरन्तर बह रहा है और वह उनकी उमर और प्रकृति-सिद्ध गाम्भीर्यको बीच-बीचमें बहा देना चाहता है। सतीके साथ आभास और इशारेमें अक्सर उनकी क्या-क्या बातें होती रहती हैं उसका अर्थ सिर्फ सासु-बहू ही जानें; और भी एक जनी कुछ-कुछ अनुमान करती रहती है, वह है अन्नदा। सस्त्रीक बैरिस्टर साहब इतने दिन रहकर कल अपने घर चले गये हैं, उन दोनों ही का नाम वसन्त है, इस बातपर दयामयीने चलते वक्त हँसीकी थी; और उनसे वचन ले लिया था कि वापस पंजाब जाते समय वे उनके घर होते जायेंगे—चाहे बलरामपुर हो चाहे कलकत्ता। राय साहबका पैर अच्छा हो गया है, आगामी सप्ताह वे बम्बई चले जायेंगे। दयामयीने खुद दरबारमें हाजिर होकर वन्दनाकी कुछ दिनके लिए छुट्टी मंजूर करा ली है; यानी वन्दना बम्बईके बदले बलरामपुर जाकर कमसे कम और भी एक महीने जीजीके पास रह सकेगी—इसकी व्यवस्था पक्की हो गई है।

मुवक्किलोंके मामले-मुकदमे हाई-कोर्टमें लगे ही रहते हैं। एक बड़े मुकदमेकी तारीख पास ही थी; इससे विप्रदासने तय किया कि इस बीचमें घर न जाकर उस तारीख तक ठहरा जाय और फिर सबको साथ लेकर एक साथ घर चला जाय। नाना कार्योंसे उसे हरवक्त बाहर ही बाहर रहना पड़ता है। आज था रविवार; दयामयीने आकर हँसते हुए कहा—"एक मजेकी बात सुनी है विपिन?"

दयामयीने कहा—" जायगी सही, पर छोड़नेको जी नहीं चाहता,—इच्छा होती है कि हमेशाके लिए पकड़के रख लूँ। "

विप्रदास क्षण-भर मौन रहकर बोला—" सो तो वास्तवमें होनेका नहीं मा,—पराई लड़कीको इतना मत जकड़ो। दो-चार दिनके लिए आई है, चली जायगी—यही अच्छा।" इतना कहकर वह कुछ अन्यमनस्ककी भाँति बाहर चला गया।

बात दयामयीको ज्यादा पसन्द नहीं आई। परन्तु वह तो सिर्फ क्षण-भरकी बात थी। बलरामपुर लौटनेका कोई नाम नहीं लेता, उनके दिन उत्सवकी भाँति आनन्दसे बीतने लगे,—हँसने-खेलने, गपशप करने और चारों तरफ घूमने-फिरनेमें इसके पहले सबके साथ हास्य-परिहास करनेमें दयामयीको इतना हल्का होते किसीने भी नहीं देखा,—उनके अन्तःकरणमें मानो कहींपर एक आनन्दका सोता निरन्तर बह रहा है और वह उनकी उमर और प्रकृति-सिद्ध गाम्भीर्यको बीच-बीचमें बहा देना चाहता है। सतीके साथ आभास और इशारेमें अक्सर उनकी क्या-क्या बातें होती रहती हैं उसका अर्थ सिर्फ सासु-बहू ही जानें; और भी एक जनी कुछ-कुछ अनुमान करती रहती है, वह है अन्नदा। सस्त्रीक बैरिस्टर साहब इतने दिन रहकर कल अपने घर चले गये हैं, उन दोनों ही का नाम वसन्त है, इस बातपर दयामयीने चलते वक्त हँसीकी थी; और उनसे वचन ले लिया था कि वापस पंजाब जाते समय वे उनके घर होते जायेंगे—चाहे बलरामपुर हो चाहे कलकत्ता। राय साहबका पैर अच्छा हो गया है, आगामी सप्ताह वे बम्बई चले जायेंगे। दयामयीने खुद दरबारमें हाजिर होकर बन्दनाकी कुछ दिनके लिए छुट्टी मंजूर करा ली है; यानी बन्दना बम्बईके बदले बलरामपुर जाकर कमसे कम और भी एक महीने जीजीके पास रह सकेगी—इसकी व्यवस्था पक्की हो गई है।

मुखर्जियोंके मामले-मुकदमे हाई-कोर्टमें लगे ही रहते हैं। एक बड़े मुकदमेकी तारीख पास ही थी, इससे विप्रदासने तय किया कि इस बीचमें घर न जाकर उस तारीख तक ठहरा जाय और फिर सबको साथ लेकर एक साथ घर चला जाय। नाना कार्योंसे उसे हरवक्त बाहर ही बाहर रहना पड़ता है। आज था रविवार; दयामयीने आकर हँसते हुए कहा—" एक मजेकी बात सुनी है विपिन ?"

विप्रदासने कहा—" आशंका है, सो तो मालूम है। पर जेल जानेमें तो कलंक नहीं है मा, कलंक है काममें। वैसा काम वह नहीं करेगा। मान लो अगर मुझे ही कभी जेल हो जाय,—हो भी तो सकती है,—तब क्या मेरे लिए तुम लज्जित होगी मा? कहोगी कि विपिन हमारे वंशका कलंक है?"

इस बातने दयामयीके शूल-सा छेद दिया। क्या मालूम, कोई अन्तर्निहित इशारा तो नहीं है? इस लड़केको उन्होंने छातीसे लगाकर इतना बड़ा किया है, और अच्छी तरह जानती थीं कि सत्यके लिए—धर्मके लिए ऐसा कोई काम नहीं जो विप्रदास न कर सकता हो। अन्यायका प्रतिवाद करनेमें किसी विपत्ति या किसी फलाफलकी वह परवाह नहीं करता। जब उसकी सिर्फ़ अठारह सालकी उमर थी तब एक मुसलमान परिवारका पक्ष लेकर वह अकेला ही ऐसा काण्ड कर बैठा था कि कैसे प्राण बचाकर वापस आ सका, यह आज तक दया-मयीके लिए रहस्यका व्यापार बना हुआ है। वन्दनाके मुँहसे उस दिनकी रेलकी घटना सुनकर वे मारे शंकाके एक बारगी दंग रह गई थीं। द्विजूके लिए उन्हें उद्वेग रहता है, यह सच है; किन्तु भीतर-ही-भीतर बहुत ज्यादा डर है उन्हें इस बड़े लड़केके लिए। मन-ही-मन यही बात सोच रही थीं। विप्रदासने कहा—" क्यों मा, कलंककी दुश्चिन्ता तो मिट गई न? जेल तो अचानक किसी दिन मुझे भी हो सकती है।"

दयामयी सहसा व्याकुल होकर बोल उठीं—" बलैयाँ लूँ अपनेकी,—भगवान बचाएँ, ऐसी कुलच्छिनी बात न निकाल मुँहसे बेटा।" उसके बाद ही कहने लगीं—" जेल होगी तुझे और मेरे जीते-जी? तो फिर इतनी उमर तक देवी-देवताओंकी पूजा क्या की मैंने? इतनी सम्पत्ति है किसलिए? सारीकी सारी जायदाद बेच दूँगी तो भी ऐसा नहीं होने दूँगी विपिन।"

विप्रदासने झुककर उनकी पदधूलि ली; दयामयीने सहसा उसे अपनी छातीके पास खींचकर कहा—" द्विजूका जो हो सो होता रहे, पर तू कभी मेरे आँखोंसे ओझल हुआ तो मैं गंगाजीमें डूब मरूँगी विपिन। यह मुझसे न सहा जायगा, सो जान रखना।—" कहते-कहते उनकी आँखोंसे कई बूँद आँसू ढुलक पड़े।

" मा, इस वक्त क्या......" कहते-कहते वन्दना वहाँ आ पहुँची। दयामयीने बेटेको छोड़कर आँखें पोंछ डालीं; और वन्दनाके विस्मित चेहरेकी ओर देखकर हँसते हुए कहा—" लड़केको बहुत दिनोंसे छातीसे नहीं लगाया था, इससे ज़रा साध हुई कि लगा लूँ।"

विप्रदासने कहा—" आशंका है, सो तो मालूम है। पर जेल जानेमें तो कलंक नहीं है मा, कलंक है काममें। वैसा काम वह नहीं करेगा। मान लो अगर मुझे ही कभी जेल हो जाय,—हो भी तो सकती है,—तब क्या मेरे लिए तुम लज्जित होगी मा ? कहोगी कि विपिन हमारे वंशका कलंक है ?"

इस बातने दयामयीके शूल-सा छेद दिया। क्या मालूम, कोई अन्तर्निहित इशारा तो नहीं है ? इस लड़केको उन्होंने छातीसे लगाकर इतना बड़ा किया है, और अच्छी तरह जानती थीं कि सत्यके लिए—धर्मके लिए ऐसा कोई काम नहीं जो विप्रदास न कर सकता हो। अन्यायका प्रतिवाद करनेमें किसी विपत्ति या किसी फलाफलकी वह परवाह नहीं करता। जब उसकी सिर्फ़ अठारह सालकी उमर थी तब एक मुसलमान परिवारका पक्ष लेकर वह अकेला ही ऐसा काण्ड कर बैठा था कि कैसे प्राण बचाकर वापस आ सका, यह आज तक दया-मयीके लिए रहस्यका व्यापार बना हुआ है। वन्दनाके मुँहसे उस दिनकी रेलकी घटना सुनकर वे मारे शंकाके एक बारगी दंग रह गई थीं। द्विजूके लिए उन्हें उद्वेग रहता है, यह सच है; किन्तु भीतर-ही-भीतर बहुत ज्यादा डर है उन्हें इस बड़े लड़केके लिए। मन-ही-मन यही बात सोच रही थीं। विप्रदासने कहा—" क्यों मा, कलंककी दुश्चिन्ता तो मिट गई न ? जेल तो अचानक किसी दिन मुझे भी हो सकती है।"

दयामयी सहसा व्याकुल होकर बोल उठीं—" बलैयाँ लूँ अपनेकी,—भगवान बचाएँ, ऐसी कुलच्छिनी बात न निकाल मुँहसे बेटा।" उसके बाद ही कहने लगीं—" जेल होगी तुझे और मेरे जीते-जी ? तो फिर इतनी उमर तक देवी-देवताओंकी पूजा क्या की मैंने ? इतनी सम्पत्ति है किसलिए ? सारीकी सारी जायदाद बेच दूँगी तो भी ऐसा नहीं होने दूँगी विपिन।"

विप्रदासने झुककर उनकी पदधूलि ली; दयामयीने सहसा उसे अपनी छातीके पास खींचकर कहा—" द्विजूका जो हो सो होता रहे, पर तू कभी मेरे आँखोंसे ओझल हुआ तो मैं गंगाजीमें डूब मरूँगी विपिन। यह मुझसे न सहा जायगा, सो जान रखना।—" कहते-कहते उनकी आँखोंसे कई बूँद आँसू ढुलक पड़े।

" मा, इस वक्त क्या......" कहते-कहते वन्दना वहाँ आ पहुँची। दयामयीने बेटेको छोड़कर आँखें पोंछ डालीं; और वन्दनाके विस्मित चेहरेकी ओर देखकर हँसते हुए कहा—" लड़केको बहुत दिनोंसे छातीसे नहीं लगाया था, इससे ज़रा साध हुई कि लगा लूँ।"

थी; उसने कहा—" बतानेसे भी तुम समझोगी नहीं वन्दना। तुम्हारी कालेजकी अँग्रेजी पोथियोंमें ये सब तत्त्व नहीं हैं। उनके साथ मिलाकर जाँच करने बैठोगी तो माकी बात तुम्हें बड़ी अद्भुत-सी मालूम देगी। इस आलोचनाको रहने दो।"

सुनकर वन्दना खुश न हुई, बोली—" अँग्रेजी पोथियाँ आपने भी तो कम नहीं पढ़ीं मुखर्जी-साहब, फिर आप कैसे समझ जाते हैं ?"

विप्रदासने कहा—" कौन कहता है कि माको मैं समझता हूँ वन्दना,—नहीं समझता। ये सब बातें सिर्फ़ मेरी माकी पोथीमें ही लिखी हैं,—उसकी भाषा अलग है, अक्षर अलग हैं, व्याकरण भी दूसरा है। उसे केवल मा ही समझती हैं—और कोई नहीं। एँ मा, जो तुम कहने आई थीं सो तो अभी तक कहा ही नहीं ?"

वन्दना समझ गई कि यह इशारा उसीके लिए है। बोली—" मा, इस छाक क्या रसोई बनेगी, यही मैं पूछने आई थी,—अब मैं जाती हूँ, पर आप भी ज़रा जल्दी आना। सब भूल-भालकर फिर कहीं लड़केको गोदमें लिये न बैठी रहना।"—इतना कहकर वह विप्रदासकी ओर ज़रा कटाक्ष करती हुई चली गई।

उसके चले जानेपर दयामयीके चेहरेपर दुश्चिन्ताकी छाया आ पड़ी, क्षण-भर इधर-उधर करके दुविधाके स्वरमें उन्होंने कहा—" विपिन, तू तो खूब धर्मात्मा है, जानता है पिता-माताको कभी धोखा न देना चाहिए—"

विप्रदास बीच ही में बोल उठा—" मा, दुहाई है तुम्हारी, इस तरह तुम भूमिका मत बाँधो। क्या पूछना चाहती हो सो पूछो।"

दयामयीने कहा—" तैंने अचानक आज यह बात क्यों कही कि तुझे भी जेल हो सकती है ? कैलास जानेका संकल्प अभी तक मैंने छोड़ा नहीं सो ठीक, पर अब तो मैं एक कदम भी नहीं हिल सकती विपिन।"

विप्रदास हँस पड़ा, बोला—" कैलास भेजनेको मैं भी उद्विग्न नहीं मा, पर उसका दोष अन्तमें मेरे ही सिर न मढ़ देना। मैंने तो सिर्फ़ एक दृष्टान्त दिया था,—द्विजूकी बात तुम्हें समझानी चाही थी कि सिर्फ़ जेल जानेसे ही किसीके वंशमें कलंक नहीं लग सकता।"

दयामयीने सिर हिलाते हुए कहा—" इन बातोंसे तू मुझे भुलावा नहीं दे सकता विपिन। इधर-उधरकी फ़ाल्तू बात कहनेवाला तू नहीं है,—या तो कुछ

थी; उसने कहा—" बतानेसे भी तुम समझोगी नहीं वन्दना। तुम्हारी कालेजकी अँग्रेजी पोथियोंमें ये सब तत्त्व नहीं हैं। उनके साथ मिलाकर जाँच करने बैठोगी तो माकी बात तुम्हें बड़ी अद्भुत-सी मालूम देगी। इस आलोचनाको रहने दो।"

सुनकर वन्दना खुश न हुई, बोली—" अँग्रेजी पोथियाँ आपने भी तो कम नहीं पढ़ीं मुखर्जी-साहब, फिर आप कैसे समझ जाते हैं?"

विप्रदासने कहा—" कौन कहता है कि माको मैं समझता हूँ वन्दना,—नहीं समझता। ये सब बातें सिर्फ़ मेरी माकी पोथीमें ही लिखी हैं,—उसकी भाषा अलग है, अक्षर अलग हैं, व्याकरण भी दूसरा है। उसे केवल मा ही समझती हैं—और कोई नहीं। ऐं मा, जो तुम कहने आई थीं सो तो अभी तक कहा ही नहीं?"

वन्दना समझ गई कि यह इशारा उसीके लिए है। बोली—" मा, इस छाक क्या रसोई बनेगी, यही मैं पूछने आई थी,—अब मैं जाती हूँ, पर आप भी ज़रा जल्दी आना। सब भूल-भालकर फिर कहीं लड़केको गोदमें लिये न बैठी रहना।"—इतना कहकर वह विप्रदासकी ओर ज़रा कटाक्ष करती हुई चली गई।

उसके चले जानेपर दयामयीके चेहरेपर दुश्चिन्ताकी छाया आ पड़ी, क्षण-भर इधर-उधर करके दुविधाके स्वरमें उन्होंने कहा—" विपिन, तू तो खूब धर्मात्मा है, जानता है पिता-माताको कभी धोखा न देना चाहिए—"

विप्रदास बीच ही में बोल उठा—" मा, दुहाई है तुम्हारी, इस तरह तुम भूमिका मत बाँधो। क्या पूछना चाहती हो सो पूछो।"

दयामयीने कहा—" तैंने अचानक आज यह बात क्यों कही कि तुझे भी जेल हो सकती है? कैलास जानेका संकल्प अभी तक मैंने छोड़ा नहीं सो ठीक, पर अब तो मैं एक कदम भी नहीं हिल सकती विपिन।"

विप्रदास हँस पड़ा, बोला—" कैलास भेजनेको मैं भी उद्विग्न नहीं मा, पर उसका दोष अन्तमें मेरे ही सिर न मढ़ देना। मैंने तो सिर्फ़ एक दृष्टान्त दिया था,—द्विजूकी बात तुम्हें समझानी चाही थी कि सिर्फ़ जेल जानेसे ही किसीके वंशमें कलंक नहीं लग सकता।"

दयामयीने सिर हिलाते हुए कहा—" इन बातोंसे तू मुझे भुलावा नहीं दे सकता विपिन। इधर-उधरकी फ़ाल्तू बात कहनेवाला तू नहीं है,—या तो कुछ

" अकसर तो कहा करता है। कहता है, व्याह करनेवाले और भी बहुतसे आदमी हैं, वे करें। वह सिर्फ़ देशका काम करेगा। तुम लोग सोचते हो कि मैं यहाँ आकर खूब घूमा-फिरा करती हूँ, बड़े आनन्दमें हूँ। पर मैं आनन्दमें नहीं हूँ। इसपर तैंने दे डाला बेल्का दृष्टान्त—जैसे मुझे समझानेके लिए और कोई दृष्टान्त ही तेरे पास न था। एक दिन लेकिन तुझे पता लग जायगा विपिन।"

विप्रदासने कहा—" उसकी भाभीको हुकम देनेको कहो न मा।"

" उसकी बात भी वह न सुनेगा।"

" सुनेगा मा, सुनेगा। समय होते ही सुनेगा।"—फिर ज़रा हँसके बोला—" और अगर मुझे आज्ञा दो तो मैं भी उसके लिए पात्री ढूँढ़ सकता हूँ।"

इतनेमें वन्दना कमरेके अन्दर चली आई और शिकायतके स्वरमें बोली—" कहाँ, आई तो नहीं माँ? मैं कबसे बैठी हूँ।"

" चलो बेटी, मैं आ रही हूँ।"

विप्रदासने कहा—" अपने अक्षय-बाबूकी उस लड़कीकी तुम्हें याद है मा? अब वह बड़ी हो गई है। जैसा उसका रूप है, गुणमें भी वह वैसी ही है। हम लोगोंके लिए अपना ही घर है, कहो तो लड़की देख आऊँ, बातचीत करूँ? मेरा तो विश्वास है द्विजूको वह नापसन्द न होगी।"

" नहीं नहीं, अभी रहने दे।"—कहकर दयामयीने पल-भरके लिए एक बार वन्दनाके मुँहकी ओर देखा, फिर बोलीं—" सतीकी इच्छा है,—नहीं,—नहीं विपिन, बहूसे पूछे बग़ैर तुझे अभी कुछ करने-धरनेकी ज़रूरत नहीं।"

अब वन्दनाने बात की। अपनी सुन्दर और शान्त दृष्टिसे दोनोंकी तरफ देखकर बोली—" इसमें हर्ज़ ही क्या है मा? यहीं तो है कलकत्तेमें, चलिए न जीजीको लेकर, हम लोग चलके देख आवें।"

सुनकर दयामयी मुसीबतमें पड़ गईं; क्या जवाब दें, उन्हें कुछ ढूँढ़े न मिला।

विप्रदासने कहा—" यह अच्छा प्रस्ताव है मा। अक्षय बाबू स्वधर्मनिष्ठ ब्राह्मणपण्डित हैं, संस्कृतके अध्यापक हैं। लड़कीको उन्होंने स्कूल-कालेजमें पढ़ाकर तो पास नहीं करवाया, पर जतनसे उसे सिखाया बहुत-कुछ है। एक दिन उन लोगोंके यहाँ मेरा निमंत्रण था। उस दिन मैंने उस लड़कीसे बहुत-सी बातें पूछी थीं। ऐसा लगा कि बापने जो मनकी साधसे लड़कीका नाम रखा था मैत्रेयी, सो असार्थक नहीं हुआ। जाओ न मा, जाकर एक बार उसे देख

" अकसर तो कहा करता है। कहता है, ब्याह करनेवाले और भी बहुतसे आदमी हैं, वे करें। वह सिर्फ़ देशका काम करेगा। तुम लोग सोचते हो कि मैं यहाँ आकर खूब घूमा-फिरा करती हूँ, बड़े आनन्दमें हूँ। पर मैं आनन्दमें नहीं हूँ। इसपर तैंने दे डाला जेलका दृष्टान्त—जैसे मुझे समझानेके लिए और कोई दृष्टान्त ही तेरे पास न था। एक दिन लेकिन तुझे पता लग जायगा विपिन। "

विप्रदासने कहा—" उसकी भाभीको हुकम देनेको कहो न मा। "

" उसकी बात भी वह न सुनेगा। "

" सुनेगा मा, सुनेगा। समय होते ही सुनेगा। "—फिर ज़रा हँसके बोला—" और अगर मुझे आज्ञा दो तो मैं भी उसके लिए पात्री ढूँढ़ सकता हूँ। "

इतनेमें वन्दना कमरेके अन्दर चली आई और शिकायतके स्वरमें बोली—" कहाँ, आई तो नहीं माँ ? मैं कबसे बैठी हूँ। "

" चलो बेटी, मैं आ रही हूँ। "

विप्रदासने कहा—" अपने अक्षय-बाबूकी उस लड़कीकी तुम्हें याद है मा ? अब वह बड़ी हो गई है। जैसा उसका रूप है, गुणमें भी वह वैसी ही है। हम लोगोंके लिए अपना ही घर है, कहो तो लड़की देख आऊँ, बातचीत करूँ ? मेरा तो विश्वास है द्विजूको वह नापसन्द न होगी। "

" नहीं नहीं, अभी रहने दे। "—कहकर दयामयीने पल-भरके लिए एक बार वन्दनाके मुँहकी ओर देखा, फिर बोलीं—" सतीकी इच्छा है,—नहीं,—नहीं विपिन, बहूसे पूछे बगैर तुझे अभी कुछ करने-धरनेकी ज़रूरत नहीं। "

अब वन्दनाने बात की। अपनी सुन्दर और शान्त दृष्टिसे दोनोंकी तरफ देखकर बोली—" इसमें हर्ज़ ही क्या है मा ? यहीं तो है कलकत्तेमें, चलिए न जीजीको लेकर, हम लोग चलके देख आवें। "

सुनकर दयामयी मुसीबतमें पड़ गईं; क्या जवाब दें, उन्हें कुछ ढूँढ़े न मिला।

विप्रदासने कहा—" यह अच्छा प्रस्ताव है मा। अक्षय बाबू स्वधर्मनिष्ठ ब्राह्मणपण्डित हैं, संस्कृतके अध्यापक हैं। लड़कीको उन्होंने स्कूल-कालेजमें पढ़ाकर तो पास नहीं करवाया, पर जतनसे उसे सिखाया बहुत-कुछ है। एक दिन उन लोगोंके यहाँ मेरा निमंत्रण था। उस दिन मैंने उस लड़कीसे बहुत-सी बातें पूछी थीं। ऐसा लगा कि बापने जो मनकी साधसे लड़कीका नाम रखा था मैत्रेयी, सो असार्थक नहीं हुआ। जाओ न मा, जाकर एक बार उसे देख

उसकी होती रहीं,—और तू कहता है कि हम लोग और किसीको देख आई हैं !"

विप्रदासने कहा—" वन्दनाके सब सवालोंका वह शायद जवाब न दे सकी होगी, परन्तु मा, यह भी तो सोचो कि पढ़ाई-लिखाईमें बन्दनाने स्कूल-कॉलेजमें कितनी किताबें पढ़के कितनी परीक्षाएँ पास की हैं; और उसने सिर्फ बापसे ही सब-कुछ सीखा है। ऐसा समझो जैसे मेरे साथ तुम्हारे छोटे बेटेमें फर्क है।"

सुनके दयामयीकी दोनों आँखें मारे कौतुकके नाच उठीं, बोलीं—" चुप रह विपिन, तू चुप रह। द्विजू बगलके कमरेमें है, सुन लेगा तो मारे शर्मके घर छोड़के भाग जायगा।"—फिर ज़रा रुककर कहने लगीं—" तेरी मा मूरख है सो क्या इतनी मूरख है कि कालेजमें पास करनेको ही चतुर्वर्ग मान बैठेगी ? सो बात नहीं है रे, बल्कि छोटे-छोटे शब्दोंमें मीठे तौरसे उसने बन्दनाकी सभी बातोंका जवाब दिया था। गाड़ीमें आते हुए बन्दनाने उसकी कितनी तारीफ की थी। पर मेरा कहना है कि हमारे जैसे गृहस्थ-घरानेमें ज़रूरत क्या है बेटा, इतनी पढ़ी-लिखीकी ? मेरी एक बहू जैसी आई है, दूसरी वैसी ही आ जावे तो काम चल जायगा। नहीं तो विद्याके घमण्डमें आकर यदि कहीं बड़े-बूढ़ोंको तुच्छ समझने लगे ! यह नहीं होनेका।"

विप्रदास समझ गया कि जिरहका जवाब मासे बन नहीं रहा है, गड़बड़ हुआ जा रहा है; उसने हँसते हुए कहा—" इसका डर मत करो मा। विद्या जिनमें कम होती है उन्हींमें ज्यादा घमण्ड होता है; उसने बापसे अगर सचमुच ही कुछ सीखा हो तो आचार-आचरणमें सबकी विनय करके ही चलेगी, यह तुम देख लेना।"

इस युक्तिको मा अस्वीकार न कर सकीं, बोलीं—" यह बात तेरी सच है, पर पहलेसे मालूम कैसे पड़े बता ! इसके सिवा हमारे गँवई-गाँवमें विद्याकी कमी-बेशी कोई जाँचने नहीं आता, पर बहू देखकर किसीने नाक चढ़ाकर कह दिया कि बूढ़ी-लुगाईके क्या आँखें न थीं जो ऐसी बहूके पास ऐसी बहू लाके खड़ी कर दी, तो वह मुझसे न सहा जायगा बेटा।"

विप्रदास कुछ देर मौन रहकर बोला—" पर अक्षयबाबूको तो कुछ-न-कुछ जवाब देना पड़ेगा मा। उस दिन उन्हें भरोसा दे आया था कि मेरी मा शायद नापसन्द न करेंगी ?"

सुनके दयामयी चंचल हो उठीं, बोलीं—" यह बात न कहता तो ठीक

उसकी होती रहीं,—और तू कहता है कि हम लोग और किसीको देख आई हैं!"

विप्रदासने कहा—"बन्दनाके सब सवालोंका वह शायद जवाब न दे सकी होगी, परन्तु मा, यह भी तो सोचो कि पढ़ाई-लिखाईमें बन्दनाने स्कूल-कॉलेजमें कितनी किताबें पढ़के कितनी परीक्षाएँ पास की हैं; और उसने सिर्फ बापसे ही सब-कुछ सीखा है। ऐसा समझो जैसे मेरे साथ तुम्हारे छोटे बेटेमें फर्क है।"

सुनके दयामयीकी दोनों आँखें मारे कौतुकके नाच उठीं, बोलीं—"चुप रह विपिन, तू चुप रह। द्विजू बगलके कमरेमें है, सुन लेगा तो मारे शर्मके घर छोड़के भाग जायगा।"—फिर ज़रा रुककर कहने लगीं—"तेरी मा मूरख है सो क्या इतनी मूरख है कि कालेजमें पास करनेको ही चतुर्वर्ग मान बैठेगी? सो बात नहीं है रे, बल्कि छोटे-छोटे शब्दोंमें मीठे तौरसे उसने बन्दनाकी सभी बातोंका जवाब दिया था। गाड़ीमें आते हुए बन्दनाने उसकी कितनी तारीफ की थी। पर मेरा कहना है कि हमारे जैसे गृहस्थ-घरानेमें ज़रूरत क्या है बेटा, इतनी पढ़ी-लिखीकी? मेरी एक बहू जैसी आई है, दूसरी वैसी ही आ जावे तो काम चल जायगा। नहीं तो विद्याके घमण्डमें आकर यदि कहीं बड़े-बूढ़ोंको तुच्छ समझने लगे! यह नहीं होनेका।"

विप्रदास समझ गया कि विरहका जवाब मासे बन नहीं रहा है, गड़बड़ हुआ जा रहा है; उसने हँसते हुए कहा—"इसका डर मत करो मा। विद्या जिनमें कम होती है उन्हींमें ज्यादा घमण्ड होता है; उसने बापसे अगर सचमुच ही कुछ सीखा हो तो आचार-आचरणमें सबकी विनय करके ही चलेगी, यह तुम देख लेना।"

इस युक्तिको मा अस्वीकार न कर सकीं, बोलीं—"यह बात तेरी सच है, पर पहलेसे मालूम कैसे पड़े बता? इसके सिवा हमारे गँवई-गाँवमें विद्याकी कमी-बेशी कोई बाँचने नहीं आता, पर बहू देखकर किसीने नाक चढ़ाकर कह दिया कि बूढ़ी-लुगाईके क्या आँखें न थीं जो ऐसी बहूके पास ऐसी बहू लाके खड़ी कर दी, तो वह मुझसे न सहा जायगा बेटा।"

विप्रदास कुछ देर मौन रहकर बोला—"पर अक्षयबाबूको तो कुछ-न-कुछ जवाब देना पड़ेगा मा। उस दिन उन्हें भरोसा दे आया था कि मेरी मा शायद नापसन्द न करेंगी?"

सुनके दयामयी चंचल हो उठीं, बोलीं—"यह बात न कहता तो ठीक

भी विलायतमें रहकर बहुत-सी डिग्रियाँ हासिल की हैं और अब मद्रासमें शिक्षा-विभागमें अच्छी नौकरी कर रहा है। बात हो गई है कि बन्दनाके साथ ब्याह हो जानेपर कुछ दिनकी छुट्टी लेकर उसके साथ यह फिर विलायत जायगा। वहाँ बन्दना चाहे तो कॉलेज में भरती हो जायगी, नहीं तो सिर्फ देखकर ही दोनों साथ लौट आवेंगे। देखो सुधीर, तुम लोग अगर इसी अगस्त-सेप्टेम्बरमें ही जानेकी तय कर सको तो मैं भी न-हो-तो तीनेक महीनेकी छुट्टी लेकर घूम आऊँगा। क्या कहती है री बिन्दो,—ठीक है न ?

बन्दनाने वहींसे बैठे-बैठे धीरेसे कहा—"ठीक क्यों न होगा बापूजी, तुम साथ रहोगे तो अच्छा ही रहेगा।"

राय साहबने उत्साहके साथ कहा—"उससे एक और सुभीता यह होगा कि तुम लोगोंके ब्याहके बाद भी महीने-भरका समय मिल जायगा, किसी तरहकी जल्दबाजी न करनी पड़ेगी। समझ गये न सुधीर ?"

इसका सुधी और बन्दना दोनोंने सिर हिलाकर समर्थन किया। दयामयीने अब समझ लिया कि यह लड़का राय साहबका भावी जमाई है। अतएव, वह भी पुत्र-स्थानीय है। दयामयीके हृदयमें सहसा एक भारी उथल-पुथल हो गई; पर वे विप्रदासकी मा ठहरीं, बलरामपुरके ख्यातिप्राप्त मुखर्जी-परिवारकी स्वामिनी, उन्होंने अपनेको सम्हाल लिया; और उस लड़केसे पूछा—"सुधीर, तुम्हारा देश कहाँ है ?"

सुधीरने कहा—"अभी तो बम्बई समझिए। लेकिन फादरके मुँहसे सुना था कि दुर्गापुरके रहनेवाले थे हम लोग; पर अब वहाँ शायद हम लोगोंका कुछ भी नहीं है।"

"कौनसा दुर्गापुर ? बर्धमान जिलेका ?"

सुधीरने कहा—"हाँ, पिताजीसे तो ऐसा ही सुना है। कालनाके पास एक कोई छोटा-सा गाँव है, अब तो सुनते हैं कि मैलेरियासे वह बिलकुल ध्वंस हो चुका है।"

दयामयीने क्षण-भर मौन रहकर पूछा—"तुम्हारे पिताजीका नाम क्या है ?"

सुधीरने कहा—"पिताजीका नाम श्रीरामचन्द्र बसु है।"

दयामयीने चौंक उठीं, बोलीं—"तुम्हारे बापका नाम क्या था, हरिहर बसु ?"

प्रश्न सुनकर राय साहब तक आश्चर्यान्वित हो गये, बोले—"आप उन लोगोंको जानती हैं क्या ?"

"हाँ, जानती हूँ। दुर्गापुरमें मेरी ननसाल है। बचपनमें मैं अपनी नानीके

भी विलायतमें रहकर बहुत-सी डिग्रियाँ हासिल की हैं और अब मद्रासमें शिक्षा-विभागमें अच्छी नौकरी कर रहा है। बात हो गई है कि वन्दनाके साथ ब्याह हो जानेपर कुछ दिनकी छुट्टी लेकर उसके साथ यह फिर विलायत जायगा। वहाँ वन्दना चाहे तो कॉलेज में भरती हो जायगी, नहीं तो सिर्फ देखकर ही दोनों साथ लौट आवेंगे। देखो सुधीर, तुम लोग अगर इसी अगस्त-सेप्टेम्बरमें ही जानेकी तय कर सको तो मैं भी न-हो-तो तीनेक महीनेकी छुट्टी लेकर घूम आऊँगा। क्या कहती है री बिन्दो,—ठीक है न ?

वन्दनाने वहींसे बैठे-बैठे धीरेसे कहा—" ठीक क्यों न होगा बापूजी, तुम साथ रहोगे तो अच्छा ही रहेगा। "

राय साहबने उत्साहके साथ कहा—" उससे एक और सुभीता यह होगा कि तुम लोगोंके ब्याहके बाद भी महीने-भरका समय मिल जायगा, किसी तरहकी जल्दबाजी न करनी पड़ेगी। समझ गये न सुधीर ? "

इसका सुधी और वन्दना दोनोंने सिर हिलाकर समर्थन किया। दयामयीने अब समझ लिया कि यह लड़का राय साहबका भावी जमाई है। अतएव, वह भी पुत्र-स्थानीय है। दयामयीके हृदयमें सहसा एक भारी उथल-पुथल हो गई; पर वे विप्रदासकी मा ठहरीं, बलरामपुरके ख्यातिप्राप्त मुखर्जी-परिवारकी स्वामिनी, उन्होंने अपनेको सम्हाल लिया; और उस लड़केसे पूछा—" सुधीर, तुम्हारा देश कहाँ है ? "

सुधीरने कहा—" अभी तो बम्बई समझिए। लेकिन फादरके मुँहसे सुना था कि दुर्गापुरके रहनेवाले थे हम लोग; पर अब वहाँ शायद हम लोगोंका कुछ भी नहीं है। "

" कौनसा दुर्गापुर ? वर्धमान जिलेका ? "

सुधीरने कहा—" हाँ, पिताजीसे तो ऐसा ही सुना है। कालनाके पास एक कोई छोटा-सा गाँव है, अब तो सुनते हैं कि मैलेरियासे वह बिलकुल ध्वंस हो चुका है। "

दयामयीने क्षण-भर मौन रहकर पूछा—" तुम्हारे पिताजीका नाम क्या है ? "

सुधीरने कहा—" पिताजीका नाम श्रीरामचन्द्र वसु है। "

दयामयीने चौंक उठीं, बोलीं—" तुम्हारे बापका नाम क्या था, हरिहर बसु ? "

प्रश्न सुनकर राय साहब तक आश्चर्यान्वित हो गये, बोले—" आप उन लोगोंको जानती हैं क्या ? "

" हाँ, जानती हूँ। दुर्गापुरमें मेरी ननसाल है। बचपनमें मैं अपनी नानीके

" नहीं बेटा, तू मुझे रोके मत। द्विजूको साथ जानेके लिए कह दे; न हो तो और कोई हम लोगोंको पहुँचा आवे।"

" ऐसा ही होगा मा।"—कहके विप्रदासने उनके पाँवोंकी धूल सिरसे लगाई और वहाँसे चला आया। अपने सोनेके कमरेमें आकर देखा कि सती अत्यन्त व्यस्त है और पास बैठी हुई अन्नदा 'सन्देश' फल-मूल और लड़केकी दूधकी घंटी (छोटी लुटिया) सम्हालकर टोकनीमें रख रही है।

सती माथेपर घूँघट खींचकर उठके खड़ी हो गई। विप्रदासने कहा—" अन्नदा-दीदी, बात क्या है मालूम है ?"

" नहीं भइया, कुछ भी नहीं मालूम। सबेरे माने मुझे बुलाकर कहा, बच्चे और बहूको खाने-पीनेकी तकलीफ न हो, वे नौ बजेकी गाड़ीसे घर जा रही हैं।"

विप्रदासने सतीसे कारण पूछा तो उसने भी सिर हिलाकर बताया कि वह भी कुछ नहीं जानती।

सुनकर विप्रदास स्तब्ध रह गया। अन्नदा न भी जानती हो, पर सासुकी बात बहू न जाने, इससे ज्यादा आश्चर्यकी बात और क्या हो सकती है ? वह कुछ क्षण चुपचाप खड़ा रहा, फिर नीचे चला गया; और उद्वेगके साथ यही सोचता हुआ गया कि यह तो माके बिल्कुल स्वभाव-विरुद्ध बात है। क्या मालूम कि कौनसा गहरा दुःख उनके इस विपरीत आचरणके पीछे छिपा रह गया, जिसे किसी पर भी उन्होंने प्रकट नहीं किया।

दयामयी तैयार होकर जब नीचे उतरीं तब भी ट्रेन छूटनेमें बहुत वक्त था, परन्तु आज उन्हें किसी भी कदर देर नहीं सुहाती, मानो किसी तरह रवाना हो जायँ तो उनके जीमें जी आवे। सामने मोटर तैयार है, और एक दूसरी मोटरमें चीज-वस्त लादकर नौकर वगैरह सवार हो चुके हैं; बैग हाथमें लिये विप्रदासको आते देख उन्होंने आश्चर्यके स्वरमें पूछा—" द्विजू कहाँ है ?"

विप्रदासने कहा—" वह नहीं जायगा मा, मैं ही तुम्हें पहुँचाये आता हूँ।"

" क्यों, वह जानेको राजी नहीं हुआ शायद ?"

विप्रदासने विनयके साथ कहा—" उसके लिए ऐसी बात तुम्हें न कहनी चाहिए मा। तुम्हारे हुकम देनेपर कब उसने हुकम उदूली की है बताओ तो ?"

" तो हो क्या गया ? जाता क्यों नहीं ?"

" मैंने ही जानेको नहीं कहा मा।"—इतना कहकर विप्रदास हँसता हुआ बोला—" जिस बातके लिए तुम इतनी उद्विग्न हो उठी हो, अपने ठाकुरजी,

" नहीं बेटा, तू मुझे रोके मत। द्विजूको साथ जानेके लिए कह दे; न हो तो और कोई हम लोगोंको पहुँचा आवे।"

" ऐसा ही होगा मा।"—कहके विप्रदासने उनके पाँवोंकी धूल सिरसे लगाई और वहाँसे चला आया। अपने सोनेके कमरेमें आकर देखा कि सती अत्यन्त व्यस्त है और पास बैठी हुई अन्नदा 'सन्देश' फल-मूल और लड़केकी दूधकी घंटी (छोटी लुटिया) सम्हालकर टोकनीमें रख रही है।

सती माथेपर घूँघट खींचकर उठके खड़ी हो गई। विप्रदासने कहा—" अन्नदा-दीदी, बात क्या है मालूम है?"

" नहीं भइया, कुछ भी नहीं मालूम। सबेरे माने मुझे बुलाकर कहा, बच्चे और बहूको खाने-पीनेकी तकलीफ न हो, वे नौ बजेकी गाड़ीसे घर जा रही हैं।"

विप्रदासने सतीसे कारण पूछा तो उसने भी सिर हिलाकर बताया कि वह भी कुछ नहीं जानती।

सुनकर विप्रदास स्तब्ध रह गया। अन्नदा न भी जानती हो, पर सासुकी बात बहू न जाने, इससे ज्यादा आश्चर्यकी बात और क्या हो सकती है? वह कुछ क्षण चुपचाप खड़ा रहा, फिर नीचे चला गया; और उद्वेगके साथ यही सोचता हुआ गया कि यह तो माके बिल्कुल स्वभाव-विरुद्ध बात है। क्या मालूम कि कौनसा गहरा दुःख उनके इस विपरीत आचरणके पीछे छिपा रह गया, जिसे किसी पर भी उन्होंने प्रकट नहीं किया।

दयामयी तैयार होकर जब नीचे उतरीं तब भी ट्रेन छूटनेमें बहुत वक्त था, परन्तु आज उन्हें किसी भी कदर देर नहीं सुहाती, मानो किसी तरह रवाना हो जायँ तो उनके जीमें जी आवे। सामने मोटर तैयार है, और एक दूसरी मोटरमें चीज-वस्त लादकर नौकर वगैरह सवार हो चुके हैं; बैग हाथमें लिये विप्रदासको आते देख उन्होंने आश्चर्यके स्वरमें पूछा—" द्विजू कहाँ है?"

विप्रदासने कहा—" वह नहीं जायगा मा, मैं ही तुम्हें पहुँचाये आता हूँ।"

" क्यों, वह जानेको राजी नहीं हुआ शायद?"

विप्रदासने विनयके साथ कहा—" उसके लिए ऐसी बात तुम्हें न कहनी चाहिए मा। तुम्हारे हुकम देनेपर कब उसने हुकम उदूली की है बताओ तो?"

" तो हो क्या गया? जाता क्यों नहीं?"

" मैंने ही जानेको नहीं कहा मा।"—इतना कहकर विप्रदास हँसता हुआ बोला—" जिस बातके लिए तुम इतनी उद्विग्न हो उठी हो, अपने ठाकुरजी,

कल शामको ही बात हुई थी कि राय साहबके बम्बई रवाना हो जानेपर सब एक साथ बलरामपुर चलेंगे। किन्तु आज उसका जिक्र तक नहीं, सुदूर भविष्यमें किसी दिनके लिए मौखिक आह्वान तक नहीं।

घंटे-भर बाद अपने हाथमें चायका सामान लेकर वन्दना अपने पिताके कमरेमें पहुँची तो वे अत्यन्त पश्चात्तापके साथ कहने लगे—" व्यानजी वग़ैरह चली गईं, सवेरे उठ न सका बेटी, छि छि, न जाने उन्होंने क्या समझा होगा मनमें।"

वन्दनाने कहा—" बापूजी, अपन बम्बई कब चलेंगे ?"

पिताने कहा—" तुम्हारी तो बलरामपुर जानेकी बात थी बेटी, तुम नहीं गईं ?"

लड़कीने कहा—" तुम्हें अकेला छोड़कर कैसे जाती बापूजी, तुम जो अभी तक अच्छे नहीं हो सके।"

" अच्छा तो मैं हो गया बेटी। व्यानजीको वचन दिया था कि तुम जाओगी; न-हो-तो, जाते वक्त मैं तुम्हें बलरामपुर छोड़ता जाऊँगा। क्यों बेटी ?"

" नहीं बापूजी, सो नहीं होगा। तुम्हें इतनी दूरका सफर मैं अकेले नहीं करने दूँगी।"

लड़कीकी बात सुनकर पिता पुलकित चित्तसे उसका तिरस्कार करते हुए बोले—" चल पगली, मुलाकात होनेपर व्यानजी तेरी हँसी उड़ाती हुई कहेंगी, बूढ़े बापको यह लड़की अपनी आँखोंके ओझल नहीं कर सकती। छि-छि—"

" तुम चाय पीओ बापूजी, मैं अभी आई।"—कहकर वन्दना वहाँसे चल दी।

१४

संध्या बीत चली थी। वन्दनाने आके द्विजदासके कमरेके सामने खड़े होकर आवाज दी—" एक बार भीतर आ सकती हूँ द्विजू बाबू ?" भीतरसे जवाब आया—" आ सकती हैं। एक बार नहीं, शत सहस्र असंख्य बार आ सकती हैं।"

वन्दनाने दोनों किवाड़ोंको हद तक खोलकर भीतर प्रवेश किया और वह कमरेकी सबकी सब बत्तियाँ जलाकर खुले हुए जंगलेके पास एक कुरसी खींचकर बैठ गई।

कल शामको ही बात हुई थी कि राय साहबके बम्बई रवाना हो जानेपर सब एक साथ बलरामपुर चलेंगे। किन्तु आज उसका जिक्र तक नहीं, सुदूर भविष्यमें किसी दिनके लिए मौखिक आह्वान तक नहीं।

घंटे-भर बाद अपने हाथमें चायका सामान लेकर वन्दना अपने पिताके कमरेमें पहुँची तो वे अत्यन्त पश्चात्तापके साथ कहने लगे—"व्यानजी वग़ैरह चली गईं, सबेरे उठ न सका बेटी, छि छि, न जाने उन्होंने क्या समझा होगा मनमें।"

वन्दनाने कहा—"बापूजी, अपन बम्बई कब चलेंगे?"

पिताने कहा—"तुम्हारी तो बलरामपुर जानेकी बात थी बेटी, तुम नहीं गईं?"

लड़कीने कहा—"तुम्हें अकेला छोड़कर कैसे जाती बापूजी, तुम जो अभी तक अच्छे नहीं हो सके।"

"अच्छा तो मैं हो गया बेटी। व्यानजीको वचन दिया था कि तुम जाओगी; न-हो-तो, जाते वक्त मैं तुम्हें बलरामपुर छोड़ता जाऊँगा। क्यों बेटी?"

"नहीं बापूजी, सो नहीं होगा। तुम्हें इतनी दूरका सफर मैं अकेले नहीं करने दूँगी।"

लड़कीकी बात सुनकर पिता पुलकित चित्तसे उसका तिरस्कार करते हुए बोले—"चल पगली, मुलाकात होनेपर व्यानजी तेरी हँसी उड़ाती हुई कहेंगी, बूढ़े बापको यह लड़की अपनी आँखोंके ओझल नहीं कर सकती। छि-छि—"

"तुम चाय पीओ बापूजी, मैं अभी आई।"—कहकर वन्दना वहाँसे चल दी।

१४

संध्या बीत चली थी। वन्दनाने आके द्विजदासके कमरेके सामने खड़े होकर आवाज दी—"एक बार भीतर आ सकती हूँ द्विजू बाबू?" भीतरसे जवाब आया—"आ सकती हैं। एक बार नहीं, शत सहस्र असंख्य बार आ सकती हैं।"

वन्दनाने दोनों किवाड़ोंको हद तक खोलकर भीतर प्रवेश किया और वह कमरेकी सबकी सब बत्तियाँ जलाकर खुले हुए जंगलेके पास एक कुरसी खींचकर बैठ गई।

कारण, भाभीने किंचित् अनुमान कर लिया है। और उसका यत्किंचित् अंश मुझे भी प्राप्त हुआ है।",

वन्दनाने कहा—"वह यत्किंचित् अंश ही आपको मुझे बताना पड़ेगा।"

द्विजदास क्षण-भर मौन रहकर बोला—"तब तो तुमने मुझे धर्म-संकटमें डाल दिया वन्दना। क्या उसे सुने बगैर तुम्हारा काम नहीं चल सकता?"

"नहीं, सो नहीं हो सकता, आपको कहना ही पड़ेगा।"

"न सुनो तो क्या है?"

वन्दनाने कहा—"देखिए द्विजू बाबू, हम लोगोंमें शर्त हुई थी कि इस घरमें आपकी सब बातें मैं सुनूँगी और मेरी सब बातें आप सुनेंगे। आप जानते हैं कि आपकी एक भी आज्ञा मैंने उल्लंघन नहीं की?"—कहते-कहते उसकी आँखें भरी आ रही थीं कि उसने दूसरी ओर देखकर किसी तरह अपनेको सम्हाल लिया।

द्विजदासने व्यथित होकर कहा—"बिलकुल ही व्यर्थकी बात है, इसलिए मेरी कहनेकी इच्छा नहीं थी। मा तुमपर ही नाराज होकर चली गई हैं, यह ठीक है, मगर इसमें तुम्हारा ज़रा भी दोष नहीं। सारा दोष माका अपना ही है। भाभीका भी थोड़ा-सा है, कारण मुझे सन्देह है कि प्रत्यक्षमें न होनेपर भी परोक्षके षड्यंत्रमें उन्होंने भी साथ दिया है। परन्तु सबसे ज्यादा निरपराध है बेचारा द्विजदास खुद।"

वन्दना अधीर हो उठी, बोली—"बताइए न जल्दी, षड्यंत्र काहेका था?"

द्विजदासने कहा—"षड्यंत्र शब्दका प्रयोग शायद उचित न होगा। बात यह है कि माने मन-ही-मन किया था सोनेकी लंकाका बँटवारा; परन्तु हिसाबकी गलतीसे जब भाग्यमें आया शून्य, तब उन्हें सारे संसारपर गुस्सा आ गया। 'गुस्सा' भी ठीक नहीं कहा जा सकता, बल्कि आशा टूट जानेका क्षुब्ध-अभिमान कहना चाहिए।"

वन्दना चुपचाप उसकी तरफ देखती रही, द्विजदास कहने लगा—"तुम तो जानती ही हो कि एक दिन तुमपर उनकी जितनी ही ज्यादा नफरत या अरुचि थी, बादमें और एक दिन तुमपर उनका उतना ही गहरा स्नेह हो गया। रूप-गुणमें, विद्या-बुद्धिमें, काम-काज और दया-मायामें सिर्फ एक भाभीके सिवा माकी दृष्टिमें कोई भी तुम्हारी जोड़का नहीं रहा। किसकी मजाल कि तुम्हें कोई म्लेच्छ कह दे? उसी वक्त मा कमर बाँधकर प्रमाणित करने बैठ

कारण, भाभीने किंचित् अनुमान कर लिया है। और उसका यत्किंचित् अंश मुझे भी प्राप्त हुआ है।",

वन्दनाने कहा—"वह यत्किंचित् अंश ही आपको मुझे बताना पड़ेगा।"

द्विजदास क्षण-भर मौन रहकर बोला—"तब तो तुमने मुझे धर्म-संकटमें डाल दिया वन्दना। क्या उसे सुने बगैर तुम्हारा काम नहीं चल सकता?"

"नहीं, सो नहीं हो सकता, आपको कहना ही पड़ेगा।"

"न सुनो तो क्या है?"

वन्दनाने कहा—"देखिए द्विजू बाबू, हम लोगोंमें शर्त हुई थी कि इस घरमें आपकी सब बातें मैं सुनूँगी और मेरी सब बातें आप सुनेंगे। आप जानते हैं कि आपकी एक भी आज्ञा मैंने उल्लंघन नहीं की?"—कहते-कहते उसकी आँखें भरी आ रही थीं कि उसने दूसरी ओर देखकर किसी तरह अपनेको सम्हाल लिया।

द्विजदासने व्यथित होकर कहा—"बिलकुल ही व्यर्थकी बात है, इसलिए मेरी कहनेकी इच्छा नहीं थी। मा तुमपर ही नाराज होकर चली गई हैं, यह ठीक है, मगर इसमें तुम्हारा ज़रा भी दोष नहीं। सारा दोष माका अपना ही है। भाभीका भी थोड़ा-सा है, कारण मुझे सन्देह है कि प्रत्यक्षमें न होनेपर भी परोक्षके षड्यंत्रमें उन्होंने भी साथ दिया है। परन्तु सबसे ज्यादा निरपराध है बेचारा द्विजदास खुद।"

वन्दना अधीर हो उठी, बोली—"बताइए न जल्दी, षड्यंत्र काहेका था?"

द्विजदासने कहा—"षड्यंत्र शब्दका प्रयोग शायद उचित न होगा। बात यह है कि माने मन-ही-मन किया था सोनेकी लंकाका बँटवारा; परन्तु हिसाबकी गल्तीसे जब भाग्यमें आया शून्य, तब उन्हें सारे संसारपर गुस्सा आ गया। 'गुस्सा' भी ठीक नहीं कहा जा सकता, बल्कि आशा टूट जानेका क्षुब्ध-अभिमान कहना चाहिए।"

वन्दना चुपचाप उसकी तरफ देखती रही, द्विजदास कहने लगा—"तुम तो जानती ही हो कि एक दिन तुमपर उनकी जितनी ही ज्यादा नफरत या अरुचि थी, बादमें और एक दिन तुमपर उनका उतना ही गहरा स्नेह हो गया। रूप-गुणमें, विद्या-बुद्धिमें, काम-काज और दया-मायामें सिर्फ एक भाभीके सिवा माकी दृष्टिमें कोई भी तुम्हारी जोड़का नहीं रहा। किसकी मजाल कि तुम्हें कोई म्लेच्छ कह दे? उसी वक्त मा कमर बाँधकर प्रमाणित करने बैठ

होगी अगर इससे उन्होंने कमसे कम इतनी नसीहत ली हो कि संसारमें बुद्धि नामकी चीज़ सिर्फ़ उनकी अपनी ही नहीं है, बल्कि उसपर औरोंका भी दावा हो सकता है। कारण, मुझे न सही, भाई साहबको भी अगर वे अपने षड्यंत्रका आभास दे देतीं तो, और कुछ हो या न हो, इस कर्मभोगसे उन्हें छुटकारा मिल सकता था। भाई साहब और मैं दोनों ही जानते थे कि तुम दूसरेकी वागदत्ता वधू हो, परस्पर प्रणय-जंजीरसे आबद्ध हो, लिहाजा उस व्यवस्थासे अन्यथा होना न सम्भव है और न वांछनीय ही।"

बन्दनाने पूछा—"आप लोगोंने किससे कब सुना?"

द्विजदासने कहा—"तुम्हारे पिताजीसे। यहाँ हम लोगोंके आनेके दिन ही राय साहबने तुम लोगोंके प्रेम, वागदान और शीघ्र होनेवाले विवाहकी मनोज्ञ आलोचनासे हम दोनों भाइयोंके चारों कानोंमें सुधा-वर्षण किया था। नहीं नहीं, नाराज मत होओ वन्दना, पिताजी सीधे-सादे निरीह आदमी हैं, चित्तकी प्रफुल्लतामें उन्होंने इस सुसंवादको आत्मीयजनोंसे छिपा रखनेकी जरूरत ही नहीं महसूस की।"

वन्दनाने कुछ देर मौन रहकर पूछा—"इसीलिए क्या मुखर्जी साहबने मैत्रेयीको देखनेके लिए हम लोगोंको भेजा था?"

द्विजदासने कहा—"सो मुझे ठीक नहीं मालूम। कारण भाई साहबके मनकी पूरी बात देवताओंके लिए भी अज्ञात है। सिर्फ़ इतना जानता हूँ कि उनके मतसे मैत्रेयी देवी सर्वगुणसम्पन्ना कन्या हैं। बलरामपुरके धनी और महामाननीय मुखर्जी-परिवारके अयोग्या नहीं।

बन्दनाने पूछा—"मैत्रेयी देवीके सम्बन्धमें आपका क्या अभिमत है?"

द्विजदासने कहा—"इस घरमें यह प्रश्न अवैध है। मैं तो तृतीय-पुरुष (थर्ड-परसन) हूँ। प्रथम और द्वितीय-पुरुष अर्थात् मा और भाई साहब किसी भी एक नारीके गलेमें मुझे बाँध देंगे और उसीके कण्ठलग्न होकर मैं परमानन्दसे लटकता रहूँगा। यही इस घरकी सनातन रीति है, इसमें परिवर्तन नहीं हो सकता।"

उसके बोलनेके ढंगपर वन्दना हँस दी, बोली—"और मान लीजिए कि मैत्रेयीके बदले वे वन्दनाके गलेसे ही आपको बाँध दें तो?"

द्विजदासने तकदीर हाथ ठोंकते हुए कहा—"उसकी आशा वृथा है! दुष्ट राहुने पूर्ण चन्द्रको भक्षण कर डाला है, न-जाने कहाँसे एक सुधीरचन्द्र

होगी अगर इससे उन्होंने कमसे कम इतनी नसीहत ली हो कि संसारमें बुद्धि नामकी चीज़ सिर्फ़ उनकी अपनी ही नहीं है, बल्कि उसपर औरोंका भी दावा हो सकता है। कारण, मुझे न सही, भाई साहबको भी अगर वे अपने षड्यंत्रका आभास दे देतीं तो, और कुछ हो या न हो, इस कर्मभोगसे उन्हें छुटकारा मिल सकता था। भाई साहब और मैं दोनों ही जानते थे कि तुम दूसरेकी वाग्दत्ता वधू हो, परस्पर प्रणय-जंजीरसे आबद्ध हो, लिहाजा उस व्यवस्थासे अन्यथा होना न सम्भव है और न वांछनीय ही।"

वन्दनाने पूछा—"आप लोगोंने किससे कब सुना?"

द्विजदासने कहा—"तुम्हारे पिताजीसे। यहाँ हम लोगोंके आनेके दिन ही राय साहबने तुम लोगोंके प्रेम, वाग्दान और शीघ्र होनेवाले विवाहकी मनोज्ञ आलोचनासे हम दोनों भाइयोंके चारों कानोंमें सुधा-वर्षण किया था। नहीं नहीं, नाराज मत होओ वन्दना, पिताजी सीधे-सादे निरीह आदमी हैं, चित्तकी प्रफुल्लतामें उन्होंने इस सुसंवादको आत्मीयजनोंसे छिपा रखनेकी जरूरत ही नहीं महसूस की।"

वन्दनाने कुछ देर मौन रहकर पूछा—"इसीलिए क्या मुखर्जी साहबने मैत्रेयीको देखनेके लिए हम लोगोंको भेजा था?"

द्विजदासने कहा—"सो मुझे ठीक नहीं मालूम। कारण भाई साहबके मनकी पूरी बात देवताओंके लिए भी अज्ञात है। सिर्फ़ इतना जानता हूँ कि उनके मतसे मैत्रेयी देवी सर्वगुणसम्पन्ना कन्या हैं। बलरामपुरके धनी और महामाननीय मुखर्जी-परिवारके अयोग्या नहीं।

वन्दनाने पूछा—"मैत्रेयी देवीके सम्बन्धमें आपका क्या अभिमत है?"

द्विजदासने कहा—"इस घरमें यह प्रश्न अवैध है। मैं तो तृतीय-पुरुष (थर्ड-परसन) हूँ। प्रथम और द्वितीय-पुरुष अर्थात् मा और भाई साहब किसी भी एक नारीके गलेमें मुझे बाँध देंगे और उसीके कण्ठलग्न होकर मैं परमानन्दसे लटकता रहूँगा। यही इस घरकी सनातन रीति है, इसमें परिवर्तन नहीं हो सकता।"

उसके बोलनेके ढंगपर वन्दना हँस दी, बोली—"और मान लीजिए कि मैत्रेयीके बदले वे वन्दनाके गलेसे ही आपको बाँध दें तो?"

द्विजदासने तक़दीर हाथ ठोंकते हुए कहा—"उसकी आशा वृथा है! दुष्ट राहुने पूर्ण चन्द्रको भक्षण कर डाला है, न-जाने कहाँसे एक सुधीरचन्द्र

द्विजदासने कहा—" मालूम होता है और भी ज़रा खदेड़नेसे चला जायगा। पर मैं सोचता हूँ, मेरे संशय निवारणके लिए क्या यही पद्धति हमेशा काममें लाई जायगी ? "

वन्दनाने कहा—" हमेशाकी व्यवस्था पहले आये तो सही। लेकिन सब-कुछ जानकर भी जो इस तरहका अभिनय करता है उसे समझानेके लिए मेरे पास कोई रास्ता ही नहीं। "

" मगर वह मैं नहीं हूँ, मा है। उन्हें समझाओगी कैसे ? "

वन्दनाने कहा—" मा खुद ही समझ जायँगी। मुझे लड़कीकी तरह चाहती हैं। आज अचानक वे कितनी ही चंचल होके क्यों न चली गई हों, जो कुछ वे जानके गई हैं वह सच नहीं है—यह बात अगर माको ही नहीं समझा सकी तो मैं किस बातकी आशा रख सकती हूँ बताइए तो ? मुझे कुछ चिन्ता नहीं द्विजू बाबू, एक-न-एक दिन सारी बातें उन्हें मैं समझाऊँगी ही समझाऊँगी। " —कहते कहते आखिरकी तरफ सहसा उसका गला रुँध आया और आँखोंमें आँसू भर आये।

सच और झूठकी दुविधा द्विजदासकी मिट नहीं रही थी, परन्तु इन आँसुओं और कण्ठस्वरके निगूढ़ परिवर्तनने उसका सारा संशय मिटा दिया,—यह तो सिर्फ़ परिहास नहीं है। विस्मय और व्यथासे आलोड़ित होकर वह कह उठा—" यह क्या वन्दना, तुम रो रही हो ? "

प्रत्युत्तरमें वन्दना कुछ बोली नहीं, सिर्फ़ आँसू पोंछकर दूसरी तरफ देखती रही।

द्विजदास खुद भी बहुत देर तक चुप रहकर धीरे-धीरे बोला—" सुधीरने तो तुम्हारे प्रति कोई भी दोष नहीं किया वन्दना। "

वन्दनाने मुँह फेरकर इधर देखा नहीं, सिर्फ़ मुँहसे कहा—" दोषका विचार किसलिए किया जाय बताइए तो ? मैं क्या उनके अपराधका बदला लेने बैठी हूँ ? "

द्विजदासको इस बातका जवाब ढूँढ़े न मिला, उसने समझा कि यह प्रश्न बिलकुल निरर्थक किया गया है। फिर कुछ देर चुप रहकर उसने कहा—" मगर सुधीर तुम लोगोंके अपने समाजका है,—और इधर यह कि शिक्षा, संस्कार, अभ्यास, आचरण किसी भी बातमें मुखर्जी-परिवारके साथ तुम्हारा मेल नहीं खाता। तो फिर किसलिए तुम इन लोगोंके कारागारमें हमेशाके

द्विजदासने कहा—" मालूम होता है और भी ज़रा खदेड़नेसे चला जायगा। पर मैं सोचता हूँ, मेरे संशय निवारणके लिए क्या यही पद्धति हमेशा काममें लाई जायगी ? "

वन्दनाने कहा—" हमेशाकी व्यवस्था पहले आये तो सही। लेकिन सब-कुछ जानकर भी जो इस तरहका अभिनय करता है उसे समझानेके लिए मेरे पास कोई रास्ता ही नहीं। "

" मगर वह मैं नहीं हूँ, मा है। उन्हें समझाओगी कैसे ? "

वन्दनाने कहा—" मा खुद ही समझ जायँगी। मुझे लड़कीकी तरह चाहती हैं। आज अचानक वे कितनी ही चंचल होके क्यों न चली गई हों, जो कुछ वे जानके गई हैं वह सच नहीं है—यह बात अगर माको ही नहीं समझा सकी तो मैं किस बातकी आशा रख सकती हूँ बताइए तो ? मुझे कुछ चिन्ता नहीं द्विजू बाबू, एक-न-एक दिन सारी बातें उन्हें मैं समझाऊँगी ही समझाऊँगी। "—कहते कहते आखिरकी तरफ सहसा उसका गला रुँध आया और आँखोंमें आँसू भर आये।

सच और झूठकी दुविधा द्विजदासकी मिट नहीं रही थी, परन्तु इन आँसुओं और कण्ठस्वरके निगूढ़ परिवर्तनने उसका सारा संशय मिटा दिया,—यह तो सिर्फ़ परिहास नहीं है। विस्मय और व्यथासे आलोड़ित होकर वह कह उठा—" यह क्या वन्दना, तुम रो रही हो ? "

प्रत्युत्तरमें वन्दना कुछ बोली नहीं, सिर्फ़ आँसू पोंछकर दूसरी तरफ देखती रही।

द्विजदास खुद भी बहुत देर तक चुप रहकर धीरे-धीरे बोला—" सुधीरने तो तुम्हारे प्रति कोई भी दोष नहीं किया वन्दना। "

वन्दनाने मुँह फेरकर इधर देखा नहीं, सिर्फ़ मुँहसे कहा—" दोषका विचार किसलिए किया जाय बताइए तो ? मैं क्या उनके अपराधका बदला लेने बैठी हूँ ? "

द्विजदासको इस बातका जवाब ढूँढ़े न मिला, उसने समझा कि यह प्रश्न बिलकुल निरर्थक किया गया है। फिर कुछ देर चुप रहकर उसने कहा—" मगर सुधीर तुम लोगोंके अपने समाजका है,—और इधर यह कि शिक्षा, संस्कार, अभ्यास, आचरण किसी भी बातमें मुखर्जी-परिवारके साथ तुम्हारा मेल नहीं खाता। तो फिर किसलिए तुम इन लोगोंके कारागारमें हमेशाके

होनेमें किसी प्रकारका धोखा या पोल नहीं है । मगर वैसा होनेका नहीं, उनके मतसे वागुदानका अर्थ ही है सम्प्रदान । प्रेम या प्यार करके जिसे सम्मति दे चुकी हो वही तुम्हारा पति है । विवाहके मंत्र नहीं पढ़े गये इसलिए उन्हें तुम त्याग भी सकती हो, पर उस सूने आसनपर दयामयीका लड़का जाकर नहीं बैठ सकता ।"

सुनकर मारे वेदनाके वन्दनाका चेहरा पीला पड़ गया, उसने पूछा—"मा क्या ये सब बातें कह गई हैं द्विजू बाबू ?"

द्विजदासने कहा—"कमसे कम, उनके ऐसा कहनेको मैं असम्भव नहीं समझता वन्दना । भाभी कह रही थीं कि मांको सबसे ज्यादा इस बातकी चोट पहुँची है कि सुधीर अपनी जात-बिरादरीका नहीं है,—और तुम लोग जात-पाँत नहीं मानते । यह इतना बड़ा जबरदस्त भेद है कि इसे किसी भी तरह पाटकर एक नहीं किया जा सकता ।"

"आपका भी क्या यही कहना है ?"

"मैं तो तृतीय-पुरुष हूँ वन्दना, मेरे कहने न-कहनेसे क्या बनता बिगड़ता है ?"

राय साहबके भोजनका समय हो चला था । वन्दना उठ खड़ी हुई कमरेसे बाहर निकलनेसे पहले उसने कहा—"बापूजीकी छुट्टी खतम हो चुकी, कल वे चले जायेंगे । मैं भी क्या उनके साथ चली जाऊँ द्विजू बाबू ?"

द्विजदासने कहा—"यह भी क्या मेरे कहनेकी बात है वन्दना ? अगर जाओ, तो मुझे गलत समझकर न चली जाना । तुम्हारे जानेके बाद, तुम्हारी तरफसे, मैं मासे तुम्हारी सारी बातें कहूँगा; शरमाऊँगा नहीं । उसके बाद, रह गई हमारी आजकी संध्याकी स्मृति, और रह गया हमारा वन्देमातरम्का मंत्र ।"

वन्दनाने इसका कोई उत्तर नहीं दिया; चुपकेसे घरसे बाहर निकल आई ।

१५

अपने कमरेमें लौट आनेके बाद वन्दनाको अत्यन्त ग्लानि होने लगी । उसने क्या नशा कर लिया है जो निर्लज्ज उपयाचिकाकी तरह वह इस तरह अपना हृदय खोलकर अपनी सारी आत्म-मर्यादाको जलाञ्जलि दे आई ? उसपर मजा यह कि द्विजदास पुरुष होता हुआ भी जैसा रहस्यावृत था वैसा ही बना रहा ।

होनेमें किसी प्रकारका धोखा या पोल नहीं है। मगर वैसा होनेका नहीं, उनके मतसे वाग्दानका अर्थ ही है सम्प्रदान। प्रेम या प्यार करके जिसे सम्मति दे चुकी हो वही तुम्हारा पति है। विवाहके मंत्र नहीं पढ़े गये इसलिए उन्हें तुम त्याग भी सकती हो, पर उस सूने आसनपर दयामयीका लड़का जाकर नहीं बैठ सकता।"

सुनकर मारे वेदनाके बन्दनाका चेहरा पीला पड़ गया, उसने पूछा—"मा क्या ये सब बातें कह गई हैं द्विजू बाबू?"

द्विजदासने कहा—"कमसे कम, उनके ऐसा कहनेको मैं असम्भव नहीं समझता बन्दना। भाभी कह रही थीं कि माको सबसे ज्यादा इस बातकी चोट पहुँची है कि सुधीर अपनी जात-बिरादरीका नहीं है,—और तुम लोग जात-पाँत नहीं मानते। यह इतना बड़ा जबरदस्त भेद है कि इसे किसी भी तरह पाटकर एक नहीं किया जा सकता।"

"आपका भी क्या यही कहना है?"

"मैं तो तृतीय-पुरुष हूँ बन्दना, मेरे कहने न-कहनेसे क्या बनता बिगड़ता है?"

राय साहबके भोजनका समय हो चला था। बन्दना उठ खड़ी हुई कमरेसे बाहर निकलनेसे पहले उसने कहा—"बापूजीकी छुट्टी खतम हो चुकी, कल वे चले जायँगे। मैं भी क्या उनके साथ चली जाऊँ द्विजू बाबू?"

द्विजदासने कहा—"यह भी क्या मेरे कहनेकी बात है बन्दना? अगर जाओ, तो मुझे गलत समझकर न चली जाना। तुम्हारे जानेके बाद, तुम्हारी तरफसे, मैं मासे तुम्हारी सारी बातें कहूँगा; शरमाऊँगा नहीं। उसके बाद, रह गई हमारी आजकी संध्याकी स्मृति, और रह गया हमारा वन्देमातरम्‌का मंत्र।"

बन्दनाने इसका कोई उत्तर नहीं दिया; चुपकेसे घरसे बाहर निकल आई।

१५

अपने कमरेमें लौट आनेके बाद बन्दनाको अत्यन्त ग्लानि होने लगी। उसने क्या नशा कर लिया है जो निर्लज्ज उपयाचिकाकी तरह वह इस तरह अपना हृदय खोलकर अपनी सारी आत्म-मर्यादाको जलाञ्जलि दे आई? उसपर मजा यह कि द्विजदास पुरुष होता हुआ भी जैसा रहस्यावृत था वैसा ही बना रहा।

"सो आजका दिन थोड़े ही है जीजी-बाई, कल जानेकी बात थी।"

"नहीं, आज ही जाना होगा।"—कहकर बन्दना अपने काममें लगी ही रही, मुँह नहीं उठाया।

अन्नदा एक क्षण चुप रहकर बोली—"आप उठिए, मै सम्हाले देती हूँ। आपको तकलीफ हो रही है।"

"तकलीफ देखनेकी ज़रूरत नहीं, अपने कामसे जाओ तुम।"

इस घरके तमाम आदमियोंसे उसे घृणा-सी हो गई है।

अन्नदाको कारण मालूम न होनेपर भी, इतना तो मालूम ही था कि कोई गुस्सा-गुस्सीकी बात चल रही है। अचानक मा चली गई; और आज बन्दना भी उसी तरह अकस्मात् चली जानेको तैयार है। परन्तु गुस्सेके बदले गुस्सा करना अन्नदाकी प्रकृति नहीं है, वह जितनी ही सहिष्णु है उतनी ही भद्र। कुछ देर चुप खड़ी रही, फिर कुण्ठित स्वरसे बोली—"मेरा कसूर हो गया जीजी-बाई, आज ठीक वक्तपर मैं उठ न सकी।"

बन्दनाने मुँह उठाकर उसकी ओर देखा, फिर बोली—"मैं तो उसकी कैफ़ियत नहीं चाहती अन्नदा, ज़रूरत हो तो अपने मालिकको देना। द्विजू बाबू अपने कमरेमें ही हैं, उनसे कहो जाकर।"—इतना कहकर वह फिर अपने काममें लग गई। बन्दना अपने बापकी इकलौती सन्तान होनेसे ज़रा-कुछ ज्यादा लाड़-प्यारमें ही पली-पनपी है। सहनेकी शक्ति उसमें कम है। किन्तु इसका मतलब यह नहीं कि कड़ुई बात कहनेकी कुशिक्षा भी उसे मिली हो; बल्कि यों कहना चाहिए कि शायद इतनी बड़ी कठोर बात भी उसने अपने जीवनमें कभी किसीसे नहीं कही। इसीलिए, बात कह चुकनेके बाद ही वह मन-ही-मन शायद लज्जित हो रही थी; इतनेमें अन्नदा ही सलज्ज मृदु-कण्ठसे कहने लगी—"डाक्टर वग़ैरह चले गये थे, पौ फटनेको थी कि सोचा अब न सोऊँगी, सोई भी नहीं, पर दीवारका सहारा लेकर बैठते ही न मालूम कैसे आँख लग गई, कब दिन चढ़ गया कुछ पता ही न चला। आप मालिकोंकी बात कह रही हैं जीजीबाई, पर आप भी क्या मेरी मालिकिन नहीं हैं? बताइए भला, ऐसा कसूर क्या और कभी मुझसे हुआ है? उठिए, मैं सब ठीक किये देती हूँ।"

आख़िरकी बात शायद बन्दनाके कानों तक नहीं पहुँची, अन्नदाके चेहरेकी तरफ़ देखते हुए उसने कहा—"डॉक्टर वग़ैरह चले गये, मतलब?"

"सो आजका दिन थोड़े ही है जीजी-बाई, कल जानेकी बात थी।"

"नहीं, आज ही जाना होगा।"—कहकर वन्दना अपने काममें लगी ही रही, मुँह नहीं उठाया।

अन्नदा एक क्षण चुप रहकर बोली—"आप उठिए, मैं सम्हाले देती हूँ। आपको तकलीफ हो रही है।"

"तकलीफ देखनेकी ज़रूरत नहीं, अपने कामसे जाओ तुम।"

इस घरके तमाम आदमियोंसे उसे घृणा-सी हो गई है।

अन्नदाको कारण मालूम न होनेपर भी, इतना तो मालूम ही था कि कोई गुस्सा-गुस्सीकी बात चल रही है। अचानक मा चली गईं; और आज वन्दना भी उसी तरह अकस्मात् चली जानेको तैयार है। परन्तु गुस्सेके बदले गुस्सा करना अन्नदाकी प्रकृति नहीं है, वह जितनी ही सहिष्णु है उतनी ही भद्र। कुछ देर चुप खड़ी रही, फिर कुण्ठित स्वरसे बोली—"मेरा कसूर हो गया जीजी-बाई, आज ठीक वक्तपर मैं उठ न सकी।"

वन्दनाने मुँह उठाकर उसकी ओर देखा, फिर बोली—"मैं तो उसकी कैफियत नहीं चाहती अन्नदा, ज़रूरत हो तो अपने मालिकको देना। द्विजू बाबू अपने कमरेमें ही हैं, उनसे कहो जाकर।"—इतना कहकर वह फिर अपने काममें लग गई। वन्दना अपने बापकी इकलौती सन्तान होनेसे ज़रा-कुछ ज्यादा लाड़-प्यारमें ही पली-पनपी है। सहनेकी शक्ति उसमें कम है। किन्तु इसका मतलब यह नहीं कि कड़ुई बात कहनेकी कुशिक्षा भी उसे मिली हो; बल्कि यों कहना चाहिए कि शायद इतनी बड़ी कठोर बात भी उसने अपने जीवनमें कभी किसीसे नहीं कही। इसीलिए, बात कह चुकनेके बाद ही वह मन-ही-मन शायद लज्जित हो रही थी; इतनेमें अन्नदा ही सलज्ज मृदु-कण्ठसे कहने लगी—"डाक्टर वग़ैरह चले गये थे, पौ फटनेको थी कि सोचा अब न सोऊँगी, सोई भी नहीं, पर दीवारका सहारा लेकर बैठते ही न मालूम कैसे आँख लग गई, कब दिन चढ़ गया कुछ पता ही न चला। आप मालिकोंकी बात कह रही हैं जीजीबाई, पर आप भी क्या मेरी मालिकिन नहीं हैं? बताइए भला, ऐसा कसूर क्या और कभी मुझसे हुआ है? उठिए, मैं सब ठीक किये देती हूँ।"

आखिरकी बात शायद वन्दनाके कानों तक नहीं पहुँची, अन्नदाके चेहरेकी तरफ देखते हुए उसने कहा—"डॉक्टर वग़ैरह चले गये, मतलब?"

'मैं हूँ अनु-दीदी, दरवाजा खोलो।' इतनी रात पड़े द्विजू क्यों बुला रहा है, घबराहटके साथ चटसे उठके किवाड़ खोल बाहर पहुँची तो द्विजूकी वह कैसी मूर्ति! आँखें भीतर घुस गई हैं, गलेका स्वर बैठ गया है, शरीर काँप रहा है,—मगर फिर भी हँस रहा है। बोला, 'दीदी, तुम्हारी गोदमें खेला हूँ, इसीलिए तुमको जगाया है; अगर आँखें मूँदनी ही पड़ीं तो तुम्हारी ही गोदमें सिर रखके मूँदूँगा'।"—कहते-कहते अन्नदा झर-झर आँसू गिराती हुई रो उठी। उसका रोना मानो ठहरना ही नहीं चाहता, भीतरसे ऐसा ही अदम्य आवेग उमड़ रहा था।

अपनेको सम्हलनेमें उसे बहुत देर लगी। सम्हलनेके बाद फिर कहने लगी—"छातीसे लगाकर उसे कमरेमें ले गई, पर जैसी ही कै वैसा ही पेटमें दर्द,—ऐसा लगने लगा जैसे रात अब बीतेगी ही नहीं, न-जाने कब साँस बन्द हो जाय। डाक्टरोंको खबर दी गई, वे आ पहुँचे, सूईपर सूई देने लगे, गरम-पानीका सेक चलने लगा, नौकर-चाकर सब जागते रहे,—भोरके वक्त जाकर द्विजूको नींद आई और सो गया। डाक्टरोंने कहा कि अब डरनेकी कोई बात नहीं। लेकिन किस तरह रात बीती है जीजी-बाई, सोचती हूँ तो—दुःस्वप्न-सा मालूम होता है, सच्ची बात नहीं मालूम होती।"—इतना कहकर अन्नदाने आँचलसे अपनी आँखें पोंछ डालीं।

वन्दनाने आहिस्तेसे कहा—"मुझे कुछ भी नहीं मालूम, मुझे जगाया क्यों नहीं अन्नदा?"

अन्नदाने कहा—"सबेरे वह अशान्ति दूर हो गई, फिर तुम्हें परेशान नहीं किया जीजी-बाई। नहीं तो द्विजूने तो कहा था।"

वन्दनाने इस प्रसंगको छोड़ दिया, बोली—"द्विजू बाबूकी इस वक्त तबीयत कैसी है?"

अन्नदाने कहा—"अच्छी है, सो रहा है। डाक्टर लोग कह गये हैं, शामसे पहले शायद नींद न टूटेगी। बड़े-बाबू आ जायँ तब जीमें जी आवे जीजी।"

"उन्हें क्या खबर दी गई है?"

"नहीं। दत्तजीने कहा कि इसकी ज़रूरत नहीं, वे खुद ही आनेवाले हैं।"

"उस कमरेमें आदमी हैं तो?"

"हाँ, दो आदमी बैठे हैं।"

'मैं हूँ अनु-दीदी, दरवाजा खोलो।' इतनी रात पड़े द्विजू क्यों बुला रहा है, घबराहटके साथ चटसे उठके किवाड़ खोल बाहर पहुँची तो द्विजूकी वह कैसी मूर्ति! आँखें भीतर घुस गई हैं, गलेका स्वर बैठ गया है, शरीर काँप रहा है,—मगर फिर भी हँस रहा है। बोला, 'दीदी, तुम्हारी गोदमें खेला हूँ, इसीलिए तुमको जगाया है; अगर आँखें मूँदनी ही पड़ीं तो तुम्हारी ही गोदमें सिर रखके मूँदूँगा'।"—कहते-कहते अन्नदा झर-झर आँसू गिराती हुई रो उठी। उसका रोना मानो ठहरना ही नहीं चाहता, भीतरसे ऐसा ही अदम्य आवेग उमड़ रहा था।

अपनेको सम्हलनेमें उसे बहुत देर लगी। सम्हलनेके बाद फिर कहने लगी—"छातीसे लगाकर उसे कमरेमें ले गई, पर जैसी ही कै वैसा ही पेटमें दर्द,—ऐसा लगने लगा जैसे रात अब बीतेगी ही नहीं, न-जाने कब साँस बन्द हो जाय। डाक्टरोंको खबर दी गई, वे आ पहुँचे, सूईपर सूई देने लगे, गरम-पानीका सेक चलने लगा, नौकर-चाकर सब जागते रहे,—भोरके वक्त जाकर द्विजूको नींद आई और सो गया। डाक्टरोंने कहा कि अब डरनेकी कोई बात नहीं। लेकिन किस तरह रात बीती है जीजी-बाई, सोचती हूँ तो—दुःस्वप्न-सा मालूम होता है, सच्ची बात नहीं मालूम होती।"—इतना कहकर अन्नदाने आँचलसे अपनी आँखें पोंछ डालीं।

वन्दनाने आहिस्तेसे कहा—"मुझे कुछ भी नहीं मालूम, मुझे जगाया क्यों नहीं अन्नदा?"

अन्नदाने कहा—"सबेरे वह अशान्ति दूर हो गई, फिर तुम्हें परेशान नहीं किया जीजी-बाई। नहीं तो द्विजूने तो कहा था।"

वन्दनाने इस प्रसंगको छोड़ दिया, बोली—"द्विजू बाबूकी इस वक्त तबीयत कैसी है?"

अन्नदाने कहा—"अच्छी है, सो रहा है। डाक्टर लोग कह गये हैं, शामसे पहले शायद नींद न टूटेगी। बड़े-बाबू आ जायँ तब जीमें जी आवे जीजी।"

"उन्हें क्या खबर दी गई है?"

"नहीं। दत्तजीने कहा कि इसकी ज़रूरत नहीं, वे खुद ही आनेवाले हैं।"

"उस कमरेमें आदमी हैं तो?"

"हाँ, दो आदमी बैठे हैं।"

रहना कुछ और ही बात है जीजी-बाई। फिर और किसीपर जिम्मेदारी नहीं रहती, सब उन्हींपर रहती है। उनकी जैसी बुद्धि है वैसा ही विवेक, जैसी हिम्मत है वैसी ही गम्भीरता। सबको ऐसा लगने लगता है जैसे बरगदके पेड़की छायामें बैठे हुए हैं।"

वही पुरानी बात, वही विशेषणोंकी भरमार। अपने मालिकके विषयमें यह बात मानो इन लोगोंके नस-नसमें रम गई है। और कोई वक्त होता तो वन्दना चुटकी लेनेमें रिआयत नहीं करती। लेकिन इस वक्त चुप रही। अन्नदा कहने लगी, "और यह द्विजू! दोनों भाइयोंमें इतना फर्क जैसे कि जमीन और आसमान।"

वन्दनाने आश्चर्यमें आकर पूछा—"क्यों?"

अन्नदाने कहा—"और नहीं तो क्या? न तो जुम्मेदारी जानता है, न किसी झंझटमें फँसना चाहता है और न गम्भीरता ही है। उसकी भाभी कहती है कि वह तो शरद् ऋतुका बादल है, न उसमें बिजली है, न पानी है। उड़ता-उड़ता फिरता है, कोई भी बात चाहे कितनी ही बड़ी क्यों न हो, उसे वह हँस-खेलके ही उड़ा देगा। न तो संसारी है, न वैरागी, कितने किसान-कर्जदार उससे फारखती लिखवा ले गये हैं जिसका ठीक नहीं।"

वन्दनाने कहा—"मुखर्जी साहब नाराज नहीं होते?"

"नहीं होते? खूब होते हैं। खासकर मा तो और भी ज्यादा। पर तब वह दिखाई कहाँ देता है? कुछ दिनके लिए ऐसा लापता हो जाता है कि भाभीजी रोना-पीटना शुरू कर देती हैं, तब फिर सब मिलके ढूँढ़-ढाँढके उसे पकड़ लाते हैं। पर, इसी तरह तो सारी जिन्दगी नहीं बिता सकता जीजी-बाई, उसका भी ब्याह होगा, बाल-बच्चे होंगे, तब तो फिर इस तरहकी कार्रवाई किसी दिन बिलकुल दिवालिया बना देगी।"

वन्दनाने कहा—"यह बात तुम लोग उनसे कहतीं क्यों नहीं?"

अन्नदाने कहा—"बहुत कहा जा चुका है, पर वह कान ही नहीं देता। कह देता है, तुम लोगोंको फिकर क्यों है? दिवालिया अगर हो भी जाऊँ तो भाभी तो मेरी दिवालिया नहीं होनेकी, तब सब मिलके उन्हींके सिर पड़ जायँगे।"

वन्दनाने मुसकराते हुए कहा—"जीजी क्या कहती हैं?"

अन्नदाने कहा—"देवरपर उनके लाड़-प्यारकी हद नहीं। कहती हैं कि

रहना कुछ और ही बात है जीजी-बाई। फिर और किसीपर जिम्मेदारी नहीं रहती, सब उन्हींपर रहती है। उनकी जैसी बुद्धि है वैसा ही विवेक, जैसी हिम्मत है वैसी ही गम्भीरता। सबको ऐसा लगने लगता है जैसे बरगदके पेड़की छायामें बैठे हुए हैं।"

वही पुरानी बात, वही विशेषणोंकी भरमार। अपने मालिकके विषयमें यह बात मानो इन लोगोंके नस-नसमें रम गई है। और कोई वक्त होता तो वन्दना चुटकी लेनेमें रिआयत नहीं करती। लेकिन इस वक्त चुप रही। अन्नदा कहने लगी, "और यह द्विजू! दोनों भाइयोंमें इतना फर्क जैसे कि जमीन और आसमान।"

वन्दनाने आश्चर्यमें आकर पूछा—"क्यों?"

अन्नदाने कहा—"और नहीं तो क्या? न तो जुम्मेदारी जानता है, न किसी झंझटमें फँसना चाहता है और न गम्भीरता ही है। उसकी भाभी कहती है कि वह तो शरद् ऋतुका बादल है, न उसमें बिजली है, न पानी है। उड़ता-उड़ता फिरता है, कोई भी बात चाहे कितनी ही बड़ी क्यों न हो, उसे वह हँस-खेलके ही उड़ा देगा। न तो संसारी है, न वैरागी, कितने किसान-कर्जदार उससे फारखती लिखवा ले गये हैं जिसका ठीक नहीं।"

वन्दनाने कहा—"मुखर्जी साहब नाराज नहीं होते?"

"नहीं होते? खूब होते हैं। खासकर मा तो और भी ज्यादा। पर तब वह दिखाई कहाँ देता है? कुछ दिनके लिए ऐसा लापता हो जाता है कि भाभीजी रोना-पीटना शुरू कर देती हैं, तब फिर सब मिलके ढूँढ़-ढाँढके उसे पकड़ लाते हैं। पर, इसी तरह तो सारी जिन्दगी नहीं बिता सकता जीजी-बाई, उसका भी ब्याह होगा, बाल-बच्चे होंगे, तब तो फिर इस तरहकी कार्रवाई किसी दिन बिलकुल दिवालिया बना देगी।"

वन्दनाने कहा—"यह बात तुम लोग उनसे कहतीं क्यों नहीं?"

अन्नदाने कहा—"बहुत कहा जा चुका है, पर वह कान ही नहीं देता। कह देता है, तुम लोगोंको फिकर क्यों है? दिवालिया अगर हो भी जाऊँ तो भाभी तो मेरी दिवालिया नहीं होनेकी, तब सब मिलके उन्हींके सिर पड़ जायँगे।"

वन्दनाने मुसकराते हुए कहा—"जीजी क्या कहती हैं?"

अन्नदाने कहा—"देवरपर उनके लाड़-प्यारकी हद नहीं। कहती हैं कि

निकली तो उसके मनमें सबसे पहले यही बात आई कि भविष्यमें, जहाँ तक दृष्टि जाती है, किसी दिन किसी भी छलसे यहाँ फिर उसके आनेकी सम्भावना नहीं है, किन्तु फिर भी इस बातको वह कभी नहीं भूल सकेगी कि यह घर उसके अनेक सुख-स्वप्नोंसे परिपूर्ण रहा। उतरते समय वन्दना सीधा रास्ता छोड़कर द्विजदासके कमरेके सामनेवाले बरामदेसे, उसके कमरेके अन्दर एक निगाह फेरती हुई निकली, परन्तु जो खिड़की खुली हुई थी उसमेंसे द्विजदासको वह देख न सकी।

मोटरके पास दत्तजी खड़े थे; राय साहबने उन्हें अपने पास बुलाकर नौकरोंको इनाम देनेके लिए उनके हाथमें कुछ रुपये दिये; और अचानक जाना पड़ रहा है इसके लिए खेद प्रकट करते हुए अनुरोध किया कि द्विजदासकी खबर उन्हें तुरंत ही मिलनी चाहिए, नहीं तो बड़ी चिन्ता रहेगी।

गाड़ीमें बैठनेके पहले वन्दनाने अन्नदाको पास बुलाकर कहा—"द्विजू बाबूकी तुम दीदी हो, उन्हें तुमने गोदमें खिलाया है,—यह अँगूठी तुम द्विजू बाबूकी आनेवाली नई बहूको भेंट कर देना, कह देना वह इसे ज़रूर पहने।"—इतना कहकर उसने अँगूठी खोलकर उसके हाथमें दे दी और तुरत ही पिताके पास जा बैठी।

मोटर चल दी। इधर-उधर खड़े हुए कुछ नौकर-चाकर और दत्तजीने उन्हें नमस्कार किया।

वन्दना बग़ैर इरादेके यों ही ऊपरको देख उठी; परन्तु आज वहाँ, और-एक दिनकी भाँति सबके अगोचर खड़ा हुआ, चुपचाप संकेतसे विदा देनेके लिए द्विजदास नहीं था। आज वह बीमार है,—आज वह नींदमें बेहोश पड़ा सो रहा है।

१६

दयामयीके आचरणमें वन्दनाके प्रति जो प्रच्छन्न लाञ्छना और अव्यक्त तिरस्कारका भाव था, सतीको वह गहराई तक चुभ गया था। परन्तु सासुसे कुछ कहना-सुनना उसके लिए सहज नहीं था; इसलिए उसने एक चिट्ठी लिखकर वन्दनाको देनेके लिए पतिको अपने कमरेमें बुलवा भेजा। दोपहरकी गाड़ीसे विप्रदास कलकत्ते रवाना होगा। इसी समय दयामयी उसके कमरेमें आ पहुँचीं।

निकली तो उसके मनमें सबसे पहले यही बात आई कि भविष्यमें, जहाँ तक दृष्टि जाती है, किसी दिन किसी भी छलसे यहाँ फिर उसके आनेकी सम्भावना नहीं है, किन्तु फिर भी इस बातको वह कभी नहीं भूल सकेगी कि यह घर उसके अनेक सुख-स्वप्नोंसे परिपूर्ण रहा। उतरते समय वन्दना सीधा रास्ता छोड़कर द्विजदासके कमरेके सामनेवाले बरामदेसे, उसके कमरेके अन्दर एक निगाह फेरती हुई निकली, परन्तु जो खिड़की खुली हुई थी उसमेंसे द्विजदासको वह देख न सकी।

मोटरके पास दत्तजी खड़े थे; राय साहबने उन्हें अपने पास बुलाकर नौकरोंको इनाम देनेके लिए उनके हाथमें कुछ रुपये दिये; और अचानक जाना पड़ रहा है इसके लिए खेद प्रकट करते हुए अनुरोध किया कि द्विजदासकी खबर उन्हें तुरंत ही मिलनी चाहिए, नहीं तो बड़ी चिन्ता रहेगी।

गाड़ीमें बैठनेके पहले वन्दनाने अन्नदाको पास बुलाकर कहा—"द्विजू बाबूकी तुम दीदी हो, उन्हें तुमने गोदमें खिलाया है,—यह अँगूठी तुम द्विजू बाबूकी आनेवाली नई बहूको भेंट कर देना, कह देना वह इसे ज़रूर पहने।"—इतना कहकर उसने अँगूठी खोलकर उसके हाथमें दे दी और तुरत ही पिताके पास जा बैठी।

मोटर चल दी। इधर-उधर खड़े हुए कुछ नौकर-चाकर और दत्तजीने उन्हें नमस्कार किया।

वन्दना बग़ैर इरादेके यों ही ऊपरको देख उठी; परन्तु आज वहाँ, और-एक दिनकी भाँति सबके अगोचर खड़ा हुआ, चुपचाप संकेतसे विदा देनेके लिए द्विजदास नहीं था। आज वह बीमार है,—आज वह नींदमें बेहोश पड़ा सो रहा है।

१६

दयामयीके आचरणमें वन्दनाके प्रति जो प्रच्छन्न लाञ्छना और अव्यक्त तिरस्कारका भाव था, सतीको वह गहराई तक चुभ गया था। परन्तु सासुसे कुछ कहना-सुनना उसके लिए सहज नहीं था; इसलिए उसने एक चिट्ठी लिखकर वन्दनाको देनेके लिए पतिको अपने कमरेमें बुलवा भेजा। दोपहरकी गाड़ीसे विप्रदास कलकत्ते रवाना होगा। इसी समय दयामयी उसके कमरेमें आ पहुँचीं।

विप्रदासको चुप देखकर कह उठीं—"जवाब क्यों नहीं देता?"

"जवाब तो तुमने माँगा नहीं मा। हुकम दिया है कि वन्दना अब इस घरमें न आने पावे,—सो ही होगा।"

उसकी बात सुनकर दयामयी दुविधामें पड़ गई, बोलीं—"हुकम क्या बेजा दे रही हूँ तू समझता है?"

"समझता क्यों नहीं मा। वन्दनाने अन्याय कुछ नहीं किया, सामाजिक आचार-व्यवहारमें उनका हमारा मेल नहीं खाता, वे लोग जात-पाँत नहीं मानते, यह जानकर ही तुमने उसे बुलाया था और प्यार भी करने लगी थीं। तुम्हारे मनमें शायद आशा थी कि ये लोग मुँहसे ही कहा करते हैं, अमल नहीं करते,—यहीं तुमसे गलती हो गई, और इसीलिए सदमा भी उठाया।"

दयामयीने कहा—"शायद यह बात ठीक हो, पर उसके ब्याहकी बात सुनके क्या तुझे घृणा नहीं होती विपिन? बता तू क्या कहना चाहता है?"

विप्रदास मुसकराता हुआ बोला—"उसका ब्याह अभी हुआ नहीं है, और हो जानेपर भी मुझे गुस्सा न करना चाहिए। बल्कि यह सोचकर मैं श्रद्धा ही करूँगा कि उन लोगोंका विश्वास सत्य कार्यमेंसे प्रकाशित हुआ, उन लोगोंने किसीको धोखा नहीं दिया। मगर मा, कलकत्तेमें मैंने बहुतोंको देखा है जो कोरी बातोंके घटाटोपमें मानते कुछ भी नहीं, जाति-भेदपर भी विश्वास नहीं करते, पुराने ख़यालातवालोंको जली-कटी भी खूब सुनाया करते हैं; पर काम पड़ते ही मालूम नहीं कहाँ जा छुपते हैं, उनका पता ही नहीं लगता। उन्हीं लोगोंपर मेरी सबसे ज्यादा अश्रद्धा है। नाराज मत होना मा, तुम्हारा द्विजू उसी जातका है।"

सुनकर दयामयी भीतरसे नाखुश हुई हों, सो बात नहीं। द्विजदासके सम्बन्धमें बोलीं—"वह इसी तरहका धोखेबाज है! लेकिन बेटा, तू अगर वन्दनासे घृणा नहीं करता तो फ़िर उसका छुआ खाता क्यों नहीं? उसको रसोईमें भेज दिया करती थी तो तैने वहाँ खाना ही छोड़ दिया, मेरे चौकेमें खाने लगा। और कोई समझे या न समझे, क्या मैं भी नहीं समझ सकती?"

विप्रदासने कहा—"तुम न समझोगी तो 'मा' क्यों हुई थीं? लेकिन मैं तो वास्तवमें जाति-भेद मानता हूँ, मैं तो उसके हाथका छुआ नहीं खा-पी

विप्रदासको चुप देखकर कह उठीं—"जवाब क्यों नहीं देता ?"

"जवाब तो तुमने माँगा नहीं मा। हुक्म दिया है कि वन्दना अब इस घरमें न आने पावे,—सो ही होगा।"

उसकी बात सुनकर दयामयी दुविधामें पड़ गईं, बोलीं—"हुकम क्या बेजा दे रही हूँ तू समझता है ?"

"समझता क्यों नहीं मा। वन्दनाने अन्याय कुछ नहीं किया, सामाजिक आचार-व्यवहारमें उनका हमारा मेल नहीं खाता, वे लोग जात-पाँत नहीं मानते, यह जानकर ही तुमने उसे बुलाया था और प्यार भी करने लगी थीं। तुम्हारे मनमें शायद आशा थी कि ये लोग मुँहसे ही कहा करते हैं, अमल नहीं करते,—यहीं तुमसे गलती हो गई, और इसीलिए सदमा भी उठाया।"

दयामयीने कहा—"शायद यह बात ठीक हो, पर उसके ब्याहकी बात सुनके क्या तुझे घृणा नहीं होती विपिन ? बता तू क्या कहना चाहता है ?"

विप्रदास मुसकराता हुआ बोला—"उसका ब्याह अभी हुआ नहीं है, और हो जानेपर भी मुझे गुस्सा न करना चाहिए। बल्कि यह सोचकर मैं श्रद्धा ही करूँगा कि उन लोगोंका विश्वास सत्य कार्यमेंसे प्रकाशित हुआ, उन लोगोंने किसीको धोखा नहीं दिया। मगर मा, कलकत्तेमें मैंने बहुतोंको देखा है जो कोरी बातोंके घटाटोपमें मानते कुछ भी नहीं, जाति-भेदपर भी विश्वास नहीं करते, पुराने ख़यालातवालोंको जली-कटी भी खूब सुनाया करते हैं; पर काम पड़ते ही मालूम नहीं कहाँ जा छुपते हैं, उनका पता ही नहीं लगता। उन्हीं लोगोंपर मेरी सबसे ज्यादा अश्रद्धा है। नाराज मत होना मा, तुम्हारा द्विजू उसी जातका है।"

सुनकर दयामयी भीतरसे नाखुश हुई हों, सो बात नहीं। द्विजदासके सम्बन्धमें बोलीं—"वह इसी तरहका धोखेबाज है! लेकिन बेटा, तू अगर वन्दनासे घृणा नहीं करता तो फिर उसका छुआ खाता क्यों नहीं ? उसको रसोईमें भेज दिया करती थी तो तैंने वहाँ खाना ही छोड़ दिया, मेरे चौकेमें खाने लगा। और कोई समझे या न समझे, क्या मैं भी नहीं समझ सकती ?"

विप्रदासने कहा—"तुम न समझोगी तो 'मा' क्यों हुई थीं ? लेकिन मैं तो वास्तवमें जाति-भेद मानता हूँ, मैं तो उसके हाथका छुआ नहीं खा-पी

दयामयीने सतीकी तरफ लक्ष्य करके कहा—"तुम्हारी क्या राय है बहू ?"

लड़कपनमें सती सासुके सामने पतिके साथ बात करती थी, पर अब नहीं करती। अकसर इधर-उधर चली जाती है या निरुत्तर रहती है। परन्तु आज उसने बात की, धीरेसे बोली—"रहने दो मा, अब उसे यहाँ लानेकी ज़रूरत नहीं।"

जवाब सुनकर सासु खुश न हो सकीं। उनकी अभिलाषा कुछ और थी, साथ ही मुँहसे वे कह भी नहीं सकती थीं। उन्होंने कहा—"बड़े-आदमीकी लड़कीको अभिमान हो गया क्या ?"

"नहीं मा, अभिमान नहीं; लेकिन जिस तरह हम लोग चले आये हैं, उसपर फिर उसे यहाँ नहीं बुलाया जा सकता।"

"क्यों नहीं बुलाया जा सकता बहू ? एक कोई बेजा बात हो भी गई, तो क्या उसका फिर सुधार नहीं हो सकता ?"

"नहीं हो सकता, यह मैं नहीं कहती; पर ज़रूरत क्या है मा ? पहले भी उसने कई दफे यहाँ आना चाहा था, पर हम लोग राजी नहीं हो सके थे; और अब भी वैसी ही सब बाधाएँ मौजूद हैं। वह रसोईमें घुसती थी इस-लिए इन्होंने उस रसोईसे ही ताल्लुक छोड़ दिया था,—क्या ज़रूरत है उसे यहाँ बुलानेकी ?"

विप्रदासने कहा—"यह शिकायत उसके करनेकी है, तुम्हारी नहीं।"—और वह हँस दिया, बोला—"फिर भी वन्दनाकी मुझपर प्रचण्ड श्रद्धा-भक्ति है, खुद मा इस बातकी गवाह हैं।"

सतीने मुँह उठाकर देखा, शायद अकस्मात् यह भूल गई कि सासु सामने ही खड़ी हैं, बोली—"सिर्फ़ मा ही क्यों, मैं भी गवाह हूँ। स्त्रियाँ जब श्रद्धा-भक्ति करने लगती हैं तब शिकायत नहीं किया करतीं। देवी-देवता भी कम कष्ट नहीं देते, फिर भी पूजा बन्द नहीं करतीं, कहती हैं—'दुःख उन्होंने अच्छेके लिए ही दिया है।' फिर साससे कहने लगी—"तुम्हें भी मा, वन्दना कम श्रद्धा-भक्ति नहीं करती, तुमसे भी उसका कम प्रेम नहीं है। तुम्हारी धारणा है कि तुम्हारी रसोईमें वह खाने-पीनेकी तैयारियाँ सिर्फ़ इनके लिए कर दिया करती थी। यह बात नहीं, तुम दोनोंके लिए ही वह करती थी,—तुम दोनोंको वह बहुत चाहती है। उसपर तुमने रसोई-घरका भार सौंपा था, सबको खिलाने-पिलानेका काम; पर तुम्हारी अवहेलना करके वह दूसरोंको पुलाव-कलिया नहीं खिला

दयामयीने सतीकी तरफ लक्ष्य करके कहा—" तुम्हारी क्या राय है बहू ? "

लड़कपनमें सती सासुके सामने पतिके साथ बात करती थी, पर अब नहीं करती। अकसर इधर-उधर चली जाती है या निरुत्तर रहती है। परन्तु आज उसने बात की, धीरेसे बोली—" रहने दो मा, अब उसे यहाँ लानेकी ज़रूरत नहीं। "

जवाब सुनकर सासु खुश न हो सकीं। उनकी अभिलाषा कुछ और थी, साथ ही मुँहसे वे कह भी नहीं सकती थीं। उन्होंने कहा—" बड़े-आदमीकी लड़कीको अभिमान हो गया क्या ? "

" नहीं मा, अभिमान नहीं; लेकिन जिस तरह हम लोग चले आये हैं, उसपर फिर उसे यहाँ नहीं बुलाया जा सकता। "

" क्यों नहीं बुलाया जा सकता बहू ? एक कोई बेजा बात हो भी गई, तो क्या उसका फिर सुधार नहीं हो सकता ? "

" नहीं हो सकता, यह मैं नहीं कहती; पर ज़रूरत क्या है मा ? पहले भी उसने कई दफे यहाँ आना चाहा था, पर हम लोग राजी नहीं हो सके थे; और अब भी वैसी ही सब बाधाएँ मौजूद हैं। वह रसोईमें घुसती थी इस-लिए इन्होंने उस रसोईसे ही ताल्लुक छोड़ दिया था,—क्या ज़रूरत है उसे यहाँ बुलानेकी ? "

विप्रदासने कहा—" यह शिकायत उसके करनेकी है, तुम्हारी नहीं। "—और वह हँस दिया, बोला—" फिर भी वन्दनाकी मुझपर प्रचण्ड श्रद्धा-भक्ति है, खुद मा इस बातकी गवाह हैं। "

सतीने मुँह उठाकर देखा, शायद अकस्मात् यह भूल गई कि सासु सामने ही खड़ी हैं, बोली—" सिर्फ मा ही क्यों, मैं भी गवाह हूँ। स्त्रियाँ जब श्रद्धा-भक्ति करने लगती हैं तब शिकायत नहीं किया करतीं। देवी-देवता भी कम कष्ट नहीं देते, फिर भी पूजा बन्द नहीं करतीं, कहती हैं—'दुःख उन्होंने अच्छेके लिए ही दिया है।' फिर साससे कहने लगी—"तुम्हें भी मा, वन्दना कम श्रद्धा-भक्ति नहीं करती, तुमसे भी उसका कम प्रेम नहीं है। तुम्हारी धारणा है कि तुम्हारी रसोईमें वह खाने-पीनेकी तैयारियाँ सिर्फ इनके लिए कर दिया करती थी। यह बात नहीं, तुम दोनोंके लिए ही वह करती थी,—तुम दोनोंको वह बहुत चाहती है। उसपर तुमने रसोई-घरका भार सौंपा था, सबको खिलाने-पिलानेका काम; पर तुम्हारी अवहेलना करके वह दूसरोंको पुलाव-कलिया नहीं खिला

विप्रदासको बड़ा क्लेश मालूम हुआ। बहुत-कुछ क्रोधके समान—निर्दय निष्ठुर कहकर मानो दण्ड देनेकी इच्छा होने लगी। परन्तु प्रकट करना उसकी प्रकृतिमें न थी, वह भाव उसके मनमें ही रह गया।

चार-पाँच दिन बाद विप्रदास हाईकोर्टसे वापस आया बड़े जोरका बुखार लेकर। शायद मैलेरिया होगा या और भी कुछ हो सकता है। आँखें लाल-सुर्ख हो रही थीं, माथेमें ज़बरदस्त दर्द हो रहा था। अन्नदाके पास आनेपर उसने कहा—" अनु-दीदी, बीमार तो मैं कभी पड़ता नहीं, बहुत दिनोंसे ज्वरासुर दैत्यको मैं धोखा देता आया हूँ, पर अबकी मालूम होता है वह ब्याजसमेत सब वसूल कर लेगा। जान पड़ता है कुछ दिन तकलीफ़ देगा, आसानीसे छुटकारा नहीं देगा। "

हालत देखकर अन्नदा चिन्तित हो गई, परन्तु फिर भी निर्भयताके स्वरमें साहस दिलाती हुई बोली—" नहीं भइया, तुम्हारी इस पुण्यकी देहपर दैत्य-दानवका ज़ोर ज्यादा नहीं चल सकेगा, तुम दो ही दिनमें अच्छे हो जाओगे। लेकिन डाक्टर बुलवाने किसीको भेज दूँ—मैं लापरवाही नहीं कर सकूँगी। "

" सो बुलवा लो। "—कहकर विप्रदास पलंगपर पड़ रहा।

अन्नदा बड़ी आफतमें पड़ गई। उधर देशसे अचानक वासुदेवकी बीमारीकी खबर पाकर द्विजदास घर चला गया, और दत्तजी भी शहरमें नहीं हैं—मालिकके कामसे ढाका गये हुए हैं। अकेली क्या करे कुछ समझमें न आनेसे सबेरे ही उसने आकर कहा—" विपिन, एक बात कहूँ, तुम गुस्सा तो न होओगे ? "

" तुम्हारी बातपर कभी गुस्सा हुआ हूँ दीदी ? "

अन्नदा पास बैठी हुई उसके सिरपर हाथ फेर रही थी, बोली—" प्राण देकर रोगीकी सेवा ही कर सकती हूँ, परन्तु मूरख औरतकी जात ठहरी, और कुछ नहीं जानती। देश भी खबर नहीं भिजवा सकती, बचा बीमार है,—उसे छोड़कर बहू आयेगी कैसे,—सोचती हूँ वन्दना जीजीको खबर कर दूँ तो कैसा ? "

विप्रदासने हँसते हुए कहा—" बम्बई क्या यह-मुहल्ला और वह-मुहल्ला है दीदी, कि खबर पाते ही वह देखने आ जायगी ? उसके आते-आते—नमक पीसके देनेसे पहले ही दाल खतम हो जायगी। इसकी ज़रूरत नहीं। "

अन्नदाने अपनी जीभ दबाते हुए कहा—" बलैयाँ लूँ, भगवान बचायें,

विप्रदासको बड़ा क्लेश मालूम हुआ। बहुत-कुछ क्रोधके समान—निर्दय निष्ठुर कहकर मानो दण्ड देनेकी इच्छा होने लगी। परन्तु प्रकट करना उसकी प्रकृतिमें न थी, वह भाव उसके मनमें ही रह गया।

चार-पाँच दिन बाद विप्रदास हाईकोर्टसे वापस आया बड़े जोरका बुखार लेकर। शायद मैलेरिया होगा या और भी कुछ हो सकता है। आँखें लाल-सुर्ख हो रही थीं, माथेमें ज़बरदस्त दर्द हो रहा था। अन्नदाके पास आनेपर उसने कहा—"अनु-दीदी, बीमार तो मैं कभी पड़ता नहीं, बहुत दिनोंसे ज्वरासुर दैत्यको मैं धोखा देता आया हूँ, पर अबकी मालूम होता है वह ब्याजसमेत सब वसूल कर लेगा। जान पड़ता है कुछ दिन तकलीफ देगा, आसानीसे छुटकारा नहीं देगा।"

हालत देखकर अन्नदा चिन्तित हो गई, परन्तु फिर भी निर्भयताके स्वरमें साहस दिलाती हुई बोली—"नहीं भइया, तुम्हारी इस पुण्यकी देहपर दैत्य-दानवका ज़ोर ज्यादा नहीं चल सकेगा, तुम दो ही दिनमें अच्छे हो जाओगे। लेकिन डाक्टर बुलवाने किसीको भेज दूँ—मैं लापरवाही नहीं कर सकूँगी।"

"सो बुलवा लो।"—कहकर विप्रदास पलंगपर पड़ रहा।

अन्नदा बड़ी आफतमें पड़ गई। उधर देशसे अचानक वासुदेवकी बीमारीकी खबर पाकर द्विजदास घर चला गया, और दत्तजी भी शहरमें नहीं हैं—मालिकके कामसे ढाका गये हुए हैं। अकेली क्या करे कुछ समझमें न आनेसे सबेरे ही उसने आकर कहा—"विपिन, एक बात कहूँ, तुम गुस्सा तो न होओगे?"

"तुम्हारी बातपर कभी गुस्सा हुआ हूँ दीदी?"

अन्नदा पास बैठी हुई उसके सिरपर हाथ फेर रही थी, बोली—"प्राण देकर रोगीकी सेवा ही कर सकती हूँ, परन्तु मूरख औरतकी जात ठहरी, और कुछ नहीं जानती। देश भी खबर नहीं भिजवा सकती, बच्चा बीमार है,—उसे छोड़कर बहू आयेगी कैसे,—सोचती हूँ बन्दना जीजीको खबर कर दूँ तो कैसा?"

विप्रदासने हँसते हुए कहा—"बम्बई क्या यह-मुहल्ला और वह-मुहल्ला है दीदी, कि खबर पाते ही वह देखने आ जायगी? उसके आते-आते—नमक पीसके देनेसे पहले ही दाल खतम हो जायगी। इसकी ज़रूरत नहीं।"

अन्नदाने अपनी जीभ दबाते हुए कहा—"बलैयाँ लूँ, भगवान बचायें,

लगता है कि एक बार जता देना ठीक है, नहीं तो बहू शायद बहुत दुःख करेगी। कुछ भी हो, आखिर है तो बहन ही ?"

"घर जानती हो ?"

"अपना शोफर जानता है। उन लोगोंको वहाँ पहुँचा आया था।"

विप्रदास बहुत देर तक चुप रहकर बोला—"अच्छा, दे दो एक बार खबर। पर इतना आमोद-प्रमोद छोड़कर क्या वह आ सकेगी ? मालूम तो नहीं होता दीदी।"

अन्नदाने कहा—"मालूम तो मुझे भी नहीं होता भइया, अब तो उनके पहनाव-उढ़ावकी ही बात नज़र आ रही है मुझे। फिर भी एक बार कहला भेजूँ।"

विप्रदासने निरुत्सुक और थके हुए कंठसे कहा—"कहला भेजो दीदी, जब कि तुम्हारी ऐसी ही इच्छा है तो।"

१७

अकस्मात् हवड़ा-स्टेशनपर मौसीके साथ जब बन्दनाकी भेंट हो गई तो उसका बम्बई जाना स्थगित कराना और उसे अपने घर ले जाना मौसीके लिए कष्टसाध्य न हुआ। वे अपनी लड़कीके विवाहके लिए पतिके कार्यस्थल पंजाबसे अपने देश आ रही थीं। बन्दनाका अपनी मौसीके प्रस्तावपर राजी हो जानेका, असल कारणके सिवा एक और कारण था, जिसे यहाँ प्रकट कर देना आवश्यक है। बचपनसे लेकर अब तक बन्दनाका जीवन सुदूर प्रवास ही प्रवासमें बीता है, उसकी शिक्षा-दीक्षा आदि सब वहींकी है, और मजा यह है कि वह जिस समाजके अन्तर्गत है उस समाजका अधिकतर समुदाय कलकत्तेमें रहता है, उसके साथ आज तक उसका घनिष्ठ परिचय ही नहीं हुआ। मामूली परिचय जो-कुछ उसे हुआ था वह सिर्फ़ अखबारों, मासिक-पत्रों और साधारण उपन्यास-कहानियोंके सहयोगसे। कलकत्ते जिनका हरवक्त आना-जाना बना रहता है उनके मुँहसे अनेक तथ्य उसे बीच-बीचमें मालूम होते रहते थे—ऐनिटा चैटर्जी एम० ए०, विनीटा बैनर्जी बी० ए०—अनुसूया, चित्रलेखा, प्रियम्वदा आदि अनेक भड़कीले नाम और चमकीली कहानियाँ—बीसवीं सदीके अत्याधुनिक मनोभाव और रोमाञ्चकारी जीवन-यात्राका विवरण इत्यादि;

लगता है कि एक बार जता देना ठीक है, नहीं तो वहू शायद बहुत दुःख करेगी। कुछ भी हो, आखिर है तो बहन ही ?"

" घर जानती हो ?"

" अपना शोफर जानता है। उन लोगोंको वहाँ पहुँचा आया था।"

विप्रदास बहुत देर तक चुप रहकर बोला—" अच्छा, दे दो एक बार खबर। पर इतना आमोद-प्रमोद छोड़कर क्या वह आ सकेगी ? मालूम तो नहीं होता दीदी।"

अन्नदाने कहा—" मालूम तो मुझे भी नहीं होता भइया, अब तो उनके पहनाव-उढ़ावकी ही बात नज़र आ रही है मुझे। फिर भी एक बार कहला भेजूँ।"

विप्रदासने निरुत्सुक और थके हुए कंठसे कहा—" कहला भेजो दीदी, जब कि तुम्हारी ऐसी ही इच्छा है तो।"

१७

अकस्मात् हवड़ा-स्टेशनपर मौसीके साथ जब बन्दनाकी भेंट हो गई तो उसका बम्बई जाना स्थगित कराना और उसे अपने घर ले जाना मौसीके लिए कष्टसाध्य न हुआ। वे अपनी लड़कीके विवाहके लिए पतिके कार्यस्थल पंजाबसे अपने देश आ रही थीं। बन्दनाका अपनी मौसीके प्रस्तावपर राजी हो जानेका, असल कारणके सिवा एक और कारण था, जिसे यहाँ प्रकट कर देना आवश्यक है। बचपनसे लेकर अब तक बन्दनाका जीवन सुदूर प्रवास ही प्रवासमें बीता है, उसकी शिक्षा-दीक्षा आदि सब वहींकी है, और मजा यह है कि वह जिस समाजके अन्तर्गत है उस समाजका अधिकतर समुदाय कलकत्तेमें रहता है, उसके साथ आज तक उसका घनिष्ठ परिचय ही नहीं हुआ। मामूली परिचय जो-कुछ उसे हुआ था वह सिर्फ़ अखबारों, मासिक-पत्रों और साधारण उपन्यास-कहानियोंके सहयोगसे। कलकत्ते जिनका हरवक्त आना-जाना बना रहता है उनके मुँहसे अनेक तथ्य उसे बीच-बीचमें मालूम होते रहते थे—ऐनिटा चैटर्जी एम० ए०, विनीटा बैनर्जी बी० ए०—अनुसूया, चित्रलेखा, प्रियम्वदा आदि अनेक भड़कीले नाम और चमकीली कहानियाँ—बीसवीं सदीके अत्याधुनिक मनोभाव और रोमाञ्चकारी जीवन-यात्राका विवरण इत्यादि;

"नहीं, मैं यहीं खड़ी हूँ, उन्हें ज़रा खबर नहीं दे सकते ?"

"दे सकता हूँ। क्या कहना होगा ?"

"कहो जाकर कि विप्रदास बाबूके घरसे अन्नदा आई है।"

बैहरा चला गया। थोड़ी देर बाद वन्दना नीचे उतर आई और अन्नदाका हाथ पकड़के उसे कमरेमें लाकर विठाया। ऐसा उसने कभी नहीं किया था; वह भूल गई कि सामाजिक दृष्टिकोणसे यह विधवा उससे बहुत छोटी है,—वह विप्रदासके घरकी एक दासी-मात्र है। विना-कारण उसकी आँखें भर आईं, बोली—"अनु-दीदी, तुम मेरी खबर-सुध लेने आओगी इसका मुझे ख़याल न था। सोचा था मुझे तुम लोग भूल गई हो।"

"भूलूँगी क्यों जीजी-बाई, भूली नहीं। बड़े बाबूने मुझे आपके पास भेजा है यह कहनेको—"

"नहीं अनु-दीदी, मुझे 'आप' कहोगी तो मैं जवाब न दूँगी।"

अन्नदाने इसपर कोई आपत्ति नहीं की, सिर्फ़ हँसते हुए कहा—"उन लोगोंको गोदमें खिलाया-पिलाया है इसलिए 'तुम' कहा करती हूँ, नहीं तो उस घरकी मैं दासीके सिवा और कुछ नहीं।"

वन्दनाने कहा—"सो होने दो। मगर मुखर्जी साहबको तो कलकत्ते आये पाँच-छै रोज हो गये, खुद क्या एक दिनके लिए न आ सके ? वे तो जानते हैं कि मैं बम्बई नहीं गई ?"

"हाँ, मेरे जरिए यह खबर उन्हें मिल चुकी है। पर जानती तो हो जीजी-बाई, उन्हें कितना काम रहता है। उन्हें ज़रा भी वक्त नहीं मिला।"

यह सुनकर वन्दना खुश न हुई, बोली—"काम तो सभीको रहता है अनु-दीदी। हम लोग गई थीं इसलिए भद्रताके बहाने उन्होंने तुम्हें भेज दिया, नहीं तो याद भी नहीं करते। उन्हें कहना जाकर कि मेरी मौसीके पास उनके बराबर धन-दौलत नहीं है, फिर भी यदि एक बार मेरी खबर-सुध लेने इस घरमें पदार्पण करते तो उनकी जात नहीं मारी जाती और मान-मर्यादाकी भी हानि नहीं होती।"

इन सब उलहनोंका जवाब देना अन्नदाका काम नहीं था। उसने वहाँ चलनेके लिए अनुरोध किया, पर वन्दनाको सुननेका धैर्य न था, अन्नदाकी बात काटकर वह बीचहीमें बोल उठी—"नहीं अनु-दीदी, सो नहीं होनेका।

"नहीं, मैं यहीं खड़ी हूँ, उन्हें ज़रा खबर नहीं दे सकते?"

"दे सकता हूँ। क्या कहना होगा?"

"कहो जाकर कि विप्रदास बाबूके घरसे अन्नदा आई है।"

बैहरा चला गया। थोड़ी देर बाद वन्दना नीचे उतर आई और अन्नदाका हाथ पकड़के उसे कमरेमें लाकर बिठाया। ऐसा उसने कभी नहीं किया था; वह भूल गई कि सामाजिक दृष्टिकोणसे यह विधवा उससे बहुत छोटी है,—वह विप्रदासके घरकी एक दासी-मात्र है। बिना-कारण उसकी आँखें भर आईं, बोली—"अनु-दीदी, तुम मेरी खबर-सुध लेने आओगी इसका मुझे खयाल न था। सोचा था मुझे तुम लोग भूल गई हो।"

"भूलूँगी क्यों जीजी-बाई, भूली नहीं। बड़े बाबूने मुझे आपके पास भेजा है यह कहनेको—"

"नहीं अनु-दीदी, मुझे 'आप' कहोगी तो मैं जवाब न दूँगी।"

अन्नदाने इसपर कोई आपत्ति नहीं की, सिर्फ़ हँसते हुए कहा—"उन लोगोंको गोदमें खिलाया-पिलाया है इसलिए 'तुम' कहा करती हूँ, नहीं तो उस घरकी मैं दासीके सिवा और कुछ नहीं।"

वन्दनाने कहा—"सो होने दो। मगर मुखर्जी साहबको तो कलकत्ते आये पाँच-छै रोज हो गये, खुद क्या एक दिनके लिए न आ सके? वे तो जानते हैं कि मैं बम्बई नहीं गई?"

"हाँ, मेरे जरिए यह खबर उन्हें मिल चुकी है। पर जानती तो हो जीजी-बाई, उन्हें कितना काम रहता है। उन्हें ज़रा भी वक्त नहीं मिला।"

यह सुनकर वन्दना खुश न हुई, बोली—"काम तो सभीको रहता है अनु-दीदी। हम लोग गई थीं इसलिए भद्रताके बहाने उन्होंने तुम्हें भेज दिया, नहीं तो याद भी नहीं करते। उन्हें कहना जाकर कि मेरी मौसीके पास उनके बराबर धन-दौलत नहीं है, फिर भी यदि एक बार मेरी खबर-सुध लेने इस घरमें पदार्पण करते तो उनकी जात नहीं मारी जाती और मान-मर्यादाकी भी हानि नहीं होती।"

इन सब उलहनोंका जवाब देना अन्नदाका काम नहीं था। उसने वहाँ चलनेके लिए अनुरोध किया, पर वन्दनाको सुननेका धैर्य न था, अन्नदाकी बात काटकर वह बीचहीमें बोल उठी—"नहीं अनु-दीदी, सो नहीं होनेका।

हाथ दबाते हुए कहा—" ये दो दिन तो किसी-न-किसी कदर काट दूँगी, पर ब्याह हो चुकनेपर भी क्या न आओगी ? हम लोगोंपर गुस्सा ही बनी रहोगी क्या ? तुम लोगोंके बीच कहाँ क्या हुआ है, मेरे जाननेकी बात नहीं, मैं जानती भी नहीं, पर इतना जानती हूँ कि दोष और चाहे किसीने भी किया हो, विपिनने हर्गिज नहीं किया। उसे न पहचाननेसे शायद गल्ती हो जाय, पर पहचान जानेसे ऐसी गल्ती नहीं होगी जीजी-बाई।"

बन्दना कुछ देर चुप रहकर चटसे उठ खड़ी हुई, बोली—" चलो मैं चलती हूँ।"

" अभी चलोगी ?"

" हाँ, अभी तुरत।"

" घरपर कह नहीं जाओगी ? ये लोग फिकर करेंगे जो।"

" कहने-कहलानेमें देर हो जायगी अनु-जीजी, तुम चलो।" इतना कहकर वह उत्तरकी प्रतीक्षा किये बगैर ही गाड़ीमें जाकर बैठ गई। एक बैहराको इशारेसे बुलाकर कह दिया कि वह मौसीजीसे जाकर कह दे कि मैं अपनी बहनके घर जा रही हूँ, वहाँ विप्रदास बाबू बीमार हैं।

बन्दनाने आकर जब विप्रदासके कमरेमें प्रवेश किया तब दिन छिप रहा था, पर बत्ती जलानेका समय नहीं हुआ था। विप्रदास कई तकियोंके सहारे इस ढंगसे बैठा हुआ था कि चेहरा देखकर कोई यह नहीं कह सकता कि वह बहुत ज्यादा बीमार है। बन्दनाके मनमें ज़रा तसल्ली आ गई; बोली—" मुखर्जी साहब, नमस्कार। जीजी मौजूद होतीं तो कहतीं, बड़ोंके पाँव छूकर ही प्रणाम करना चाहिए। पर छूनेमें डर लगता है, कहीं छूत न लग जाय।"

विप्रदास मुँहसे कुछ न बोलकर सिर्फ हँस दिये। बन्दनाने कहा—" बुलवाया क्यों था,—सेवा करानेको ? अनु-दीदी कह रही थी दवा देनेका वक्त हो गया है। मगर यह क्या ? वैद्यराजकी गोलियाँ कहाँ हैं ? डाक्टर बुलानेकी बुद्धि किसने दी आपको ?"

विप्रदासने कहा—" हमारे यहाँ 'ढीढ' एक शब्द है, उसके मानी जानती हो बन्दना ?"

बन्दनाने कहा—" जानती हूँ महाशय, खूब जानती हूँ। मनुष्य होकर जो मनुष्यसे घृणा करते हैं, छूते नहीं, उन्हें कहते हैं। उनसे बढ़कर 'ढीढ़' संसारमें और कोई है क्या ?"

हाथ दबाते हुए कहा—" ये दो दिन तो किसी-न-किसी कदर काट दूँगी, पर ब्याह हो चुकनेपर भी क्या न आओगी ? हम लोगोंपर गुस्सा ही बनी रहोगी क्या ? तुम लोगोंके बीच कहाँ क्या हुआ है, मेरे जाननेकी बात नहीं, मैं जानती भी नहीं, पर इतना जानती हूँ कि दोष और चाहे किसीने भी किया हो, विपिनने हर्गिज नहीं किया। उसे न पहचाननेसे शायद गलती हो जाय, पर पहचान जानेसे ऐसी गलती नहीं होगी जीजी-बाई।"

बन्दना कुछ देर चुप रहकर चटसे उठ खड़ी हुई, बोली—" चलो मैं चलती हूँ।"

" अभी चलोगी ?"

" हाँ, अभी तुरत।"

" घरपर कह नहीं जाओगी ? ये लोग फिकर करेंगे जो।"

" कहने-कहलानेमें देर हो जायगी अनु-जीजी, तुम चलो।" इतना कहकर वह उत्तरकी प्रतीक्षा किये बगैर ही गाड़ीमें जाकर बैठ गई। एक बैहराको इशारेसे बुलाकर कह दिया कि वह मौसीजीसे जाकर कह दे कि मैं अपनी बहनके घर जा रही हूँ, वहाँ विप्रदास बाबू बीमार हैं।

बन्दनाने आकर जब विप्रदासके कमरेमें प्रवेश किया तब दिन छिप रहा था, पर बत्ती जलानेका समय नहीं हुआ था। विप्रदास कई तकियोंके सहारे इस ढंगसे बैठा हुआ था कि चेहरा देखकर कोई यह नहीं कह सकता कि वह बहुत ज्यादा बीमार है। बन्दनाके मनमें ज़रा तसल्ली आ गई; बोली—" मुखर्जी साहब, नमस्कार। जीजी मौजूद होतीं तो कहतीं, बड़ोंके पाँव छूकर ही प्रणाम करना चाहिए। पर छूनेमें डर लगता है, कहीं छूत न लग जाय।"

विप्रदास मुँहसे कुछ न बोलकर सिर्फ़ हँस दिये। बन्दनाने कहा—" बुलवाया क्यों था,—सेवा करानेको ? अनु-दीदी कह रही थी दवा देनेका वक्त हो गया है। मगर यह क्या ? वैद्यराजकी गोलियाँ कहाँ हैं ? डाक्टर बुलानेकी बुद्धि किसने दी आपको ?"

विप्रदासने कहा—" हमारे यहाँ 'ढीठ' एक शब्द है, उसके मानी जानती हो बन्दना ?"

बन्दनाने कहा—" जानती हूँ महाशय, खूब जानती हूँ। मनुष्य होकर जो मनुष्यसे घृणा करते हैं, छूते नहीं, उन्हें कहते हैं। उनसे बढ़कर 'ढीठ' संसारमें और कोई है क्या ?"

नहीं। दूर रहती हूँ, अपने समाजके प्रायः किसीको नहीं जानती, मुँह-ज़वानी बहुतोंसे बहुतसी बातें सुना करती थी, उपन्यास-कहानियोंमें न-जाने क्या-क्या पढ़ा करती थी, उन लोगोंके साथ अपनेको मिलाकर एक न कर सकी थी,— ऐसा लगता था जैसे हम लोग समाजसे अलग जातिच्युत-से हों। सो जब मौसीजीने आग्रह किया तब मैंने सोचा कि प्रकृतिके व्याहमें दैवसे मौका मिल गया है, ऐसा मौका फिर तो मिलनेका नहीं; इसीसे यहाँ रुक गई मुखर्जी-साहब।"

विप्रदासने मुसकराते हुए कहा—"मगर वह व्याह ही तो अभी बाकी है। अपने समाजके लोगोंको पहचाननेका मौका कहाँ मिला?"

"मौका पूरा नहीं मिला, यह सही है, पर जितना मिला है उतना ही मेरे लिए काफ़ी है।"

"तुम्हारे अपने साथ इन लोगोंका कितना मेल बैठा बन्दना? मैं भी सुन सकता हूँ क्या?"

बन्दना हँस दी, बोली—"आप अच्छे हो लीजिए, उसके बाद विस्तारसे सब सुनाऊँगी।"

नौकर बत्ती जलाके चला गया। सिरहानेकी खिड़की बन्द करके बन्दनाने दवा पिलाई; और कहा—"अब आप बैठे मत रहिए, लेट जाइए।"—कहकर उसने सिमटे हुए बिस्तरको झाड़-फटकारकर साफ कर दिया, तकिये जहाँके तहाँ ठीकसे लगा दिये। फिर विप्रदासके लेट जानेपर उसे पैरसे लेकर गले तक अच्छी तरह चादर उढ़ाकर कहा—"अच्छे होकर अपनेको शुद्ध करनेमें न जाने आपको कितने गोबर-गंगाजलकी ज़रूरत पड़ेगी।"

विप्रदासने अपने दोनों हाथ फैलाकर कहा—"इतनेकी! पर आश्चर्य तो यह है कि तुम्हें सेवा-जतन करना भी थोड़ा-बहुत आता है मालूम होता है।"

"थोड़ा-बहुत आता है? नहीं महाशय, ऐसा नहीं कह सकते। हम लोगोंके बारेमें आपको और भी ज़रा खोज-खबर रखना पड़ेगी!"

"यानी—"

"यानी अगर आप हम लोगोंकी निन्दा ही करना चाहते हैं तो आपको वह जानकारीके साथ करनी होगी। इस तरह आँख मींचके अंटसंट बात मैं आपको नहीं कहने दूँगी।"

विप्रदासके चेहरेपर परिहासकी मुस्कराहट आ गई, उसने कहा—"तुम्हारे ये 'हम लोग' कौन हैं बन्दना? किन लोगोंके बारेमें मुझे और भी ज़रा खोज

नहीं। दूर रहती हूँ, अपने समाजके प्रायः किसीको नहीं जानती, मुँह-जवानी बहुतोंसे बहुतसी बातें सुना करती थी, उपन्यास-कहानियोंमें न-जाने क्या-क्या पढ़ा करती थी, उन लोगोंके साथ अपनेको मिलाकर एक न कर सकी थी,— ऐसा लगता था जैसे हम लोग समाजसे अलग जातिच्युत-से हों। सो जब मौसीजीने आग्रह किया तब मैंने सोचा कि प्रकृतिके व्याहमें दैवसे मौका मिल गया है, ऐसा मौका फिर तो मिलनेका नहीं; इसीसे यहाँ रुक गई मुखर्जी-साहब।"

विप्रदासने मुसकराते हुए कहा—"मगर वह व्याह ही तो अभी बाकी है। अपने समाजके लोगोंको पहचाननेका मौका कहाँ मिला?"

"मौका पूरा नहीं मिला, यह सही है, पर जितना मिला है उतना ही मेरे लिए काफ़ी है।"

"तुम्हारे अपने साथ इन लोगोंका कितना मेल बैठा बन्दना? मैं भी सुन सकता हूँ क्या?"

बन्दना हँस दी, बोली—"आप अच्छे हो लीजिए, उसके बाद विस्तारसे सब सुनाऊँगी।"

नौकर बत्ती जलाके चला गया। सिरहानेकी खिड़की बन्द करके बन्दनाने दवा पिलाई; और कहा—"अब आप बैठे मत रहिए, लेट जाइए।"—कहकर उसने सिमटे हुए बिस्तरको झाड़-फटकारकर साफ कर दिया, तकिये जहाँके तहाँ ठीकसे लगा दिये। फिर विप्रदासके लेट जानेपर उसे पैरसे लेकर गले तक अच्छी तरह चादर उढ़ाकर कहा—"अच्छे होकर अपनेको शुद्ध करनेमें न जाने आपको कितने गोबर-गंगाजलकी ज़रूरत पड़ेगी।"

विप्रदासने अपने दोनों हाथ फैलाकर कहा—"इतनेकी! पर आश्चर्य तो यह है कि तुम्हें सेवा-जतन करना भी थोड़ा-बहुत आता है मालूम होता है।"

"थोड़ा-बहुत आता है? नहीं महाशय, ऐसा नहीं कह सकते। हम लोगोंके बारेमें आपको और भी ज़रा खोज-खबर रखना पड़ेगी!"

"यानी—"

"यानी अगर आप हम लोगोंकी निन्दा ही करना चाहते हैं तो आपको वह जानकारीके साथ करनी होगी। इस तरह आँख मीचके अंटसंट बात मैं आपको नहीं कहने दूँगी।"

विप्रदासके चेहरेपर परिहासकी मुस्कराहट आ गई, उसने कहा—"तुम्हारे ये 'हम लोग' कौन हैं बन्दना? किन लोगोंके बारेमें मुझे और भी ज़रा खोज

साँस लिया करती। मगर उन लोगोंको थकावट नहीं आती, बकते-झकते सबके सब मानो उन्मत्त हो उठते हैं।"

"पर तुम्हारे पिता पास होते तो तुम्हें बहुत-कुछ सहूलियत होती बन्दना। अखबारोंकी सारी खबरें तुम उनसे पूछकर जान सकती थीं,—उन लोगोंके सामने शरमिन्दा न होना पड़ता।"

बन्दनाने हँसकर उसकी बातका समर्थन करते हुए कहा—"हाँ, बापूजीको यह बीमारी है। सारीकी सारी खबरें जब तक छान-बीनके साथ नहीं पढ़ लेते तब तक उन्हें तृप्ति नहीं होती। पर हम लड़कियोंके लिए उसकी ज़रूरत क्या है बताइए तो? क्या होगा जानकर कि दुनियामें दिन-रात कहाँ क्या हो रहा है?"

"यह बात तुम्हारी जीजीके मुँहसे शोभा दे सकती है बन्दना, तुम्हारे मुँहसे नहीं।"—कहकर विप्रदास ज़रा हँस दिया।

बन्दनाने कहा—"वे लोग क्या मेरी जीजीसे ज्यादा जानते हैं आप समझते हैं? ज़रा भी नहीं। रीती-गागर होनेसे ही मुँहसे आवाज निकलती है। उन लोगोंकी और कोई बात जानी हो या न हो, मगर इतनी बात तो समझ ली है मुखर्जी साहब।"

"मगर ज्ञान तो चाहिए ही?"

"नहीं, नहीं चाहिए। ज्ञानकी उछल-कूदमें मुँहका मधु उनका विष होता जा रहा है। जानते हैं वे मेरी जीजीकी तरह सबको प्यार करना? नहीं जानते। कर सकते हैं वे जीजीकी तरह भक्ति? नहीं कर सकते। उन लोगोंके यहाँ किसीका कोई मित्र भी है? मालूम होता है नहीं है, ऐसा ही उन लोगोंमें पारस्परिक विद्वेष है। उन लोगोंके यहाँ अभाव भी क्या कुछ कम है? बाहरके ठाट-बाटसे मालूम ही नहीं हो सकता कि उनके अन्दर इतना पोलापन है! फिर किसलिए उनके साथ इतना हेलमेल किया जाय? भीतर तो साराका सारा घुनकर चलनी हो गया है।"

विप्रदासने हँसते हुए कहा—"हो क्या गया है बन्दना तुमको, इतना गुस्सा क्यों? किसीने धोखेसे रुपये तो नहीं ले लिये?"

"नहीं, धोखेसे नहीं लिये, उधार लिये हैं।"

"कितने?"

"ज्यादा नहीं, चार-पाँच सौ।"

"उनके नाम तो मालूम हैं?"

साँस लिया करती। मगर उन लोगोंको थकावट नहीं आती, बकते-झकते सबके सब मानो उन्मत्त हो उठते हैं।"

"पर तुम्हारे पिता पास होते तो तुम्हें बहुत-कुछ सहूलियत होती बन्दना। अखबारोंकी सारी खबरें तुम उनसे पूछकर जान सकती थीं,—उन लोगोंके सामने शरमिन्दा न होना पड़ता।"

बन्दनाने हँसकर उसकी बातका समर्थन करते हुए कहा—"हाँ, बापूजीको यह बीमारी है। सारीकी सारी खबरें जब तक छान-बीनके साथ नहीं पढ़ लेते तब तक उन्हें तृप्ति नहीं होती। पर हम लड़कियोंके लिए उसकी ज़रूरत क्या है बताइए तो? क्या होगा जानकर कि दुनियामें दिन-रात कहाँ क्या हो रहा है?"

"यह बात तुम्हारी जीजीके मुँहसे शोभा दे सकती है बन्दना, तुम्हारे मुँहसे नहीं।"—कहकर विप्रदास ज़रा हँस दिया।

बन्दनाने कहा—"वे लोग क्या मेरी जीजीसे ज्यादा जानते हैं आप समझते हैं? ज़रा भी नहीं। रीती-गागर होनेसे ही मुँहसे आवाज निकलती है। उन लोगोंकी और कोई बात जानी हो या न हो, मगर इतनी बात तो समझ ली है मुखर्जी साहब।"

"मगर ज्ञान तो चाहिए ही?"

"नहीं, नहीं चाहिए। ज्ञानकी उछल-कूदमें मुँहका मधु उनका विष होता जा रहा है। जानते हैं वे मेरी जीजीकी तरह सबको प्यार करना? नहीं जानते। कर सकते हैं वे जीजीकी तरह भक्ति? नहीं कर सकते। उन लोगोंके यहाँ किसीका कोई मित्र भी है? मालूम होता है नहीं है, ऐसा ही उन लोगोंमें पारस्परिक विद्वेष है। उन लोगोंके यहाँ अभाव भी क्या कुछ कम है? बाहरके ठाट-बाटसे मालूम ही नहीं हो सकता कि उनके अन्दर इतना पोलापन है! फिर किसलिए उनके साथ इतना हेलमेल किया जाय? भीतर तो साराका सारा घुनकर चलनी हो गया है।"

विप्रदासने हँसते हुए कहा—"हो क्या गया है बन्दना तुमको, इतना गुस्सा क्यों? किसीने धोखेसे रुपये तो नहीं ले लिये?"

"नहीं, धोखेसे नहीं लिये, उधार लिये हैं।"

"कितने?"

"ज्यादा नहीं, चार-पाँच सौ।"

"उनके नाम तो मालूम हैं?"

मेरी जीजीमें, उनकी सासुमें;—अबकी कल्कत्ता आना मेरा सार्थक हो गया मुखर्जी साहब।—आप हँस क्यों रहे हैं ?"

"सोच रहा हूँ, रुपयोंका शोक आदमीको किस कदर वक्ता बना डालता है। यह दोष मेरे अन्दर भी है न।"

"कौनसे रुपयोंका शोक,—उन पाँच-सौका ?"

"मालूम तो ऐसा ही होता है।"

वन्दना हँसती हुई बोली—"रुपयोंके लिए अब कोई चिन्ता नहीं। आपकी सेवा करनेकी मज़दूरीका बिल पेश करके दूना वसूल कर लूँगी तब आपका पिण्ड छोड़ूँगी। आप नहीं देंगे तो मासे वसूल कर लूँगी।"

इतनेमें अन्नदाने कमरेके अन्दर आकर कहा—"आठ बज रहे हैं, विपिनके खानेका वक्त हो गया।"

वन्दना व्यस्त होकर बोली—"चलो अनु-दीदी, आई मैं। क्यों, जाऊँ मुखर्जी साहब ?"

विप्रदासने हँसते हुए जवाब दिया—"जाओ। मगर सेवामें त्रुटि हुई तो मज़दूरी काट ली जायगी।"

"त्रुटि नहीं होगी महाशयजी, नहीं होगी।"—कहकर हँसती हुई वन्दना बाहर चली गई।

१८

वन्दनाने कहा—"खाना तैयार है, ले आऊँ ?"

विप्रदासने हँसते हुए कहा—"तुम बराबर मेरी जात मारनेकी कोशिश कर रही हो। अभी तक मैंने संध्या-वन्दना नहीं की, पहले उसकी व्यवस्था करा दो।"

"मैं खुद ही कर दूँ क्या मुखर्जी साहब ?"

"नहीं तो और यहाँ कौन है जो कर देगा ? पर माके पूजा-घर तक न जा सकूँगा,—शरीरमें ताकत नहीं है,—इसी कमरेमें इन्तजाम करना होगा। पहले मैं देखूँगा कि कैसा आयोजन करती हो, दोष-त्रुटि पकड़नेकी कोई बात है कि नहीं, तब समझके बताऊँगा कि मेरा खाना तुम लाओगी या महाराज।"

मेरी जीजीमें, उनकी सासुमें;—अबकी कलकत्ता आना मेरा सार्थक हो गया मुखर्जी साहब।—आप हँस क्यों रहे हैं ?"

"सोच रहा हूँ, रुपयोंका शोक आदमीको किस कदर वक्ता बना डालता है। यह दोष मेरे अन्दर भी है न!"

"कौनसे रुपयोंका शोक,—उन पाँच-सौका ?"

"मालूम तो ऐसा ही होता है।"

वन्दना हँसती हुई बोली—"रुपयोंके लिए अब कोई चिन्ता नहीं। आपकी सेवा करनेकी मज़दूरीका बिल पेश करके दूना वसूल कर लूँगी तब आपका पिण्ड छोड़ूँगी। आप नहीं देंगे तो माँसे वसूल कर लूँगी।"

इतनेमें अन्नदाने कमरेके अन्दर आकर कहा—"आठ बज रहे हैं, विपिनके खानेका वक्त हो गया।"

वन्दना व्यस्त होकर बोली—"चलो अनु-दीदी, आई मैं। क्यों, जाऊँ मुखर्जी साहब ?"

विप्रदासने हँसते हुए जवाब दिया—"जाओ। मगर सेवामें त्रुटि हुई तो मज़दूरी काट ली जायगी।"

"त्रुटि नहीं होगी महाशयजी, नहीं होगी।"—कहकर हँसती हुई वन्दना बाहर चली गई।

१८

वन्दनाने कहा—"खाना तैयार है, ले आऊँ ?"

विप्रदासने हँसते हुए कहा—"तुम बराबर मेरी जात मारनेकी कोशिश कर रही हो। अभी तक मैंने संध्या-वन्दना नहीं की, पहले उसकी व्यवस्था करा दो।"

"मैं खुद ही कर दूँ क्या मुखर्जी साहब ?"

"नहीं तो और यहाँ कौन है जो कर देगा ? पर माके पूजा-घर तक न जा सकूँगा,—शरीरमें ताकत नहीं है,—इसी कमरेमें इन्तजाम करना होगा। पहले मैं देखूँगा कि कैसा आयोजन करती हो, दोष-त्रुटि पकड़नेकी कोई बात है कि नहीं, तब समझके बताऊँगा कि मेरा खाना तुम लाओगी या महाराज।"

पूजाके बरतन आदि उठाये ही थे कि इतनेमें कमरेके बाहर एक साथ बहुतसे ऊँची एड़ीदार जूतोंकी खट-खट आवाज सुनाई दी; और दूसरे ही क्षण अन्नदाने दरवाजेसे झाँककर कहा—" जीजी-भाई, आपकी मौसीजी—"

आगे कहनेकी ज़रूरत नहीं पड़ी; मौसीजी और उनके साथ दो-तीन कम-उमरकी लड़कियाँ कमरेके अन्दर आ दाखिल हुईं। विप्रदास उठके खड़े हो गये और अभ्यर्थनाके स्वरमें बोले—" आइए। "

मौसीने कहा—" नीचे ही मालूम कर लिया था कि विप्रदास बाबूकी तबीयत ठीक है—"

विप्रदासने कहा—" हाँ, मैं अच्छा हूँ। "

आगन्तुक लड़कियाँ बन्दनाको देखकर हदसे ज्यादा विस्मित हुईं; पैरोंमें जूते नहीं, बदनपर ब्लाउज़ नहीं, भींगे बालोंसे रेशमकी सफेद साड़ी भींग रही है, बिखरे हुए काले बालोंका भारी बोझ पीठपर पड़ा हुआ है, दोनों हाथोंमें पूजाके बरतन-आसन आदि हैं,—उसकी यह मूर्ति उन लोगोंके लिए अदृष्टपूर्व और अपरिचित ही नहीं, बल्कि अचिन्तनीय और अकल्पनीय भी है। बन्दनाने कहा—" आप लोग दरवाजा छोड़कर ज़रा हटके खड़ी हो जायँ, मैं इन्हें रख आऊँ। "

एक लड़कीने कहा—" छू जाओगी इसलिए क्या ? "

" हाँ। "—कहकर बन्दना बाहर चली गई।

क्षण-भर बाद उसी वेशमें वह लौट आई और विप्रदासकी कुरसीके पास सटके खड़ी हो गई। मौसीने कहा—" हम लोगोंको बगैर कहे-सुने तुम चली आई इसके लिए मैं नाराज़ नहीं होती, पर आज तुम्हारी बहनका ब्याह है—तुम्हें चलना पड़ेगा। "

दोनों लड़कियोंने कहा—" हम पकड़के ले जानेके लिए आई हैं। "

बन्दनाने कहा—" नहीं मौसीजी, मेरा जाना न हो सकेगा। "

" यह कैसी बात है बन्दना ! नहीं चलनेसे प्रकृतिको कितना दुःख होगा जानती हो ? "

" जानती हूँ, फिर भी मैं न जा सकूँगी। "

सुनकर मौसी विस्मय और क्षोभसे अधीर हो उठीं, बोलीं—" मगर इसी ब्याहके लिए ही तुम बम्बई जानेसे रुकी हो,—इसीलिए तुम्हारे पिता मेरे पास तुम्हें छोड़ गये हैं। वे सुनेंगे तो क्या कहेंगे बताओ ? "

पूजाके बरतन आदि उठाये ही थे कि इतनेमें कमरेके बाहर एक साथ बहुतसे ऊँची एड़ीदार जूतोंकी खट-खट आवाज सुनाई दी; और दूसरे ही क्षण अन्नदाने दरवाजेसे झाँककर कहा—" जीजी-भाई, आपकी मौसीजी—"

आगे कहनेकी ज़रूरत नहीं पड़ी; मौसीजी और उनके साथ दो-तीन कम-उमरकी लड़कियाँ कमरेके अन्दर आ दाखिल हुईं। विप्रदास उठके खड़े हो गये और अभ्यर्थनाके स्वरमें बोले—" आइए। "

मौसीने कहा—" नीचे ही मालूम कर लिया था कि विप्रदास बाबूकी तबीयत ठीक है—"

विप्रदासने कहा—" हाँ, मैं अच्छा हूँ। "

आगन्तुक लड़कियाँ बन्दनाको देखकर हदसे ज्यादा विस्मित हुईं; पैरोंमें जूते नहीं, बदनपर ब्लाउज़ नहीं, भींगे बालोंसे रेशमकी सफेद साड़ी भींग रही है, बिखरे हुए काले बालोंका भारी बोझ पीठपर पड़ा हुआ है, दोनों हाथोंमें पूजाके बरतन-आसन आदि हैं,—उसकी यह मूर्ति उन लोगोंके लिए अदृष्टपूर्व और अपरिचित ही नहीं, बल्कि अचिन्तनीय और अकल्पनीय भी है। बन्दनाने कहा—" आप लोग दरवाजा छोड़कर ज़रा हटके खड़ी हो जायँ, मैं इन्हें रख आऊँ। "

एक लड़कीने कहा—" छू जाओगी इसलिए क्या ? "

" हाँ। "—कहकर बन्दना बाहर चली गई।

क्षण-भर बाद उसी वेशमें वह लौट आई और विप्रदासकी कुरसीके पास सटके खड़ी हो गई। मौसीने कहा—" हम लोगोंको बगैर कहे-सुने तुम चली आई इसके लिए मैं नाराज़ नहीं होती, पर आज तुम्हारी बहनका ब्याह है—तुम्हें चलना पड़ेगा। "

दोनों लड़कियोंने कहा—" हम पकड़के ले जानेके लिए आई हैं। "

बन्दनाने कहा—" नहीं मौसीजी, मेरा जाना न हो सकेगा। "

" यह कैसी बात है बन्दना ! नहीं चलनेसे प्रकृतिको कितना दुःख होगा जानती हो ? "

" जानती हूँ, फिर भी मैं न जा सकूँगी। "

सुनकर मौसी विस्मय और क्षोभसे अधीर हो उठीं, बोलीं—" मगर इसी ब्याहके लिए ही तुम बम्बई जानेसे रुकी हो,—इसीलिए तुम्हारे पिता मेरे पास तुम्हें छोड़ गये हैं। वे सुनेंगे तो क्या कहेंगे बताओ ? "

असावधानी हुई नहीं कि वे गोड़-मूँड़-मरोड़कर अपनेमें खींच लेंगे। देखनेमें वे सब अच्छे न लग रहे हों सो बात नहीं, फिर भी मनमें यही आता था कि यहाँसे निकल भागूँ तो जान बचे!—पर अब देर नहीं करनी चाहिए, आपका पथ्य ले आऊँ।"—कहती हुई वह बाहर जाने लगी तो देखा कि दरवाजेके सामने पैरोंकी धूल और जूतोंके दाग बने हुए हैं। वह ठिठककर खड़ी हो गई, बोली—"पथ्य लानेमें विघ्न आ गया मुखर्जी साहब, ज़रा सब्र करना होगा। नौकरसे पहले इस जगहको धुलवा-पुछवा लूँ।"—इतना कहकर वह जा ही रही थी कि विप्रदासने विस्मयके साथ पूछा—"इतनी कसर-नुक्सकी बातें तुमने सीखीं किससे बन्दना?"

सुनकर बन्दना खुद भी अचंभेमें आगई, बोली—"किसने सिखाया मुझे याद नहीं मुखर्जी साहब।" और फिर ज़रा चुप रहकर कहने लगी—"शायद किसीने सिखाया नहीं। अपने-आप ही मुझे ऐस लगता है कि ये सब बातें आपकी सेवा करनेके लिए अपरिहार्य हैं और न करनेसे त्रुटि होगी।"—इतना कहकर वह चली गई।

× × ×

शाम होनेके पहले, तीसरे पहर बन्दना अपने अभ्यासके अनुसार यथोचित साज-पोशाक पहनकर विप्रदासके कमरेके खुले हुए दरवाजेके सामने आ खड़ी हुई और बोली—"मुखर्जी साहब, मैं जा रही हूँ बहनका ब्याह देखने। मौसीजीने पीछा नहीं छोड़ा, इससे जाना पड़ रहा है?"

विप्रदासने कहा—"आशीर्वाद देता हूँ कि तुम भी बहुत जल्द उन लोगोंसे इस अत्याचारका बदला ले सको और अपनी मौसीको पंजाबसे घसीटकर बम्बई खींच ले जाओ।"

"मौसीपर मुझे इतना गुस्सा नहीं है, पर आपको ज़रूर घसीटके ले जाऊँगी। डरनेकी कोई बात नहीं, रेल-किराया हम ही लोग देंगे, आपका नहीं खर्च करायेंगे।"—कहती हुई बन्दना हँस दी और बोली—"लौटनेमें मुझे ज्यादा रात हो जायगी लेकिन, सब इन्तजाम करके जाती हूँ, ज़रा भी गड़बड़ की तो आकर गुस्सा होऊँगी।"

"सो क्यों न होगी। न होनेसे सबको आश्चर्य होगा। सोचेंगे, तबीयत ठीक नहीं है, ब्याह-शादीमें जाकर ज्यादा खा जानेसे शायद बीमार हो गई हैं।"

असावधानी हुई नहीं कि वे गोड़-मूँड़-मरोड़कर अपनेमें खींच लेंगे। देखनेमें वे सब अच्छे न लग रहे हों सो बात नहीं, फिर भी मनमें यही आता था कि यहाँसे निकल भागूँ तो जान बचे!—पर अब देर नहीं करनी चाहिए, आपका पथ्य ले आऊँ।"—कहती हुई वह बाहर जाने लगी तो देखा कि दरवाजेके सामने पैरोंकी धूल और जूतोंके दाग बने हुए हैं। वह ठिठककर खड़ी हो गई, बोली—"पथ्य लानेमें विघ्न आ गया मुखर्जी साहब, ज़रा सब्र करना होगा। नौकरसे पहले इस जगहको धुलवा-पुछवा लूँ।"—इतना कहकर वह जा ही रही थी कि विप्रदासने विस्मयके साथ पूछा—"इतनी कसर-नुक्सकी बातें तुमने सीखीं किससे वन्दना?"

सुनकर वन्दना खुद भी अचंभेमें आगई, बोली—"किसने सिखाया मुझे याद नहीं मुखर्जी साहब।" और फिर ज़रा चुप रहकर कहने लगी—"शायद किसीने सिखाया नहीं। अपने-आप ही मुझे ऐसा लगता है कि ये सब बातें आपकी सेवा करनेके लिए अपरिहार्य हैं और न करनेसे त्रुटि होगी।"—इतना कहकर वह चली गई।

× × ×

शाम होनेके पहले, तीसरे पहर वन्दना अपने अभ्यासके अनुसार यथोचित साज-पोशाक पहनकर विप्रदासके कमरेके खुले हुए दरवाजेके सामने आ खड़ी हुई और बोली—"मुखर्जी साहब, मैं जा रही हूँ बहनका ब्याह देखने। मौसीजीने पीछा नहीं छोड़ा, इससे जाना पड़ रहा है?"

विप्रदासने कहा—"आशीर्वाद देता हूँ कि तुम भी बहुत जल्द उन लोगोंसे इस अत्याचारका बदला ले सको और अपनी मौसीको पंजाबसे घसीटकर बम्बई खींच ले जाओ।"

"मौसीपर मुझे इतना गुस्सा नहीं है, पर आपको ज़रूर घसीटके ले जाऊँगी। डरनेकी कोई बात नहीं, रेल-किराया हम ही लोग देंगे, आपका नहीं खर्च करायेंगे।"—कहती हुई वन्दना हँस दी और बोली—"लौटनेमें मुझे ज्यादा रात हो जायगी लेकिन, सब इन्तजाम करके जाती हूँ, ज़रा भी गड़बड़ की तो आकर गुस्सा होऊँगी।"

"सो क्यों न होगी। न होनेसे सबको आश्चर्य होगा। सोचेंगे, तबीयत ठीक नहीं है, ब्याह-शादीमें जाकर ज्यादा खा जानेसे शायद बीमार हो गई हैं।"

दूसरे दिन भेंट होनेपर विप्रदासने पूछा—"बहनका ब्याह निर्विघ्न सम्पन्न हो गया ?"

"हाँ, हो गया,—कोई विघ्न नहीं आया।"

"अपनी ही जिद कायम रखी, मौसीका अनुरोध नहीं माना ? कितनी रात बीते लौटी थीं ?

"तब करीब तीन बजे होंगे। मौसीकी बात नहीं रखी जा सकी, रात ही को लौटना पड़ा।"—फिर ज़रा रुककर शायद विचारकर देखनेके बाद कि कहना उचित होगा या नहीं, कहा—"सिर्फ़ कुछ ही घंटे रही थी, पर काम बहुत कर आई हूँ। एक सालमें जो न कर पाई थी, पाँच-सात मिनटोंमें ही उतना कर गुजरी। सुधीरके साथ खातमा कर आई हूँ।"

विप्रदासको आश्चर्य हुआ, बोला—"कहती क्या हो !"

"हाँ, ठीक ही कह रही हूँ। पर उसे मँझधारमें नहीं डुबो आई हूँ। कल सवेरे जिस लड़कीको आपने देखा था उसका नाम है हेम,—हेमनलिनी राय। उसीके जिम्मे सुधीरको सौंप आई हूँ। फिर मुझे उसी बम्बईकी मिलका खयाल उठ आता है, ठीक उसीके समान उन लोगोंके यहाँ प्रेम-प्रीतिके ताने-बानेमें देखते-देखते आदमीका भविष्य बनने लगता है और फिर टूट भी जाता है।"

विप्रदासने पहलेकी भाँति विस्मयके साथ ही पूछा—"बात क्या हुई ? सुधीरके साथ अचानक खातमा कर आनेके मानी ?"

वन्दनाने कहा—"खातमा करनेके मानी खातमा करना, और वहाँ 'अचानक' नामकी भी कोई चीज़ नहीं। उन लोगोंके यहाँका ताल असंभव द्रुत होता है, इसीसे बाहरसे 'अचानक'का भ्रम हो जाता है, पर असलमें ऐसी बात है नहीं। सुधीरने मुझे बुझे बुलाकर कहा कि 'तुमने बहुत अनुचित किया है', मैंने कहा, 'क्या अनुचित किया, सुनूँ भी तो ?' उसने कहा, 'किसीसे बगैर कहे-सुने यानी उसे बगैर बताये—अचानक यहाँ चला आना अत्यन्त गर्हित कार्य हुआ है। खासकर, जब कि यहाँ विप्रदास बाबूके सिवा और कोई है नहीं।' मैंने कहा, 'वहाँ अन्नदा-दीदी हैं'। सुधीरने कहा, 'पर वह दासीके सिवा और कुछ नहीं।' मैंने कहा, 'वहाँ उसे सब दीदी कहके पुकारते हैं।' सुनकर वही हेमनलिनी मुँह बिचकाकर ओठों-ही-ओठोंमें हँसती हुई बीचमें ही बोल उठी—'गँवई-गाँवमें इस तरह पुकारनेका रवाज है।

दूसरे दिन भेंट होनेपर विप्रदासने पूछा—" बहनका ब्याह निर्विघ्न सम्पन्न हो गया ? "

" हाँ, हो गया,—कोई विघ्न नहीं आया। "

" अपनी ही जिद कायम रखी, मौसीका अनुरोध नहीं माना ? कितनी रात बीते लौटी थीं ?

" तब क़रीब तीन बजे होंगे। मौसीकी बात नहीं रखी जा सकी, रात ही को लौटना पड़ा। "—फिर ज़रा रुककर शायद विचारकर देखनेके बाद कि कहना उचित होगा या नहीं, कहा—" सिर्फ़ कुछ ही घंटे रही थी, पर काम बहुत कर आई हूँ। एक सालमें जो न कर पाई थी, पाँच-सात मिनटोंमें ही उतना कर गुजरी। सुधीरके साथ खातमा कर आई हूँ। "

विप्रदासको आश्चर्य हुआ, बोला—" कहती क्या हो ! "

" हाँ, ठीक ही कह रही हूँ। पर उसे मँझधारमें नहीं डुबो आई हूँ। कल सबेरे जिस लड़कीको आपने देखा था उसका नाम है हेम,—हेमनलिनी राय। उसीके जिम्मे सुधीरको सौंप आई हूँ। फिर मुझे उसी बम्बईकी मिल्का खयाल उठ आता है, ठीक उसीके समान उन लोगोंके यहाँ प्रेम-प्रीतिके ताने-बानेमें देखते-देखते आदमीका भविष्य बनने लगता है और फिर टूट भी जाता है। "

विप्रदासने पहलेकी भाँति विस्मयके साथ ही पूछा—" बात क्या हुई ? सुधीरके साथ अचानक खातमा कर आनेके मानी ? "

वन्दनाने कहा—" खातमा करनेके मानी खातमा करना, और वहाँ 'अचानक' नामकी भी कोई चीज़ नहीं। उन लोगोंके यहाँका ताल असंभव द्रुत होता है, इसीसे बाहरसे 'अचानक'का भ्रम हो जाता है, पर असलमें ऐसी बात है नहीं। सुधीरने मुझे बुझे बुलाकर कहा कि 'तुमने बहुत अनुचित किया है', मैंने कहा, 'क्या अनुचित किया, सुनूँ भी तो ?' उसने कहा, 'किसीसे बग़ैर कहे-सुने यानी उसे बगैर जताये—अचानक यहाँ चला आना अत्यन्त गर्हित कार्य हुआ है। खासकर, जब कि यहाँ विप्रदास बाबूके सिवा और कोई है नहीं।' मैंने कहा, 'वहाँ अन्नदा-दीदी हैं'। सुधीरने कहा, 'पर वह दासीके सिवा और कुछ नहीं।' मैंने कहा, 'वहाँ उसे सब दीदी कहके पुकारते हैं।' सुनकर वही हेमनलिनी मुँह बिचकाकर ओठों-ही-ओठोंमें हँसती हुई बीचमें ही बोल उठी—'गँवई-गाँवमें इस तरह पुकारनेका रवाज है।

वन्दना विप्रदासको चुप देख फिर कहने लगी—" सुधीर मुझे पहचानता न हो, सो बात नहीं; मेरे साथ आनेकी उसे हिम्मत न पड़ी, जहाँका तहाँ स्तब्ध-सा खड़ा रहा। मैं आकर गाड़ीमें बैठ गई।"

विप्रदासने मुसकराते हुए कहा—" इसके मानी क्या खातमा कर आना है वन्दना? ज़रा-सा कलह हुआ समझो। इसमें अगर सन्देह हो तो मुलाकात होनेपर अपनी जीजीसे पूछ देखना।"

वन्दना हँसी नहीं, गम्भीर होकर कहने लगी—" किसीसे पूछने-ताछनेकी ज़रूरत नहीं मुखर्जी साहब। मैं जानती हूँ, हम लोगोंका सम्बन्ध खतम हो चुका, अब नहीं लौटनेका।"

उसके मुँहकी ओर देखकर विप्रदास हतबुद्धि-सा हो गया, बोला—" कह क्या रही हो वन्दना, इतनी बड़ी चीज़ क्या इतनी आसानीसे इतनी छोटी-सी बातसे खतम हो सकती है? सुधीरके सदमेकी बात ही ज़रा सोच देखो।"

वन्दनाने कहा—" सोच देखी है मुखर्जी साहब। इस सदमेको सम्हाल लेनेमें सुधीरको ज्यादा दिन नहीं लगेंगे; मैं जानती हूँ, वह हेम-नलिनी ही उसे रास्ता बता देगी। मैं तो अपनी बात सोच रही थी। सिर्फ़ गाड़ीमें बैठी-बैठी ही नहीं सोचती रही, आकर बिस्तरपर लेटी तब भी सोचती रही, रात-भर नींद ही नहीं आई। अशान्ति ज़रूर रही, पर कष्ट मुझे नहीं हुआ।"

" कष्ट होगा गुस्सा दूर होनेपर। तब फिर सुधीरके लिए ही राह देखा करोगी।"—यह कहकर विप्रदास हँस दिया।

इस हँसीमें भी वन्दना शरीक नहीं हुई। शान्त भावसे बोली—" गुस्सा मुझे नहीं है। सिर्फ़ अनुताप होता है कि चले आते वक्त अगर कठोर बात मेरे मुँहसे न निकलती तो ठीक था। मैं दिखा आई हूँ कि दोष मानो उसीका है, जता आई हूँ कि मानो मैं मर्माहत होकर विदा हो रही हूँ। मगर सत्य तो यह नहीं है;—इस असत्य आचरणके लिए ही सिर्फ़ लज्जा अनुभव कर रही हूँ मुखर्जी साहब, और कोई बात नहीं।" बातचीतके अन्तमें उसकी आँखें मानो भर आईं।

विप्रदासके मनका विस्मय कई-गुना बढ़ गया, अब वह समझ गया कि यह छल नहीं है। बोला—" सुधीरको क्या सचमुच ही तुम अब नहीं चाहतीं?"

" नहीं।"

" अब तक तो चाहती थीं? इतनी आसानीसे वह प्रेम जाता कैसे रहा?"

बन्दना विप्रदासको चुप देख फिर कहने लगी—"सुधीर मुझे पहचानता न हो, सो बात नहीं; मेरे साथ आनेकी उसे हिम्मत न पड़ी, जहाँका तहाँ स्तब्ध-सा खड़ा रहा। मैं आकर गाड़ीमें बैठ गई।"

विप्रदासने मुसकराते हुए कहा—"इसके मानी क्या खातमा कर आना है वन्दना? ज़रा-सा कलह हुआ समझो। इसमें अगर सन्देह हो तो मुलाकात होनेपर अपनी जीजीसे पूछ देखना।"

वन्दना हँसी नहीं, गम्भीर होकर कहने लगी—"किसीसे पूछने-ताछनेकी ज़रूरत नहीं मुखर्जी साहब। मैं जानती हूँ, हम लोगोंका सम्बन्ध खतम हो चुका, अब नहीं लौटनेका।"

उसके मुँहकी ओर देखकर विप्रदास हतबुद्धि-सा हो गया, बोला—"कह क्या रही हो वन्दना, इतनी बड़ी चीज़ क्या इतनी आसानीसे इतनी छोटी-सी बातसे खतम हो सकती है? सुधीरके सदमेकी बात ही ज़रा सोच देखो।"

वन्दनाने कहा—"सोच देखी है मुखर्जी साहब। इस सदमेको सम्हाल लेनेमें सुधीरको ज्यादा दिन नहीं लगेंगे; मैं जानती हूँ, वह हेम-नलिनी ही उसे रास्ता बता देगी। मैं तो अपनी बात सोच रही थी। सिर्फ़ गाड़ीमें बैठी-बैठी ही नहीं सोचती रही, आकर बिस्तरपर लेटी तब भी सोचती रही, रात-भर नींद ही नहीं आई। अशान्ति ज़रूर रही, पर कष्ट मुझे नहीं हुआ।"

"कष्ट होगा गुस्सा दूर होनेपर। तब फिर सुधीरके लिए ही राह देखा करोगी।"—यह कहकर विप्रदास हँस दिया।

इस हँसीमें भी वन्दना शरीक नहीं हुई। शान्त भावसे बोली—"गुस्सा मुझे नहीं है। सिर्फ़ अनुताप होता है कि चले आते वक्त अगर कठोर बात मेरे मुँहसे न निकलती तो ठीक था। मैं दिखा आई हूँ कि दोष मानो उसीका है, जता आई हूँ कि मानो मैं मर्माहत होकर विदा हो रही हूँ। मगर सत्य तो यह नहीं है;—इस असत्य आचरणके लिए ही सिर्फ़ लज्जा अनुभव कर रही हूँ मुखर्जी साहब, और कोई बात नहीं।" बातचीतके अन्तमें उसकी आँखें मानो भर आईं।

विप्रदासके मनका विस्मय कई-गुना बढ़ गया, अब वह समझ गया कि यह छल नहीं है। बोला—"सुधीरको क्या सचमुच ही तुम अब नहीं चाहतीं?"

"नहीं।"

"अब तक तो चाहती थीं? इतनी आसानीसे वह प्रेम जाता कैसे रहा?"

विप्रदासने कहा—"तुम्हारे मनके अन्दर जो आँधी चल रही है उसकी तेज रफ्तार के साथ मैं चल नहीं सकता वन्दना, इसीसे चुप हूँ।"

वन्दनाने कहा—"नहीं, सो नहीं होगा, इस तरह मैं आपको बचके निकल जाने न दूँगी। जवाब दीजिए ?"

"पर शान्त हुए बिना जवाब देनेसे फायदा क्या ? तुम्हारी आजकी यह अवस्था स्वाभाविक नहीं है, इस बातको तुम समझोगी कैसे ?"

"क्यों न समझूँगी मुखर्जी साहब, बुद्धि तो मेरी नष्ट नहीं हुई ?"

"नष्ट नहीं हुई किन्तु चक्करमें पड़कर धुँधली हो गई है। अभी रहने दो। शामके बाद जब स्थिरतासे बैठोगी तब बात करूँगा। दे सका तो तभी इसका जवाब भी दूँगा।"

"तो यही ठीक है। इस वक्त मुझे भी फुरसत नहीं है।"—कहकर चन्दना वहाँसे चली गई। असलमें देखा जाय तो उसे इतना काम करना था कि जिसकी हद नहीं। सबेरेसे अन्नदा छुट्टी लेकर कालीघाट गई है, उसके करनेका काम भी आज वन्दनाको ही करना है। कितने ही नौकर-चाकर हैं और कितने ही लड़के यहाँ रहकर स्कूल-कॉलेजमें पढ़ते हैं,—उनका न जाने कितना काम है। कामकी भीड़में उसे मालूम ही नहीं हुआ कि वह कल सारी रात सोई ही नहीं है और बहुत थकी हुई है।

× × ×

संध्याके बाद विप्रदास जब रातका खाना खाकर निवृत्त हो चुका तब नीचेका सारा इन्तजाम करके वन्दना उसके पलंगके पास एक कुरसीपर आकर बैठ गई; और बोली—"मुखर्जी साहब, एक बातका सच-सच जवाब देंगे ?"

विप्रदासने कहा—"साधारणतः ऐसा ही तो किया करता हूँ। प्रश्न क्या है ?"

वन्दनाने कहा—"जीजीको आप क्या सचमुच ही प्यार करते हैं ? बचपनमें आप लोगोंका ब्याह हुआ है—बहुत दिनोंकी बात है वह—कभी क्या इसमें अन्यथा नहीं हुआ ?"

विप्रदास दंग रह गया। ऐसी बात भी किसीके मनमें उठ सकती है, इसकी उसे कल्पना भी न थी। परन्तु अपनेको सम्हालकर उसने हँसते हुए कहा—"बल्कि यह प्रश्न तुम अपनी जीजीसे ही करना।"

विप्रदासने कहा—"तुम्हारे मनके अन्दर जो आँधी चल रही है उसकी तेज रफ्तार के साथ मैं चल नहीं सकता वन्दना, इसीसे चुप हूँ।"

वन्दनाने कहा—"नहीं, सो नहीं होगा, इस तरह मैं आपको बचके निकल जाने न दूँगी। जवाब दीजिए ?"

"पर शान्त हुए बिना जवाब देनेसे फायदा क्या ? तुम्हारी आजकी यह अवस्था स्वाभाविक नहीं है, इस बातको तुम समझोगी कैसे ?"

"क्यों न समझूँगी मुखर्जी साहब, बुद्धि तो मेरी नष्ट नहीं हुई ?"

"नष्ट नहीं हुई किन्तु चक्करमें पड़कर धुँधली हो गई है। अभी रहने दो। शामके बाद जब स्थिरतासे बैठोगी तब बात करूँगा। दे सका तो तभी इसका जवाब भी दूँगा।"

"तो यही ठीक है। इस वक्त मुझे भी फुरसत नहीं है।"—कहकर वन्दना वहाँसे चली गई। असलमें देखा जाय तो उसे इतना काम करना था कि जिसकी हद नहीं। सबेरेसे अन्नदा छुट्टी लेकर कालीघाट गई है, उसके करनेका काम भी आज वन्दनाको ही करना है। कितने ही नौकर-चाकर हैं और कितने ही लड़के यहाँ रहकर स्कूल-कॉलेजमें पढ़ते हैं,—उनका न जाने कितना काम है। कामकी भीड़में उसे मालूम ही नहीं हुआ कि वह कल सारी रात सोई ही नहीं है और बहुत थकी हुई है।

× × ×

संध्याके बाद विप्रदास जब रातका खाना खाकर निवृत्त हो चुका तब नीचेका सारा इन्तजाम करके वन्दना उसके पलंगके पास एक कुरसीपर आकर बैठ गई; और बोली—"मुखर्जी साहब, एक बातका सच-सच जवाब देंगे ?"

विप्रदासने कहा—"साधारणतः ऐसा ही तो किया करता हूँ। प्रश्न क्या है ?"

वन्दनाने कहा—"जीजीको आप क्या सचमुच ही प्यार करते हैं ! बचपनमें आप लोगोंका ब्याह हुआ है—बहुत दिनोंकी बात है वह—कभी क्या इसमें अन्यथा नहीं हुआ ?"

विप्रदास दंग रह गया। ऐसी बात भी किसीके मनमें उठ सकती है, इसकी उसे कल्पना भी न थी। परन्तु अपनेको सम्हालकर उसने हँसते हुए कहा—"बल्कि यह प्रश्न तुम अपनी जीजीसे ही करना।"

१९

दूसरे दिन शामको वन्दनाने आकर कहा—" मुखर्जी साहब फिर जा रही हूँ मौसीजीके घर। अबकी वार कुछ घंटोंके लिए नहीं, बल्कि जबतक मौसी मुझे बम्बई रवाना करनेका इन्तजाम नहीं करतीं तबतकके लिए।"

"यानी ?"

"यानी अरजेण्ट टेलिग्राम आया है, पिताजीका हुक्म है। कल ही सुबह मौसी गाड़ी भेजेंगी मुझे लिवानेके लिए।"

विप्रदासने कहा—" यानी समझ लिया जाय कि तुम्हारी मौसीमें बदला लेनेका अध्यवसाय और बुद्धिमत्ता है। यह शायद उन्हींके ज़वाबी तारका जवाब है। कहाँ है देखूं तार ?"

"नहीं, आपको मैं नहीं दिखा सकती।"

सुनकर विप्रदास क्षण-भर स्तब्ध हो रहा, फिर ज़रा मुसकराकर बोला— "भगवान किसीका दर्प कायम नहीं रखते, यह उसीका नमूना है। अबतक धारणा थी कि मुझे किसी बातमें लपेटा नहीं जा सकता, पर अब देखता हूँ लपेटा जा सकता है। कमसे कम ऐसे आदमी भी हैं। तुम्हारी मौसीके दिमागमें ऐसी चाल भी आ गई। दो न ज़रा पढ़ देखूँ कि अभियोग कितना गहरा है।"—कहकर उसने हाथ बढ़ा दिया।

अबकी बार वन्दनाने तार उसके हाथमें दे दिया। राय साहबका लम्बा-चौड़ा तार था,—शुरूसे आखिर तक सब पढ़के उसे वापस देते हुए विप्रदासने कहा—" कुल-जमा तुम्हारे पिताजीने असंगत कुछ भी नहीं लिखा। निःस्वार्थ परोपकारमें आपत्ति आती है, बीमार रिश्तेदारकी तीमारदारी करने आना भी संसारमें आसान काम नहीं है।"

वन्दनाने पूछा—" मुझे क्या आप मौसीके घर ही लौट जानेके लिए कहेंगे ?"

"यही तो तुम्हारे पिताजीकी आज्ञा है वन्दना। यह तो बलरामपुरका मुखर्जियोंका घर नहीं है,—इस मामलेमें हुक्म देनेके मालिक मुखर्जी साहब नहीं हैं,—मौसी हैं—और फिर हुक्म दिलाया है पिताके मारफत, लिहाजा मानना ही पड़ेगा।"

वन्दनाने कहा—" यह तो आपके मामूली वचन हैं। पिताजीको यहाँका हाल कुछ भी नहीं मालूम, फिर भी उनका आदेश है, न्याय-अन्याय कुछ भी

१९

दूसरे दिन शामको वन्दनाने आकर कहा—"मुखर्जी साहब फिर जा रही हूँ मौसीजीके घर। अबकी बार कुछ घंटोंके लिए नहीं, बल्कि जबतक मौसी मुझे बम्बई रवाना करनेका इन्तजाम नहीं करतीं तबतकके लिए।"

"यानी?"

"यानी अरजेण्ट टेलिग्राम आया है, पिताजीका हुक्म है। कल ही सुबह मौसी गाड़ी भेजेंगी मुझे लिवानेके लिए।"

विप्रदासने कहा—"यानी समझ लिया जाय कि तुम्हारी मौसीमें बदला लेनेका अध्यवसाय और बुद्धिमत्ता है। यह शायद उन्हींके ज़वाबी तारका जवाब है। कहाँ है देखू तार?"

"नहीं, आपको मैं नहीं दिखा सकती।"

सुनकर विप्रदास क्षण-भर स्तब्ध हो रहा, फिर ज़रा मुसकराकर बोला—"भगवान किसीका दर्प कायम नहीं रखते, यह उसीका नमूना है। अबतक धारणा थी कि मुझे किसी बातमें लपेटा नहीं जा सकता, पर अब देखता हूँ लपेटा जा सकता है। कमसे कम ऐसे आदमी भी हैं। तुम्हारी मौसीके दिमागमें ऐसी चाल भी आ गई। दो न ज़रा पढ़ देखूँ कि अभियोग कितना गहरा है।"—कहकर उसने हाथ बढ़ा दिया।

अबकी बार वन्दनाने तार उसके हाथमें दे दिया। राय साहबका लम्बा-चौड़ा तार था,—शुरूसे आखिर तक सब पढ़के उसे वापस देते हुए विप्रदासने कहा—"कुल-जमा तुम्हारे पिताजीने असंगत कुछ भी नहीं लिखा। निःस्वार्थ परोपकारमें आपत्ति आती है, बीमार रिश्तेदारकी तीमारदारी करने आना भी संसारमें आसान काम नहीं है।"

वन्दनाने पूछा—"मुझे क्या आप मौसीके घर ही लौट जानेके लिए कहेंगे?"

"यही तो तुम्हारे पिताजीकी आज्ञा है वन्दना। यह तो बलरामपुरका मुखर्जियोंका घर नहीं है,—इस मामलेमें हुक्म देनेके मालिक मुखर्जी साहब नहीं हैं,—मौसी हैं—और फिर हुक्म दिलाया है पिताके मारफत, लिहाजा मानना ही पड़ेगा।"

वन्दनाने कहा—"यह तो आपके मामूली वचन हैं। पिताजीको यहाँका हाल कुछ भी नहीं मालूम, फिर भी उनका आदेश है, न्याय-अन्याय कुछ भी

" मेरे जैसा होगा ? "

वन्दना हँस दी, बोली—" यह आपकी अहंकारकी बात हुई। मनमें खूब अच्छी तरह समझते हैं कि इतना रूप दुनियामें और किसीके नहीं है। मगर ऐसी तुलना करने बैठेंगे तो संसारकी सब लड़कियोंको क्वाँरी रह जाना पड़ेगा मुखर्जी साहब। सिर्फ़ आपकी तरफ देख-देखकर ही उन्हें अपने दिन काटने पड़ेंगे। फिर भी कहूँगी कि देखनेमें अशोक अच्छा ही है, दोष-त्रुटियाँ ढूँढ़ना कमसे कम मेरे लिए तो न सोहेगा। "

" तो पसन्द है यों कहो। "

" अगर हुआ भी हो तो उस पसन्दको कोई दोष नहीं दे सकेगा, इतना कह सकती हूँ। "—इतना कहकर वन्दना उठके खड़ी हो गई, बोली—" पाँच बज रहे हैं, आपका बार्ली पीनेका समय हो गया—जाऊँ ले आऊँ। इस बीचमें अशोककी बात और भी ज़रा सोच रखिए। "—कहके वह चली गई। पाँच एक मिनट बाद वह वापस आई; उसके हाथमें चाँदीके कटोरेमें बार्ली थी—बरफके अन्दर रखके ठंडी की हुई—उसमें नीबू निचोड़ती हुई वह बोली—" यह सबकी सब पी लेनी होगी, छोड़ देनेसे काम न चलेगा। सेवाकी त्रुटि दिखाकर कोई मुझसे कैफ़ियत माँगे, सो मैं नहीं होने दूँगी। "

विप्रदासने कहा—" जुल्म करनेकी विद्या तुमने सोलहों आने सीख ली है, किसीके सामने दबना नहीं पड़ेगा तुम्हें, इतना तो मैं कह सकता हूँ। "

बन्दनाने कहा—" नहीं। कोई पूछेगा तो कह दूँगी, मुखर्जी साहबपर हाथ चलाकर पक्की हो गई हूँ। "

× × × ×

बार्ली पी चुकनेके बाद जूठा कटोरा हाथमें लिये वन्दना चली जा रही थी, जाते-जाते मुड़कर खड़ी होगई, बोली—" मेरी एक बातका जवाब देंगे मुखर्जी साहब ? "

" कौनसी बातका वन्दना ? "

" संसारमें सबसे ज्यादा आपको कौन प्यार करता है, बता सकते हैं ? "

" बता सकता हूँ। "

" बताइए तो क्या नाम है उसका। "

" उसका नाम है वन्दना देवी। "

" मेरे जैसा होगा ? "

वन्दना हँस दी, बोली—" यह आपकी अहंकारकी बात हुई। मनमें खूब अच्छी तरह समझते हैं कि इतना रूप दुनियामें और किसीके नहीं है। मगर ऐसी तुलना करने बैठेंगे तो संसारकी सब लड़कियोंको क्वाँरी रह जाना पड़ेगा मुखर्जी साहब। सिर्फ़ आपकी तरफ़ देख-देखकर ही उन्हें अपने दिन काटने पड़ेंगे। फिर भी कहूँगी कि देखनेमें अशोक अच्छा ही है, दोष-त्रुटियाँ ढूँढ़ना कमसे कम मेरे लिए तो न सोहेगा। "

" तो पसन्द है यों कहो। "

" अगर हुआ भी हो तो उस पसन्दको कोई दोष नहीं दे सकेगा, इतना कह सकती हूँ। "—इतना कहकर वन्दना उठके खड़ी हो गई, बोली—" पाँच बज रहे हैं, आपका बार्ली पीनेका समय हो गया—जाऊँ ले आऊँ। इस बीचमें अशोककी बात और भी ज़रा सोच रखिए। "—कहके वह चली गई। पाँच एक मिनट बाद वह वापस आई; उसके हाथमें चाँदीके कटोरेमें बार्ली थी—बरफके अन्दर रखके ठंडी की हुई—उसमें नीबू निचोड़ती हुई वह बोली—" यह सबकी सब पी लेनी होगी, छोड़ देनेसे काम न चलेगा। सेवाकी त्रुटि दिखाकर कोई मुझसे कैफियत माँगे, सो मैं नहीं होने दूँगी। "

विप्रदासने कहा—" जुल्म करनेकी विद्या तुमने सोलहों आने सीख ली है, किसीके सामने दबना नहीं पड़ेगा तुम्हें, इतना तो मैं कह सकता हूँ। "

वन्दनाने कहा—" नहीं। कोई पूछेगा तो कह दूँगी, मुखर्जी साहबपर हाथ चलाकर पक्की हो गई हूँ। "

× × × ×

बार्ली पी चुकनेके बाद जूठा कटोरा हाथमें लिये वन्दना चली जा रही थी, जाते-जाते मुड़कर खड़ी होगई, बोली—" मेरी एक बातका जवाब देंगे मुखर्जी साहब ? "

" कौनसी बातका वन्दना ? "

" संसारमें सबसे ज्यादा आपको कौन प्यार करता है, बता सकते हैं ? "

" बता सकता हूँ। "

" बताइए तो क्या नाम है उसका। "

" उसका नाम है वन्दना देवी। "

वन्दनाका चेहरा एक क्षणमें म्लान हो उठा, वह अत्यन्त व्यथित कंठसे बोली—"सुधीरके साथ तुलना न कीजिए मुखर्जी साहब, यह मुझसे न सहा जायगा। पर इससे संसारमें अनर्थोंका सूत्रपात हो सकता है, यह बात आपकी मानूँगी। मानूँगी कि यह अमंगलको खींच लाता है, पर इसीलिए इसे झूठ नहीं मानूँगी। झूठ ही अगर होता तो ज़रा-सा भी प्यार क्या आपका पा सकती थी? नहीं पाया क्या मैंने?"

साँस रोके हुए विप्रदास उसकी बातें सुन रहा था, बात खतम होते ही ज्यों ही वन्दनाने मुँह उठाकर विप्रदासकी तरफ देखा त्यों ही वह चौंक पड़ा और बोला—"पाया क्यों नहीं बन्दना, तुमने बहुत-सा पाया है। नहीं तो तुम्हारे हाथका मैं खाता कैसे? तुम्हारी रात-दिनकी सेवा मैं किस ज़ोरसे ले सकता था? मगर इससे क्या मैं ग्लानिमें या अधर्ममें उतर आ सकता हूँ, या तुम्हें उतार ला सकता हूँ? जो लोग मेरी तरफ देखकर हमेशासे विश्वासके बलपर सिर ऊँचा किये हुए हैं, सब-कुछ तोड़-फोड़कर क्या मैं उन्हें नीचा कर दूँगा? क्या तुम यही कहना चाहती हो?"

बन्दनाने दृप्त स्वरमें कहा—"तो आप भी स्वीकार कीजिए कि आज जिसे आप छोड़ नहीं सकते वह है आपका दम्भ। बताइए सच-सच, उन लोगोंकी दृष्टिमें बड़ा बनके रहनेके मोहको ही आपने बड़ा मान लिया है। नहीं तो और किस बातकी ग्लानि है मुखर्जी साहब,—किसे हम अधर्म मानें? मनुष्यकी मनगढ़न्त एक व्यवस्थाको—मनुष्यने ही बार-बार जिसे माना है और बार-बार तोड़ा है—उसीको? आप भले ही मान लें, पर मैं नहीं मान सकूँगी।"

विप्रदास गम्भीर हो उठा, बोला—"तुम्हारे न माननेपर भी मैं मान सकूँगा और मानूँगा, उसीसे मेरा काम चल जायगा। अँग्रेजी किताबें तुमने बहुत-सी पढ़ी हैं बन्दना, मौसीके घर आलोचनाएँ भी बहुत सुनी होंगी, उन सबको भूलनेमें समय लगेगा मालूम होता है।"

बन्दनाने कहा—"आप मेरा मज़ाक कर रहे हैं, लेकिन मैं ज़रा भी मज़ाक नहीं कर रही मुखर्जी साहब, जो भी कुछ कहा है, मैंने सब सत्य कहा है।"

"सो तो समझ गया; पर इस पागलपनको मगजमें भर किसने दिया?"

"आपने।"

"कहती क्या हो? यह अधर्म-बुद्धि आखिर दी खुद मैंने ही तुमको?"

वन्दनाका चेहरा एक क्षणमें म्लान हो उठा, वह अत्यन्त व्यथित कंठसे बोली—" सुधीरके साथ तुलना न कीजिए मुखर्जी साहब, यह मुझसे न सहा जायगा। पर इससे संसारमें अनर्थोंका सूत्रपात हो सकता है, यह बात आपकी मानूँगी। मानूँगी कि यह अमंगलको खींच लाता है, पर इसीलिए इसे झूठ नहीं मानूँगी। झूठ ही अगर होता तो ज़रा-सा भी प्यार क्या आपका पा सकती थी? नहीं पाया क्या मैंने?"

साँस रोके हुए विप्रदास उसकी बातें सुन रहा था, बात खतम होते ही ज्यों ही वन्दनाने मुँह उठाकर विप्रदासकी तरफ देखा त्यों ही वह चौंक पड़ा और बोला—" पाया क्यों नहीं वन्दना, तुमने बहुत-सा पाया है। नहीं तो तुम्हारे हाथका मैं खाता कैसे? तुम्हारी रात-दिनकी सेवा मैं किस ज़ोरसे ले सकता था? मगर इससे क्या मैं ग्लानिमें या अधर्ममें उतर आ सकता हूँ, या तुम्हें उतार ला सकता हूँ? जो लोग मेरी तरफ देखकर हमेशासे विश्वासके बलपर सिर ऊँचा किये हुए हैं, सब-कुछ तोड़-फोड़कर क्या मैं उन्हें नीचा कर दूँगा? क्या तुम यही कहना चाहती हो?"

वन्दनाने दृप्त स्वरमें कहा—" तो आप भी स्वीकार कीजिए कि आज जिसे आप छोड़ नहीं सकते वह है आपका दम्भ। बताइए सच-सच, उन लोगोंकी दृष्टिमें बड़ा बनके रहनेके मोहको ही आपने बड़ा मान लिया है। नहीं तो और किस बातकी ग्लानि है मुखर्जी साहब,—किसे हम अधर्म मानें? मनुष्यकी मनगढ़न्त एक व्यवस्थाको—मनुष्यने ही बार-बार जिसे माना है और बार-बार तोड़ा है—उसीको? आप भले ही मान लें, पर मैं नहीं मान सकूँगी।"

विप्रदास गम्भीर हो उठा, बोला—" तुम्हारे न माननेपर भी मैं मान सकूँगा और मानूँगा, उसीसे मेरा काम चल जायगा। अँग्रेजी किताबें तुमने बहुत-सी पढ़ी हैं वन्दना, मौसीके घर आलोचनाएँ भी बहुत सुनी होंगी, उन सबको भूलनेमें समय लगेगा मालूम होता है।"

वन्दनाने कहा—" आप मेरा मज़ाक कर रहे हैं, लेकिन मैं ज़रा भी मज़ाक नहीं कर रही मुखर्जी साहब, जो भी कुछ कहा है, मैंने सब सत्य कहा है।"

" सो तो समझ गया; पर इस पागलपनको मगज़में भर किसने दिया?"

" आपने।"

" कहती क्या हो? यह अधर्म-बुद्धि आखिर दी खुद मैंने ही तुमको?"

हो गया, तब आना ज़रूर लेकिन; अभिमानसे मुँह मत मोड़ लेना।"

बन्दनाने फिर अपने आँसू पोंछते हुए कहा—"मेरी एक भीख लेनी रही आपसे मुखर्जी साहब, मेरी बात आप किसीसे कहें नहीं।"

"नहीं, नहीं कहूँगा। मेरा कोई ऐसा आदमी ही नहीं, जिसे मैं मनकी बात बताऊँ, यह तो तुम जान ही चुकी हो।"

"हाँ, जान चुकी हूँ।"

इसके बाद दोनों कुछ देर चुप रहे। फिर विप्रदासने कहा—"इस विशाल जगतमें मैं इतना ज्यादा अकेला हूँ, यह बात तुमने कैसे समझी थी बन्दना?"

बन्दनाने कहा—"क्या मालूम कैसे समझी थी! आपके घरसे नाराज़ होकर चली आई तब आप आये थे साथ। गाड़ीमें उन मतवाले साहबोंकी बात याद है? ऐसी कुछ खास बात नहीं थी—फिर भी उस वक्त मालूम हुआ कि जिन्हें हम लोग अपने चारों तरफ देखा करते हैं उनमेंके आप नहीं हैं, अकेले कोई भार अपने सिर लादनेमें आपको दुविधा नहीं होती। यही बात कही थी उस दिन द्विजू बाबूने,—मैंने मिला-मिलकर देखा कि आप किसीसे भी कोई प्रत्याशा नहीं करते। रातको बिस्तरपर पड़े-पड़े आपका ही ख़याल आता रहा—किसी भी तरह नींद ही नहीं आई। आख़िरी रातमें उठी तो देखा कि नीचे पूजा-घरमें बत्ती जल रही है, आप बैठे हुए हैं ध्यानमें। एकटक देखते-देखते भोर हो गया। कहीं नौकर-चाकर न देख लें, इस डरसे अपने कमरेमें भाग आई। आपकी उस मूर्तिको फिर भूल ही न सकी मुखर्जी साहब, आँखें मींचते ही मुझे दिखाई देने लगती है।"

विप्रदासने हँसते हुए कहा—"देखा था क्या मुझे पूजा करते हुए?"

बन्दनाने कहा—"पूजा करते हुए तो आपकी माको भी देखा है, पर वह यह नहीं। वह अलग चीज़ है। आप किसका ध्यान करते हैं मुखर्जी साहब?"

विप्रदासने फिर हँसते हुए जवाब दिया—"यह जानकर तुम क्या करोगी? तुम तो करोगी नहीं।"

"नहीं, करूँगी तो नहीं; फिर भी जाननेकी इच्छा होती है।"

विप्रदास चुप रहा। बन्दना कहने लगी—"मुझे उस दिन पहले-पहल यह मालूम हुआ कि सबके बीच रहते हुए भी आप अलग हैं, अकेले हैं। जहाँ चढ़नेपर आपका साथी बना जा सकता है उतनी ऊँचाईपर ये लोग कोई भी नहीं चढ़ सकते। और एक बात पूछूँगी मुखर्जी साहब, बतायेंगे?"

हो गया, तब आना ज़रूर लेकिन; अभिमानसे मुँह मत मोड़ लेना।"

बन्दनाने फिर अपने आँसू पोंछते हुए कहा—"मेरी एक भीख लेनी रही आपसे मुखर्जी साहब, मेरी बात आप किसीसे कहें नहीं।"

"नहीं, नहीं कहूँगा। मेरा कोई ऐसा आदमी ही नहीं, जिसे मैं मनकी बात बताऊँ, यह तो तुम जान ही चुकी हो।"

"हाँ, जान चुकी हूँ।"

इसके बाद दोनों कुछ देर चुप रहे। फिर विप्रदासने कहा—"इस विशाल जगतमें मैं इतना ज्यादा अकेला हूँ, यह बात तुमने कैसे समझी थी बन्दना?"

बन्दनाने कहा—"क्या मालूम कैसे समझी थी! आपके घरसे नाराज़ होकर चली आई तब आप आये थे साथ। गाड़ीमें उन मतवाले साहबोंकी बात याद है? ऐसी कुछ खास बात नहीं थी—फिर भी उस वक्त मालूम हुआ कि जिन्हें हम लोग अपने चारों तरफ देखा करते हैं उनमेंके आप नहीं हैं, अकेले कोई भार अपने सिर लादनेमें आपको दुविधा नहीं होती। यही बात कही थी उस दिन द्विजू बाबूने,—मैंने मिला-मिलकर देखा कि आप किसीसे भी कोई प्रत्याशा नहीं करते। रातको बिस्तरपर पड़े-पड़े आपका ही ख़याल आता रहा—किसी भी तरह नींद ही नहीं आई। आख़िरी रातमें उठी तो देखा कि नीचे पूजा-घरमें बत्ती जल रही है, आप बैठे हुए हैं ध्यानमें। एकटक देखते-देखते भोर हो गया। कहीं नौकर-चाकर न देख लें, इस डरसे अपने कमरेमें भाग आई। आपकी उस मूर्तिको फिर भूल ही न सकी मुखर्जी साहब, आँखें मींचते ही मुझे दिखाई देने लगती है।"

विप्रदासने हँसते हुए कहा—"देखा था क्या मुझे पूजा करते हुए?"

बन्दनाने कहा—"पूजा करते हुए तो आपकी माको भी देखा है, पर वह यह नहीं। वह अलग चीज़ है। आप किसका ध्यान करते हैं मुखर्जी साहब?"

विप्रदासने फिर हँसते हुए जवाब दिया—"यह जानकर तुम क्या करोगी? तुम तो करोगी नहीं।"

"नहीं, करूँगी तो नहीं; फिर भी जाननेकी इच्छा होती है।"

विप्रदास चुप रहा। बन्दना कहने लगी—"मुझे उस दिन पहले-पहल यह मालूम हुआ कि सबके बीच रहते हुए भी आप अलग हैं, अकेले हैं। जहाँ चढ़नेपर आपका साथी बना जा सकता है उतनी ऊँचाईपर ये लोग कोई भी नहीं चढ़ सकते। और एक बात पूछूँगी मुखर्जी साहब, बतायेंगे?"

पोट हो गई। विप्रदास जमींदार और दुनियवी आदमी हैं, कंजूस हैं—सिवा एक माके, इस बदनामीके प्रचार करनेका मौका मिल जाय तो कोई रिआयत नहीं करता। विप्रदास भी इस हँसीमें शामिल होता हुआ, बोला—" लेकिन तेरी पारी है। अबकी बार खर्च तेरा होगा। "

" मुझे कोई आपत्ति नहीं अगर मेरे पास कुछ हो। पर तब फिर व्यवस्थामें कुछ रद्दोबदल करना होगा। विदाई जिन लोगोंको दी जायगी वह ' टोल* ' या चटशालाका पण्डित-समाज न होगा, बल्कि ' टोल ' का दरवाज़ा बन्द करके जिन्हें बाहर ढकेल रखा गया है—वे होंगे। "

विप्रदासने पूर्ववत् हँसते हुए कहा—" टोलोंपर तेरी इतनी नाराज़गी क्यों है ? लोगोंके मुँहसे उनकी सिर्फ़ निन्दा ही निन्दा सुन ली है, खुद तो कभी आँखोंसे देखा नहीं तैंने। उन लोगोंके दलमें शामिल होनेसे शायद मुझे भी तेरे शासनमें खानेको न मिलेगा। "

द्विजदासने पास आकर और एक बार पाँव छुए, और कहा—" यह बात मत कहिए। आप दोनों दलोंसे बाहरके हैं, और तीसरा स्थान कौनसा है सो भी मुझे नहीं मालूम। मैंने तो सिर्फ़ इतना जान रखा है कि मेरे भाई-साहब हम लोगोंकी विचारधाराके बाहरके हैं। "

विप्रदासने उसकी बातको दबा दिया। बोला—" मेरी बीमारीकी बात माको तो नहीं मालूम हुई ? "

" नहीं। पर मालूम हो जाना इससे अच्छा होता, तालाबकी प्रतिष्ठा कमसे कम स्थगित हो जाती। "

" नाते-रिश्तेदारोंको बुलानेका इंतजाम हो गया ? "

" हो रहा है। भूत भविष्य वर्तमानके सभी रिश्तेदारोंको बुलानेका। सकन्या अक्षय बाबूके लिए भी आमंत्रण पत्र भेजा गया है। माकी धारणा है कि विराट् आयोजनमें मैत्रेयीकी भी अग्नि-परीक्षा हो जायगी। मेरे ऊपर भार पड़ा है उन लोगोंको यहाँसे ले जानेका। "

" माने और किसीको लिवा ले जानेको नहीं कहा ? "

" हाँ, अनु-दीदीको भी ले जाना होगा। कॉलेजके लड़कोंमेंसे अगर कोई जाना चाहे तो वे भी चल सकते हैं। "

---

*प्राचीन कालकी संस्कृत-पाठशालाओंको बंगालमें ' टोल ' कहते हैं। इनमें निम्न जातिके छात्रोंके लिए स्थान न था।

पोट हो गई। विप्रदास जमींदार और दुनियवी आदमी हैं, कंजूस हैं—सिवा एक माके, इस बदनामीके प्रचार करनेका मौका मिल जाय तो कोई रिआयत नहीं करता। विप्रदास भी इस हँसीमें शामिल होता हुआ, बोला—" लेकिन तेरी पारी है। अबकी बार खर्च तेरा होगा। "

" मुझे कोई आपत्ति नहीं अगर मेरे पास कुछ हो। पर तब फिर व्यवस्थामें कुछ रद्दोबदल करना होगा। विदाई जिन लोगोंको दी जायगी वह ' टोल* ' या चटशालाका पण्डित-समाज न होगा, बल्कि ' टोल ' का दरवाज़ा बन्द करके जिन्हें बाहर ढकेल रखा गया है—वे होंगे। "

विप्रदासने पूर्ववत् हँसते हुए कहा—" टोलोंपर तेरी इतनी नाराज़गी क्यों है ? लोगोंके मुँहसे उनकी सिर्फ निन्दा ही निन्दा सुन ली है, खुद तो कभी आँखोंसे देखा नहीं तैंने। उन लोगोंके दलमें शामिल होनेसे शायद मुझे भी तेरे शासनमें खानेको न मिलेगा। "

द्विजदासने पास आकर और एक बार पाँव छुए, और कहा—" यह बात मत कहिए। आप दोनों दलोंसे बाहरके हैं, और तीसरा स्थान कौनसा है सो भी मुझे नहीं मालूम। मैंने तो सिर्फ इतना जान रखा है कि मेरे भाई-साहब हम लोगोंकी विचारधाराके बाहरके हैं। "

विप्रदासने उसकी बातको दबा दिया। बोला—" मेरी बीमारीकी बात माको तो नहीं मालूम हुई ? "

" नहीं। पर मालूम हो जाना इससे अच्छा होता, तालाबकी प्रतिष्ठा कमसे कम स्थगित हो जाती। "

" नाते-रिश्तेदारोंको बुलानेका इंतजाम हो गया ? "

" हो रहा है। भूत भविष्य वर्तमानके सभी रिश्तेदारोंको बुलानेका। सकन्या अक्षय बाबूके लिए भी आमंत्रण पत्र भेजा गया है। माकी धारणा है कि विराट् आयोजनमें मैत्रेयीकी भी अग्नि-परीक्षा हो जायगी। मेरे ऊपर भार पड़ा है उन लोगोंको यहाँसे ले जानेका। "

" माने और किसीको लिवा ले जानेको नहीं कहा ? "

" हाँ, अनु-दीदीको भी ले जाना होगा। कॉलेजके लड़कोंमेंसे अगर कोई जाना चाहे तो वे भी चल सकते हैं। "

---

*प्राचीन कालकी संस्कृत-पाठशालाओंको बंगालमें ' टोल ' कहते हैं। इनमें निम्न जातिके छात्रोंके लिए स्थान न था।

२०

द्विजदासनें पूछा—" वन्दना अचानक कैसे चली गई ? मेरा आ जाना ही कारण है क्या ? "

विप्रदासने कहा—" नहीं। उसके पिताने तार भेजा है कि जब तक बम्बई नहीं जाती तब तक मौसीके घर जाकर रहे। "

" पर अचानक मौसी कहाँसे निकल आई ? वन्दनाने मेरे साथ तो लगभग बात ही नहीं की, जबसे आया हूँ तबसे अलग-सलग ही रहीं, उसके बाद सबेरा होते-न-होते चल दीं। एक नमस्कार ज़रूर कर गई, लेकिन वह भी मुँह फेरकर। मेरे विरुद्ध हो क्या गया उन्हें ? "

विप्रदासने उसके प्रश्नको टाल दिया; और मौसीकी बात संक्षेपमें सुनाकर कहा—" मेरी बीमारीसे डरकर अनु-दीदी उसे मौसीके घरसे ही लिवा लाई थी–मेरी तीमारदारीके लिए। काफी सेवा-शुश्रूषा की उसने। उसके प्रति तुम लोगोंको कृतज्ञ होना चाहिए। "

द्विजदासने कहा—" नहीं चाहिए यह मैं नहीं कहता, पर आपकी सेवा करनेका मौका मिलना भी एक सौभाग्यकी बात है। इस मूल्यको अगर वे भी महसूस कर सकी हों तो कृतज्ञता उनपर हम लोगोंकी लेनी रही। "

विप्रदासने हँसते हुए कहा—" तू बड़ा नराधम है। "

द्विज़दासने कहा—" नराधम हूँ, पर निर्बोध नहीं। मेरी बात जाने दीजिए। पर इस सेवा करनेकी बात माके कानों तक पहुँच गई तो वे हमेशाके लिए हमारी माको ही खरीद रखेंगी। यह क्या कुछ कम सम्पदा है ? "

सुनके विप्रदास हँस दिया, बोला—" माको इतने दिनों बाद तू पहचान गया मालूम होता है ? "

द्विजदासने कहा—" अगर पहचान ही गया होऊँ तो इस बातको सिर्फ़ आप ही जान रखिए। मैं माका कुपुत्र हूँ, कुलाङ्गार हूँ—उनके तईं यही परिचय रहने दीजिए। इसे अब हिलाने-हुलानेकी ज़रूरत नहीं भाई साहब। "

" मगर क्यों ? मा, तुझपर विश्वास कर सकें, तुझे अच्छा समझने लगें—यह क्या तू सचमुच ही नहीं चाहता ? इस अभिमानसे लाभ क्या सो तो बता ? "

" लाभ क्या है सो नहीं जानता, पर लोभ विशेष नहीं है। मुझे आपका

२०

द्विजदासनें पूछा—" वन्दना, अचानक कैसे चली गई ? मेरा आ जाना ही कारण है क्या ? "

विप्रदासने कहा—" नहीं। उसके पिताने तार भेजा है कि जब तक बम्बई नहीं जाती तब तक मौसीके घर जाकर रहे। "

" पर अचानक मौसी कहाँसे निकल आई ? वन्दनाने मेरे साथ तो लगभग बात ही नहीं की, जबसे आया हूँ तबसे अलग-सलग ही रहीं, उसके बाद सवेरा होते-न-होते चल दीं। एक नमस्कार ज़रूर कर गई, लेकिन वह भी मुँह फेरकर। मेरे विरुद्ध हो क्या गया उन्हें ? "

विप्रदासने उसके प्रश्नको टाल दिया; और मौसीकी बात संक्षेपमें सुनाकर कहा—" मेरी बीमारीसे डरकर अनु-दीदी उसे मौसीके घरसे ही लिवा लाई थी—मेरी तीमारदारीके लिए। काफी सेवा-शुश्रूषा की उसने। उसके प्रति तुम लोगोंको कृतज्ञ होना चाहिए। "

द्विजदासने कहा—" नहीं चाहिए यह मैं नहीं कहता, पर आपकी सेवा करनेका मौका मिलना भी एक सौभाग्यकी बात है। इस मूल्यको अगर वे भी महसूस कर सकी हों तो कृतज्ञता उनपर हम लोगोंकी लेनी रही। "

विप्रदासने हँसते हुए कहा—" तू बड़ा नराधम है। "

द्विज़दासने कहा—" नराधम हूँ, पर निर्बोध नहीं। मेरी बात जाने दीजिए। पर इस सेवा करनेकी बात माके कानों तक पहुँच गई तो वे हमेशाके लिए हमारी माको ही खरीद रखेंगी। यह क्या कुछ कम सम्पदा है ? "

सुनके विप्रदास हँस दिया, बोला—" माको इतने दिनों बाद तू पहचान गया मालूम होता है ? "

द्विजदासने कहा—" अगर पहचान ही गया होऊँ तो इस बातको सिर्फ़ आप ही जान रखिए। मैं माका कुपुत्र हूँ, कुलाङ्गार हूँ—उनके तईं यही परिचय रहने दीजिए। इसे अब हिलाने-हुलानेकी ज़रूरत नहीं भाई साहब। "

" मगर क्यों ? मा, तुझपर विश्वास कर सकें, तुझे अच्छा समझने लगें—यह क्या तू सचमुच ही नहीं चाहता ? इस अभिमानसे लाभ क्या सो तो बता ? "

" लाभ क्या है सो नहीं जानता, पर लोभ विशेष नहीं है। मुझे आपका

श्लोक पढ़-पढ़कर मनको अब कब तक चंगा बनाये रखूँ भाई साहब, आप ही बताइए ?"

विप्रदासने कहा—"माके मामलेको लेकर अब वकालत नहीं करूँगा, यह तू अपने आप ही किसी दिन समझ जायगा, पर पिताजीके संबंधमें जो धारणा तेरी है—वह गलत है। आधी सम्पत्तिका सचमुच ही तू मालिक है।"

द्विजदासने कहा—"हो सकता है सच, पर पिताजीके मरनेके बाद, कमरेका दरवाज़ा बन्द करके उनका 'वसीयतनामा' क्या आपने नहीं जला डाला ?"

"किसने कहा तुझसे ?"

"अब तक जो मेरी सब तरफसे रक्षा करती आई हैं उन्हींके मुँहसे सुना है यह।"

"सो हो सकता है, पर तेरी भाभीने तो वह वसीयतनामा पढ़ा नहीं। ऐसा भी तो हो सकता है कि पिताजी तुझको ही सब दे गये हों और इसीलिए गुस्सेमें आकर मैंने उसे जला दिया हो। यह असंभव तो नहीं।"

सुनकर कुतूहलकी हँसीसे पहले तो वह खूब हँस लिया, फिर बोला—"भाई साहब, आप तो कभी झूठ नहीं बोलते। द्वापरमें युधिष्ठिरके झूठको नोट कर गये हैं वेदव्यास, और कलियुगमें आपके झूठको नोट कर रखेगा यह द्विजदास। दोनों ही समान होंगे। खैर, कुछ भी हो, इतना समझ लिया कि कर्मफलके विपाकमें पड़ जानेसे सब कुछ सम्भव हो सकता है। अब और ज्यादा पाप न बढ़ाऊँगा, बताइए अबसे मुझे क्या क्या करना होगा ?"

"हम लोगोंका कारोबार और ज़मींदारीका काम सब-कुछ तुझे ही देखना-भालना पड़ेगा।"

"मगर क्यों ? किसलिए इतना भार मैं ढोऊँ, मुझे समझा दीजिए। क्या अकेले आपसे सम्हालते नहीं बनता ? असंभव बात है। मैं निकम्मा नालायक हुआ जा रहा हूँ इसलिए ? नहीं, सो बात नहीं, फिर भी मा पूछें तो उनसे कह दीजिएगा कि लायकीकी मुझे ज़रूरत नहीं, मैं नालायक रहकर ही दिन काट दूँगा, उन्हें सोच-फिकर करनेकी ज़रूरत नहीं। आपके रहते हुए रुपये पैसे ज़मीन-जायदादका बोझ मैं नहीं ढोऊँगा। अन्तमें क्या मैं भी आप ही जैसा घोरतर सम्पत्तिशाली दुनियवी हो जाऊँ ? लोग कहेंगे, उसकी शिराओंमें खून नहीं बहता, बहता है रुपयोंका स्रोत।"—परन्तु कहते कहते ही उसने देखा कि विप्रदास अन्यमनस्क होकर न जाने क्या सोच रहे हैं,

श्लोक पढ़-पढ़कर मनको अब कब तक चंगा बनाये रखूँ भाई साहब, आप ही बताइए ?"

विप्रदासने कहा—"माके मामलेको लेकर अब वकालत नहीं करूँगा, यह तू अपने आप ही किसी दिन समझ जायगा, पर पिताजीके संबंधमें जो धारणा तेरी है—वह गलत है। आधी सम्पत्तिका सचमुच ही तू मालिक है।"

द्विजदासने कहा—"हो सकता है सच, पर पिताजीके मरनेके बाद, कमरेका दरवाज़ा बन्द करके उनका 'वसीयतनामा' क्या आपने नहीं जला डाला ?"

"किसने कहा तुझसे ?"

"अब तक जो मेरी सब तरफसे रक्षा करती आई हैं उन्हींके मुँहसे सुना है यह।"

"सो हो सकता है, पर तेरी भाभीने तो वह वसीयतनामा पढ़ा नहीं। ऐसा भी तो हो सकता है कि पिताजी तुझको ही सब दे गये हों और इसीलिए गुस्सेमें आकर मैंने उसे जला दिया हो। यह असंभव तो नहीं।"

सुनकर कुतूहलकी हँसीसे पहले तो वह खूब हँस लिया, फिर बोला—"भाई साहब, आप तो कभी झूठ नहीं बोलते। द्वापरमें युधिष्ठिरके झूठको नोट कर गये हैं वेदव्यास, और कलियुगमें आपके झूठको नोट कर रखेगा यह द्विजदास। दोनों ही समान होंगे। खैर, कुछ भी हो, इतना समझ लिया कि कर्मफलके विपाकमें पड़ जानेसे सब कुछ सम्भव हो सकता है। अब और ज्यादा पाप न बढ़ाऊँगा, बताइए अबसे मुझे क्या क्या करना होगा ?"

"हम लोगोंका कारोबार और ज़मींदारीका काम सब-कुछ तुझे ही देखना-भालना पड़ेगा।"

"मगर क्यों ? किसलिए इतना भार मैं ढोऊँ, मुझे समझा दीजिए। क्या अकेले आपसे सम्हालते नहीं बनता ? असंभव बात है। मैं निकम्मा नालायक हुआ जा रहा हूँ इसलिए ? नहीं, सो बात नहीं, फिर भी मा पूछें तो उनसे कह दीजिएगा कि लायकीकी मुझे ज़रूरत नहीं, मैं नालायक रहकर ही दिन काट दूँगा, उन्हें सोच-फिकर करनेकी ज़रूरत नहीं। आपके रहते हुए रुपये पैसे ज़मीन-जायदादका बोझ मैं नहीं ढोऊँगा। अन्तमें क्या मैं भी आप ही जैसा घोरतर सम्पत्तिशाली दुनियवी हो जाऊँ ? लोग कहेंगे, उसकी शिरा-ओंमें खून नहीं बहता, बहता है रुपयोंका स्रोत।"—परन्तु कहते कहते ही उसने देखा कि विप्रदास अन्यमनस्क होकर न जाने क्या सोच रहे हैं,

पड़ा तब अपनी उस बदनामीको अप्रमाणित करनेमें उसे ज्यादा समय न लगा। इस तरहका अनभ्यस्त भारी कार्यभार वह इतनी आसानीसे उठा लेगा; इतनी आशा विप्रदासको न थी; उसकी आलस्यहीन शृंखलाबद्ध कार्यपटुताको देखकर वह एकबारगी आश्चर्यचकित हो गया। जो कुछ खरीदके भेजना था उसे गाड़ीमें लदवाकर उसने देश भेज दिया, जो कुछ साथ ले जानेका था वह साथ ले जानेके लिए रख छोड़ा, आत्मीय-कुटुम्बी जनोंको इकट्ठा करके यथायोग्य आदर-सत्कारके साथ उन्हें रवाना कर दिया। यहाँका सारा काम पूरा करके आज घर जानेके दिन वह भाई-साहबसे आखिरी उपदेश ग्रहण करनेके लिए उनके कमरेमें गया, तो देखा कि वहाँ बन्दना बैठी है। उस दिनसे फिर वह यहाँ नहीं आई थी। काम-काजकी भीड़में उसकी बात द्विजदास भूल ही गया था। आज अचानक उसे देखकर मन ही मन उसे आश्चर्य हुआ, परन्तु उस भावको प्रकट न करके, उससे सिर्फ एक मामूली नमस्कार शिष्टाचार करके, विप्रदाससे बोला—“ भाई साहब, आज रातकी गाड़ीसे मैं घर जा रहा हूँ, साथ जा रहे हैं अक्षय बाबू, उनकी स्त्री और पुत्री मैत्रेयी। आपके कॉलेजके लड़के शायद कल-परसों तक जायेंगे,—उन लोगोंको मैं किराया दे चला हूँ। अनु-दीदीको क्या आप ही अपने साथ लाइएगा? पर तीन-चार दिनसे ज्यादा दिन न लगाइएगा। ”

“ मुझे क्या जाना ही पड़ेगा? ”

“ हाँ। न जानेका विचार हो तो एक जोड़ी खड़ाऊँ खरीद दीजिए, ले जाकर भरतकी तरह सिंहासनपर रख दूँगा। ”

विप्रदासने हँसते हुए कहा—“ बातूनियोंका सिरताज हो गया है तू तो। पर आश्चर्य होता है अक्षय बाबूकी बात सुनके। वे कैसे जायेंगे? उन्हें तो छुट्टी नहीं मिली—ग़ैर-हाजिरी हो जायगी जो? ”

द्विजदासने कहा—“ सो होगी, पर नुकसान नहीं होगा,—उधर उससे भी बहुत बड़ा काम हो जायगा बड़े घरमें लड़की परनानेका। पैसेवाला जमाई भविष्यके लिए बहुत भरोसेकी चीज़ है,—कॉलेजकी बँधी हुई तनखासे बहुत बड़ी बात है। ”

विप्रदासने नाराज़ होकर कहा—“ तेरी बात जसी रूखी होती हैं वैसी ही कर्कश। किसी आदमीका सम्मान रखते हुए बात करना ही नहीं जानता। ”

द्विजदासने कहा—“ जानता हूँ या नहीं सो भाभीसे पूछ देखिएगा।

पड़ा तब अपनी उस बदनामीको अप्रमाणित करनेमें उसे ज्यादा समय न लगा। इस तरहका अनभ्यस्त भारी कार्यभार वह इतनी आसानीसे उठा लेगा; इतनी आशा विप्रदासको न थी; उसकी आलस्यहीन शृंखलाबद्ध कार्यपटुताको देखकर वह एकबारगी आश्चर्यचकित हो गया। जो कुछ खरीदके भेजना था उसे गाड़ीमें लदवाकर उसने देश भेज दिया, जो कुछ साथ ले जानेका था वह साथ ले जानेके लिए रख छोड़ा, आत्मीय-कुटुम्बी जनोंको इकट्ठा करके यथायोग्य आदर-सत्कारके साथ उन्हें रवाना कर दिया। यहाँका सारा काम पूरा करके आज घर जानेके दिन वह भाई-साहबसे आखिरी उपदेश ग्रहण करनेके लिए उनके कमरेमें गया, तो देखा कि वहाँ बन्दना बैठी है। उस दिनसे फिर वह यहाँ नहीं आई थी। काम-काजकी भीड़में उसकी बात द्विजदास भूल ही गया था। आज अचानक उसे देखकर मन ही मन उसे आश्चर्य हुआ, परन्तु उस भावको प्रकट न करके, उससे सिर्फ एक मामूली नमस्कार शिष्टाचार करके, विप्रदाससे बोला—" भाई साहब, आज रातकी गाड़ीसे मैं घर जा रहा हूँ, साथ जा रहे हैं अक्षय बाबू, उनकी स्त्री और पुत्री मैत्रेयी। आपके कॉलेजके लड़के शायद कल-परसों तक जायेंगे,—उन लोगोंको मैं किराया दे चला हूँ। अनु-दीदीको क्या आप ही अपने साथ लाइएगा? पर तीन-चार दिनसे ज्यादा दिन न लगाइएगा। "

" मुझे क्या जाना ही पड़ेगा? "

" हाँ। न जानेका विचार हो तो एक जोड़ी खड़ाऊँ खरीद दीजिए, ले जाकर भरतकी तरह सिंहासनपर रख दूँगा। "

विप्रदासने हँसते हुए कहा—" बातूनियोंका सिरताज हो गया है तू तो। पर आश्चर्य होता है अक्षय बाबूकी बात सुनके। वे कैसे जायेंगे? उन्हें तो छुट्टी नहीं मिली—ग़ैर-हाजिरी हो जायगी जो? "

द्विजदासने कहा—" सो होगी, पर नुकसान नहीं होगा,—उधर उससे भी बहुत बड़ा काम हो जायगा बड़े घरमें लड़की परनानेका। पैसेवाला जमाई भविष्यके लिए बहुत भरोसेकी चीज़ है,—कॉलेजकी बँधी हुई तनखासे बहुत बड़ी बात है। "

विप्रदासने नाराज़ होकर कहा—" तेरी बात जसी रूखी होती हैं वैसी ही कर्कश। किसी आदमीका सम्मान रखते हुए बात करना ही नहीं जानता। "

द्विजदासने कहा—" जानता हूँ या नहीं सो मामीसे पूछ देखिएगा।

विप्रदास कुछ चुपचाप मुसकराता रहा, फिर बोला—"अच्छी बात है, यही सही। मैं खुद ही आ जाऊँगा, तेरे आनेकी ज़रूरत नहीं।"

द्विजदासके चले जानेपर बन्दनाने पूछा—"यह क्या हुआ मुखर्जी साहब, घर जानेमें आपत्ति क्यों की?"

विप्रदासने कहा—"कारण तो तुम अपने कानोंसे ही सुन चुकी हो।"

"सुना तो सही, पर यह जवाब तो दूसरोंके लिए है, मेरे लिए नहीं। बताइए, क्यों आप घर नहीं जाना चाहते? आपको कहना ही पड़ेगा।"

"मैं थका हुआ हूँ।"

"नहीं।"

"नहीं क्यों? थकनेपर सभीका दावा है, नहीं है तो सिर्फ़ मेरा?"

"आपका भी है, लेकिन वह दावा सचमुचका होता तो सबसे पहले समझ जाती मैं। और सबकी दृष्टिको आप धोखा दे सकते हैं, सिर्फ़ मेरी दृष्टिको नहीं दे सकते। जाते वक्त जीजीको मैं चिट्ठी लिखती जाऊँगी कि आपकी बीमारी समझनेकी अगर कभी ज़रूरत हो तो वे मुझे बुला लिया करें।"

"जीजी तुम्हारी खुद बीमारी नहीं पहचान सकेंगी, तुम उन्हें पहचनवा दोगी।—यह बात सुनके वे खुश न होंगी।"

बन्दनाने कहा—"खुश भले ही न हों, पर कृतज्ञ ज़रूर होंगी। मेरी जीजी ठहरीं उस युगकी भली मानस स्त्री, उन्हें पतिको ढूँढ़ना-चुनना नहीं पड़ा, भगवानने उन्हें आशीर्वादकी भाँति अंजुलि भर दी थी। तबसे स्वस्थ सबल आदमीके साथ ही उनका कारोबार चल रहा है। पर उस आदमीका भी किसी दिन हृदय टूट सकता है, यह खबर वे कैसे जान सकती हैं?"

विप्रदास मुँहसे कुछ जवाब न देकर सिर्फ़ ज़रा हँस दिया।

बन्दनाने कहा—"आप हँसे कैसे?"

विप्रदासने कहा—"हँसी अपने आप ही आ जाती है बन्दना। पति ढूँढ़ने-चुननेके अभियानमें आज तक तुमने जिन लोगोंको देखा है उनके बाहर भी कोई है—यह तुम लोग सोच ही नहीं सकतीं। संसारके साधारण नियमोंको सिर्फ़ मानती हो तुम लोग, उनके व्यतिक्रमको नहीं मानना चाहतीं। और मज़ा यह कि इस व्यतिक्रमके बलपर ही टिका हुआ है धर्म, टिका हुआ है पुण्य, काव्य-साहित्य, अविचलित श्रद्धा और विश्वास, सब कुछ। इसके न रहनेसे तो पृथिवी बिलकुल मरुभूमि हो जाती। इस सत्यको तुम आज तक नहीं जानतीं।"

विप्रदास कुछ चुपचाप मुसकराता रहा, फिर बोला—"अच्छी बात है, यही सही। मैं खुद ही आ जाऊँगा, तेरे आनेकी ज़रूरत नहीं।"

द्विजदासके चले जानेपर बन्दनाने पूछा—"यह क्या हुआ मुखर्जी साहब, घर जानेमें आपत्ति क्यों की?"

विप्रदासने कहा—"कारण तो तुम अपने कानोंसे ही सुन चुकी हो।"

"सुना तो सही, पर यह जवाब तो दूसरोंके लिए है, मेरे लिए नहीं। बताइए, क्यों आप घर नहीं जाना चाहते? आपको कहना ही पड़ेगा।"

"मैं थका हुआ हूँ।"

"नहीं।"

"नहीं क्यों? थकनेपर सभीका दावा है, नहीं है तो सिर्फ मेरा?"

"आपका भी है, लेकिन वह दावा सचमुचका होता तो सबसे पहले समझ जाती मैं। और सबकी दृष्टिको आप धोखा दे सकते हैं, सिर्फ मेरी दृष्टिको नहीं दे सकते। जाते वक्त जीजीको मैं चिट्ठी लिखती जाऊँगी कि आपकी बीमारी समझनेकी अगर कभी ज़रूरत हो तो वे मुझे बुला लिया करें।"

"जीजी तुम्हारी खुद बीमारी नहीं पहचान सकेंगी, तुम उन्हें पहचनवा दोगी।—यह बात सुनके वे खुश न होंगी।"

बन्दनाने कहा—"खुश भले ही न हों, पर कृतज्ञ ज़रूर होंगी। मेरी जीजी ठहरीं उस युगकी भली मानस स्त्री, उन्हें पतिको ढूँढ़ना-चुनना नहीं पड़ा, भगवानने उन्हें आशीर्वादकी भाँति अंजुलि भर दी थी। तबसे स्वस्थ सबल आदमीके साथ ही उनका कारोबार चल रहा है। पर उस आदमीका भी किसी दिन हृदय टूट सकता है, यह खबर वे कैसे जान सकती हैं?"

विप्रदास मुँहसे कुछ जवाब न देकर सिर्फ ज़रा हँस दिया।

बन्दनाने कहा—"आप हँसे कैसे?"

विप्रदासने कहा—"हँसी अपने आप ही आ जाती है बन्दना। पति ढूँढने-चुननेके अभियानमें आज तक तुमने जिन लोगोंको देखा है उनके बाहर भी कोई है—यह तुम लोग सोच ही नहीं सकतीं। संसारके साधारण नियमोंको सिर्फ मानती हो तुम लोग, उनके व्यतिक्रमको नहीं मानना चाहतीं। और मज़ा यह कि इस व्यतिक्रमके बलपर ही टिका हुआ है धर्म, टिका हुआ है पुण्य, काव्य-साहित्य, अविचलित श्रद्धा और विश्वास, सब कुछ। इसके न रहनेसे तो पृथिवी बिलकुल मरुभूमि हो जाती। इस सत्यको तुम आज तक नहीं जानतीं।"

था कि यह सब शायद सचमुच ही अच्छा होगा, छुआछूतका नियम मानके चलना, फूल चुनना, चन्दन लगाना, पूजाका आयोजन करना,—और भी न-जाने क्या-क्या—समझा था कि यह सब शायद सचमुच ही मनुष्यको पवित्र बनाता है; किन्तु अबकी बार मौसीके घर जानेपर यह मूढ़ता मेरी दूर हो गई। कई दिनों तक कैसा पागलपन किया था मैंने मुखर्जी साहब ! मानो सचमुच ही उन बातोंपर मेरा विश्वास हो, मानो हमारी शिक्षा, हमारे संस्कारोंमें सचमुच ही कहीं भी इससे कोई प्रभेद न हो !"—इतना कहकर वह ज़बरन हँसने लगी।

उसने सोचा था कि उसकी इन बातोंसे विप्रदासको बड़ी गहरी चोट पहुँचेगी, किन्तु देखा कि ज़रा भी नहीं पहुँची। उसकी छद्म हँसीमें शामिल होते हुए विप्रदासने कहा—"मैं जानता था वन्दना। तुम्हें क्या याद नहीं कि मैंने तुम्हें सावधान करते हुए एक दिन तुमसे कहा था कि यह सब तुम्हारे लिए नहीं है, तुम मत करो यह-सब। वह मूढ़ता तुम्हारी दूर हो गई जानकर मुझे खुशी हुई। तुमने शायद सोचा होगा कि तुम्हारी यह बात सुनकर मुझे बड़ा कष्ट होगा, मगर सो बात नहीं। जिसके लिए जो स्वाभाविक नहीं है उसे वह न करे तो मैं दुःखी नहीं होता। तुम्हें तो याद है कि जब तुमने पूछा कि मैं किसका ध्यान करता हूँ, तो मैं चुप रह गया था। कहनेमें कोई बाधा हो सो बात नहीं, पर व्यर्थ था कहना। पर अभी इन सब बातोंको रहने दो। तुम्हारा बम्बई जानेका क्या कोई दिन तय हुआ?"

मारे अभिमानके वन्दनाका चेहरा सुर्ख हो उठा, विप्रदासकी बातके जवाबमें उसने सिर्फ कहा—"नहीं।"

"उस दिन तुम अपनी मौसीके भतीजे अशोककी बात कह रही थीं। कहती थीं लड़का तुम्हें अच्छा ही लगा है। इन कई दिनोंमें उसके विषयमें क्या और कुछ जान सकीं हो?"

"नहीं।"

"तुम लोगोंका अगर ब्याह हो, तो मैं आशीर्वाद दूँगा, पर मौसीकी जल्द-बाजीमें कुछ कर न बैठना। उनकी ताकीदसे जरा बचके चलना।"

वन्दनाकी आँखोंमें आँसू आ गये, पर मुँह नीचे किये हुए उसने अपनेको सम्हाल लिया, कहा—"अच्छा।"

विप्रदासने कहा—"मैं परसों घर जाऊँगा। दो-तीन दिनसे ज्यादा वहाँ रह

था कि यह सब शायद सचमुच ही अच्छा होगा, छुआछूतका नियम मानके चलना, फूल चुनना, चन्दन लगाना, पूजाका आयोजन करना,—और भी न-जाने क्या-क्या—समझा था कि यह सब शायद सचमुच ही मनुष्यको पवित्र बनाता है; किन्तु अबकी बार मौसीके घर जानेपर यह मूढ़ता मेरी दूर हो गई। कई दिनों तक कैसा पागलपन किया था मैंने मुखर्जी साहब! मानो सचमुच ही उन बातोंपर मेरा विश्वास हो, मानो हमारी शिक्षा, हमारे संस्कारोंमें सचमुच ही कहीं भी इससे कोई प्रभेद न हो!"—इतना कहकर वह ज़बरन हँसने लगी।

उसने सोचा था कि उसकी इन बातोंसे विप्रदासको बड़ी गहरी चोट पहुँचेगी, किन्तु देखा कि ज़रा भी नहीं पहुँची। उसकी छद्म हँसीमें शामिल होते हुए विप्रदासने कहा—"मैं जानता था बन्दना। तुम्हें क्या याद नहीं कि मैंने तुम्हें सावधान करते हुए एक दिन तुमसे कहा था कि यह सब तुम्हारे लिए नहीं है, तुम मत करो यह-सब। वह मूढ़ता तुम्हारी दूर हो गई जानकर मुझे खुशी हुई। तुमने शायद सोचा होगा कि तुम्हारी यह बात सुनकर मुझे बड़ा कष्ट होगा, मगर सो बात नहीं। जिसके लिए जो स्वाभाविक नहीं है उसे वह न करे तो मैं दुःखी नहीं होता। तुम्हें तो याद है कि जब तुमने पूछा कि मैं किसका ध्यान करता हूँ, तो मैं चुप रह गया था। कहनेमें कोई बाधा हो सो बात नहीं, पर व्यर्थ था कहना। पर अभी इन सब बातोंको रहने दो। तुम्हारा बम्बई जानेका क्या कोई दिन तय हुआ?"

मारे अभिमानके बन्दनाका चेहरा सुर्ख हो उठा, विप्रदासकी बातके जवाबमें उसने सिर्फ कहा—"नहीं।"

"उस दिन तुम अपनी मौसीके भतीजे अशोककी बात कह रही थीं। कहती थीं लड़का तुम्हें अच्छा ही लगा है। इन कई दिनोंमें उसके विषयमें क्या और कुछ जान सकीं हो?"

"नहीं।"

"तुम लोगोंका अगर ब्याह हो, तो मैं आशीर्वाद दूँगा, पर मौसीकी जल्द-बाजीमें कुछ कर न बैठना। उनकी ताकीदसे जरा बचके चलना।"

बन्दनाकी आँखोंमें आँसू आ गये, पर मुँह नीचे किये हुए उसने अपनेको सम्हाल लिया, कहा—"अच्छा।"

विप्रदासने कहा—"मैं परसों घर जाऊँगा। दो-तीन दिनसे ज्यादा वहाँ रह

"बोलनेकी ज़रूरत नहीं पड़ी थी मुखर्जी साहब।"

विप्रदासने हँसते हुए कहा—"तब तो देख रहा हूँ तुम सचमुच ही नाराज़ हो। पर एक बात आज तुमसे कहता हूँ बन्दना, द्विजूका व्यवहार सूखा होता है, बातचीत भी हमेशा खूब मुलायम नहीं होती, पर उसके इस कर्कश आवरणको हटाकर अगर कभी उसके वास्तविक दर्शन पा जाओ तो देखोगी कि ऐसा मधुर आदमी और नहीं है। मेरी बातपर विश्वास करो, ऐसा निर्भर-योग्य आदमी भी तुम्हें आसानीसे ढूँढ़े न मिलेगा।"

बन्दना दूसरी तरफ देखती रही, कोई जवाब नहीं दिया। इसके बाद अकस्मात् उठ खड़ी हुई और बोली—"गाड़ी बहुत देरसे खड़ी है मुखर्जी साहब,—मैं जा रही हूँ। अगर रह सकी तो, आपके वापस आनेपर आपसे मिलूँगी। और अगर नहीं रह सकी तो यही मेरा आखिरी नमस्कार है।"—इतना कहकर उसने झुकके विप्रदासके पाँव छुए और हाथ माथेसे लगाकर तेजीसे वहाँसे चल दी। विप्रदासको एक बात कहनेका भी अवसर नहीं दिया।

× × ×

बन्दनाने बरामदा पार करके जीनेके पास आकर आश्चर्यके साथ देखा कि द्विजदास हाथ-जोड़े खड़ा है।

बन्दना हँस पड़ी, बोली—"यह क्या बात है?"

"एक प्रार्थना है। भाई साहबको साथ लेकर एक बार आपको हमारे देशवाले घर चलना पड़ेगा।"

"मैं उन्हें साथ ले जाऊँगी, इसकी वजह?"

द्विजदासने कहा—"कहनेके लिए ही खड़ा हुआ हूँ। एक दिन बिना आह्वानके ही आपने हमारे घर पदार्पण किया था, आज फिर वही दया आपको करनी होगी।"

बन्दना क्षण-भर बगलें झाँकती रही, फिर बोली—"मगर मुझे निमंत्रण दे कौन रहा है? मा, भाई साहब या आप खुद?"

"मैं खुद ही दे रहा हूँ।"

"मगर आप तो उस घरमें 'तृतीय-पुरुष' हैं, आपको इसका अधिकार क्या है?"

द्विजदासने कहा—"और कोई अधिकार हो या न हो, जीनेका अधिकार

"बोलनेकी ज़रूरत नहीं पड़ी थी मुखर्जी साहब।"

विप्रदासने हँसते हुए कहा—"तब तो देख रहा हूँ तुम सचमुच ही नाराज़ हो। पर एक बात आज तुमसे कहता हूँ बन्दना, द्विजूका व्यवहार सूखा होता है, बातचीत भी हमेशा खूब मुलायम नहीं होती, पर उसके इस कर्कश आवरणको हटाकर अगर कभी उसके वास्तविक दर्शन पा जाओ तो देखोगी कि ऐसा मधुर आदमी और नहीं है। मेरी बातपर विश्वास करो, ऐसा निर्भर-योग्य आदमी भी तुम्हें आसानीसे ढूँढे न मिलेगा।"

बन्दना दूसरी तरफ़ देखती रही, कोई जवाब नहीं दिया। इसके बाद अकस्मात् उठ खड़ी हुई और बोली—"गाड़ी बहुत देरसे खड़ी है मुखर्जी साहब,—मैं जा रही हूँ। अगर रह सकी तो, आपके वापस आनेपर आपसे मिलूँगी। और अगर नहीं रह सकी तो यही मेरा आखिरी नमस्कार है।"—इतना कहकर उसने झुकके विप्रदासके पाँव छुए और हाथ माथेसे लगाकर तेज़ीसे वहाँसे चल दी। विप्रदासको एक बात कहनेका भी अवसर नहीं दिया।

× × ×

बन्दनाने बरामदा पार करके जीनेके पास आकर आश्चर्यके साथ देखा कि द्विजदास हाथ-जोड़े खड़ा है।

बन्दना हँस पड़ी, बोली—"यह क्या बात है?"

"एक प्रार्थना है। भाई साहबको साथ लेकर एक बार आपको हमारे देशवाले घर चलना पड़ेगा।"

"मैं उन्हें साथ ले जाऊँगी, इसकी वजह?"

द्विजदासने कहा—"कहनेके लिए ही खड़ा हुआ हूँ। एक दिन बिना आह्वानके ही आपने हमारे घर पदार्पण किया था, आज फिर वही दया आपको करनी होगी।"

बन्दना क्षण-भर बग़लें झाँकती रही, फिर बोली—"मगर मुझे निमंत्रण दे कौन रहा है? मा, भाई साहब या आप खुद?"

"मैं खुद ही दे रहा हूँ।"

"मगर आप तो उस घरमें 'तृतीय-पुरुष' हैं, आपको इसका अधिकार क्या है?"

द्विजदासने कहा—"और कोई अधिकार हो या न हो, जीनेका अधिकार

उसने पास आकर झुकके विप्रदासको प्रणाम किया, और कहा—" पाँवकी धूल लेकिन इनके सामने न ले सकी, इसलिए कि कहीं ये ऐसा न समझ बैठें कि इनके समाजका कलंक हूँ मैं! पर इसके मानी यह नहीं कि आप ऐसा समझ बैठें कि यह नया कायदा मौसीके यहाँका सीखा हुआ है। उसके बाद फिर आपकी प्रसन्नताकी गहराइका माप मुझे मालूम है न! "

विप्रदासने कहा—" अपनी मौसीजीके सामने इसी तरह मेरा गुण-गान किया करती हो क्या? "—फिर अशोककी तरफ देखकर कहा—" वन्दनाके मुँहसे आपकी बात इतनी ज्यादा सुन चुका हूँ कि बीमार न होता तो खुद ही जाता आपसे मिलने। देखते ही ऐसा लगा जैसे चेहरा आपका परिचित हो, बहुत बार देखा हुआ हो। अच्छा ही हुआ जो व्यर्थमें देर न करके ये स्वयं ही साथ ले आई आपको। "

प्रत्युत्तरमें अशोक कुछ कहना ही चाहता था कि उसके पहले ही बन्दना शासनकी शैलीसे तर्जनी उठाकर बोल उठी—" मुखर्जी साहब, अत्युक्ति और अतिशयोक्तिको लाँघकर लगभग असत्यके कोठेमें आ चुके हैं,—अब रुक जाइए, नहीं तो दंगा शुरू कर दूँगी। "

" इसके मानी? "

" इसके मानी यह कि हम अति-साधारण लोगोंकी तरह आप भी सच-झूठ जो मनमें आवे बनाकर कह सकते हैं। आप तनिक भी असाधारण व्यक्ति नहीं हैं,—ठीक हम ही लोगोंके समान साधारण मनुष्य हैं। "

विप्रदासने कहा—" नहीं। सबको पूछ देखो, वे सब एक स्वरसे गवाही देंगे कि तुम्हारा अनुमान अश्रद्धेय है, अग्राह्य है। "

वन्दनाने कहा—" अबकी बार उन्हीं लोगोंके पास ले जाकर आपके इस सिंह-चर्मको दोनों हाथोंसे फाड़-फूड़ अलग कर दूँगी। तब असल मूर्ति उन लोगोंको दीख पड़ेगी,—उनका भय दूर हो जायगा। फिर वे मुझे आशीर्वाद देते हुए कहेंगे—तुम राज-रानी होओ। "

विप्रदासने हँसते हुए कहा—" आशीर्वादमें मुझे कोई आपत्ति नहीं, यहाँ तक कि मैं खुद भी देनेको तैयार हूँ, मगर आशीर्वाद तो तुम लोग चाहती नहीं, कह देती हो—कुसंस्कार है यह, सिर्फ बातकी बात है, रूढ़ी है। "

वन्दनाने फिर उँगली उठाकर कहा—" फिर चुटकी लेनेकी कोशिश? कौन कहता है कि बड़ोंका आशीर्वाद हम नहीं चाहतीं—किसने कहा है यह

उसने पास आकर झुकके विप्रदासको प्रणाम किया, और कहा—" पाँवकी धूल लेकिन इनके सामने न ले सकी, इसलिए कि कहीं ये ऐसा न समझ बैठें कि इनके समाजका कलंक हूँ मैं ! पर इसके मानी यह नहीं कि आप ऐसा समझ बैठें कि यह नया कायदा मौसीके यहाँका सीखा हुआ है। उसके बाद फिर आपकी प्रसन्नताकी गहराइका माप मुझे मालूम है न ! "

विप्रदासने कहा—" अपनी मौसीजीके सामने इसी तरह मेरा गुण-गान किया करती हो क्या ? "—फिर अशोककी तरफ देखकर कहा—" वन्दनाके मुँहसे आपकी बात इतनी ज्यादा सुन चुका हूँ कि बीमार न होता तो खुद ही जाता आपसे मिलने। देखते ही ऐसा लगा जैसे चेहरा आपका परिचित हो, बहुत बार देखा हुआ हो। अच्छा ही हुआ जो व्यर्थमें देर न करके ये स्वयं ही साथ ले आई आपको। "

प्रत्युत्तरमें अशोक कुछ कहना ही चाहता था कि उसके पहले ही बन्दना शासनकी शैलीसे तर्जनी उठाकर बोल उठी—" मुखर्जी साहब, अत्युक्ति और अतिशयोक्तिको लाँघकर लगभग असत्यके कोठेमें आ चुके हैं,—अब रुक जाइए, नहीं तो दंगा शुरू कर दूँगी। "

" इसके मानी ? "

" इसके मानी यह कि हम अति-साधारण लोगोंकी तरह आप भी सच-झूठ जो मनमें आवे बनाकर कह सकते हैं। आप तनिक भी असाधारण व्यक्ति नहीं हैं,—ठीक हम ही लोगोंके समान साधारण मनुष्य हैं। "

विप्रदासने कहा—" नहीं। सबको पूछ देखो, वे सब एक स्वरसे गवाही देंगे कि तुम्हारा अनुमान अश्रद्धेय है, अग्राह्य है। "

वन्दनाने कहा—" अबकी बार उन्हीं लोगोंके पास ले जाकर आपके इस सिंह-चर्मको दोनों हाथोंसे फाड़-फूड़ अलग कर दूँगी। तब असल मूर्ति उन लोगोंको दीख पड़ेगी,—उनका भय दूर हो जायगा। फिर वे मुझे आशीर्वाद देते हुए कहेंगे—तुम राज-रानी होओ। "

विप्रदासने हँसते हुए कहा—" आशीर्वादमें मुझे कोई आपत्ति नहीं, यहाँ तक कि मैं खुद भी देनेको तैयार हूँ, मगर आशीर्वाद तो तुम लोग चाहती नहीं, कह देती हो—कुसंस्कार है यह, सिर्फ बातकी बात है, रूढ़ी है। "

वन्दनाने फिर उँगली उठाकर कहा—" फिर चुटकी लेनेकी कोशिश ? कौन कहता है कि बड़ोंका आशीर्वाद हम नहीं चाहतीं—किसने कहा है यह

था। न तो खुद खाता था और न साँड़ोंको ही मज़ेसे मुँह मारने देता था। आदमी जीये कैसे बताओ भला ?"

वन्दना दरवाज़ेके पास ठिठकके खड़ी हो गई और कृत्रिम रोषसे भौंहें सिकोड़कर बोली—"बिलकुल हमारे जैसे साधारण आदमी हैं आप,—ज़रा भी फ़र्क नहीं। लोग व्यर्थ ही डर-डर मरते हैं।

"तुम जाकर अबकी उनका डर दूर कर आना।"

"इसीसे तो जा रही हूँ। और, भूसीके साथ किसीकी उपमा देनेकी दुर्बुद्धिका बदला लेके छोड़ूँगी।"—इतना कहकर वह दीप्त कटाक्षके साथ फिर बिजली-सी बरसाती हुई तेजीसे अदृश्य हो गई।

× × ×

विप्रदासने कहा—"मिस्टर—"

अशोकने विनयके साथ बाधा देते हुए कहा—"नहीं नहीं, सो नहीं होगा। इसे निकाल देनेमें कोई बाधा न हो, इसीलिए तो धोती-चादर और चट्टी पहनके आया हूँ विप्रदास बाबू। और वन्दना देवीने भी भरोसा दिया था कि—"

विप्रदासने मन-ही-मन खुश होकर कहा—"अच्छा ही हुआ अशोक बाबू, सम्बोधन ज़रा आसान हो गया। गँवई-गाँवका आदमी ठहरा, न तो याद ही रहता है और न अभ्यास ही है। अब आजादीके साथ बातचीत जमा सकूँगा। जैसा कि सुना, आप हमारे गाँव जाना चाहते हैं, सचमुच ही अगर जायँ तो मैं कृतार्थ होऊँगा। हमारे घरकी बड़ी-बूढ़ी स्वामिनी मेरी मा हैं, उनकी तरफ़से मैं आपको सादर निमंत्रण देता हूँ।"

विप्रदासके विनय-वचनसे अशोक पुलकित हो उठा, बोला—"ज़रूर जाऊँगा। ज़रूर जाऊँगा। कितने दरिद्र अनाथ आतुर आयेंगे निमंत्रण रक्षा करने, कितने अध्यापक-पण्डित उपस्थित होंगे विदाई लेने—आनन्द-उत्सव, खाना-पीना, आना-जाना, कितना विचित्र आयोजन—"

विप्रदासने हँसते हुए कहा—"सब यह बढ़ाई हुई बातें हैं अशोक बाबू, वन्दना सिर्फ़ मज़ाक कर रही है।"

"मज़ाक करनेसे उन्हें फायदा क्या विप्रदास बाबू ?"

"एक फायदा है मुझे शरमिन्दा करना। बलरामपुरके मुखर्जी-घरानेसे वह

था। न तो खुद खाता था और न साँड़ोंको ही मज़ेसे मुँह मारने देता था। आदमी जीये कैसे बताओ भला ?"

वन्दना दरवाज़ेके पास ठिठकके खड़ी हो गई और कृत्रिम रोषसे भौंहें सिकोड़कर बोली—"बिलकुल हमारे जैसे साधारण आदमी हैं आप,—ज़रा भी फ़र्क़ नहीं। लोग व्यर्थ ही डर-डर मरते हैं।

"तुम जाकर अबकी उनका डर दूर कर आना।"

"इसीसे तो जा रही हूँ। और, भूसीके साथ किसीकी उपमा देनेकी दुर्बुद्धिका बदला लेके छोड़ूँगी।"—इतना कहकर वह दीप्त कटाक्षके साथ फिर बिजली-सी बरसाती हुई तेजीसे अदृश्य हो गई।

× × ×

विप्रदासने कहा—"मिस्टर—"

अशोकने विनयके साथ बाधा देते हुए कहा—"नहीं नहीं, सो नहीं होगा। इसे निकाल देनेमें कोई बाधा न हो, इसीलिए तो धोती-चादर और चट्टी पहनके आया हूँ विप्रदास बाबू। और वन्दना देवीने भी भरोसा दिया था कि—"

विप्रदासने मन-ही-मन खुश होकर कहा—"अच्छा ही हुआ अशोक बाबू, सम्बोधन ज़रा आसान हो गया। गँवई-गाँवका आदमी ठहरा, न तो याद ही रहता है और न अभ्यास ही है। अब आजादीके साथ बातचीत जमा सकूँगा। जैसा कि सुना, आप हमारे गाँव जाना चाहते हैं, सचमुच ही अगर जायँ तो मैं कृतार्थ होऊँगा। हमारे घरकी बड़ी-बूढ़ी स्वामिनी मेरी मा हैं, उनकी तरफ़से मैं आपको सादर निमंत्रण देता हूँ।"

विप्रदासके विनय-वचनसे अशोक पुलकित हो उठा, बोला—"ज़रूर जाऊँगा। ज़रूर जाऊँगा। कितने दरिद्र अनाथ आतुर आयेंगे निमंत्रण रक्षा करने, कितने अध्यापक-पण्डित उपस्थित होंगे विदाई लेने—आनन्द-उत्सव, खाना-पीना, आना-जाना, कितना विचित्र आयोजन—"

विप्रदासने हँसते हुए कहा—"सब यह बढ़ाई हुई बातें हैं अशोक बाबू, वन्दना सिर्फ़ मज़ाक कर रही है।"

"मज़ाक करनेसे उन्हें फायदा क्या विप्रदास बाबू ?"

"एक फायदा है मुझे शरमिन्दा करना। बलरामपुरके मुखर्जी-घरानेसे वह

आँखोंसे देखूँ।' बन्दनाने कहा—'मगर यह तो कुसंस्कार है अशोक बाबू। आँखोंसे देखनेसे भी आपकी जात चली जायगी।' मैंने कहा—'अगर आपकी न जायगी तो मेरी भी नहीं जासकती। और अगर जाती ही हो तो दोनोंकी ही जाय, मुझे कोई आपत्ति नहीं।'

"वन्दनाने कहा—'आप तो विश्वास ही नहीं करते, आँखोंसे देखेंगे तो मन-ही-मन हँसेंगे ही।'

"मैंने कहा—'क्या आप भी विश्वास करती हैं?' उन्होंने कहा—'नहीं, मैं नहीं करती, पर मुखर्जी साहब करते हैं। मैं सिर्फ़ आशा रखती हूँ कि किसी दिन मैं भी सचमुच विश्वास करने लगूँ।' विप्रदास बाबू, आपकी बन्दना देवी मन-ही-मन पूजा करती हैं, इतनी भक्ति वे संसारमें और किसीपर नहीं करतीं।"

विप्रदाससे यह बात छिपी नहीं है, और न नई ही है; फिर भी दूसरेके मुँहसे सुनकर उसका चेहरा बिल्कुल फीका पड़ गया।

क्षण-भर बाद उसने पूछा—"आप लोगोंके विवाहका प्रस्ताव चल रहा था, सो क्या तय हो गया? बन्दनाने सम्मति दे दी?"

"नहीं। पर असम्मति भी नहीं जाहिर की।"

"यह आशाकी बात है अशोक बाबू। चुप रह जाना भी अनेक क्षेत्रोंमें सम्मतिका लक्षण है।"

अशोक कृतज्ञ-दृष्टिसे क्षण-भर देखता रहा, फिर बोला—"नहीं भी हो सकता है। कमसे कम मैं खुद अभी तक ऐसा ही समझता हूँ।" फिर ज़रा ठहरकर बोला—"मुश्किलकी बात यह है कि मैं ग़रीब हूँ और बन्दना धनवती। धनपर मेरा लोभ न हो सो बात नहीं, पर बुआजीके समान वही मेरा एक मात्र लक्ष्य नहीं है। मगर यह बात समझाऊँ कैसे कि बुआजीके साथ मैंने षड्यंत्र नहीं किया?"

इस युवकके प्रति मन-ही-मन विप्रदासका भाव कुछ उपेक्षापूर्ण था, अब उसकी बातकी सरलतासे वह भाव कुछ-कुछ घट गया। विप्रदासने सदय कंठसे कहा—"बुआके षड्यंत्रमें आप वास्तवमें शामिल न होंगे तो यह बात वन्दना किसी-न-किसी दिन अवश्य समझ जायगी, तब फिर उसके प्रसन्न होनेमें भी देर न लगेगी, और धनकी बातसे फिर कोई बाधा भी न होगी।"

०

आँखोंसे देखूँ।' वन्दनाने कहा—'मगर यह तो कुसंस्कार है अशोक बाबू। आँखोंसे देखनेसे भी आपकी जात चली जायगी।' मैंने कहा—'अगर आपकी न जायगी तो मेरी भी नहीं जासकती। और अगर जाती ही हो तो दोनोंकी ही जाय, मुझे कोई आपत्ति नहीं।'

"वन्दनाने कहा—'आप तो विश्वास ही नहीं करते, आँखोंसे देखेंगे तो मन-ही-मन हँसेंगे ही।'

"मैंने कहा—'क्या आप भी विश्वास करती हैं?' उन्होंने कहा—'नहीं, मैं नहीं करती, पर मुखर्जी साहब करते हैं। मैं सिर्फ आशा रखती हूँ कि किसी दिन मैं भी सचमुच विश्वास करने लगूँ।' विप्रदास बाबू, आपकी वन्दना देवी मन-ही-मन पूजा करती हैं, इतनी भक्ति वे संसारमें और किसीपर नहीं करतीं।"

विप्रदाससे यह बात छिपी नहीं है, और न नई ही है; फिर भी दूसरेके मुँहसे सुनकर उसका चेहरा बिल्कुल फीका पड़ गया।

क्षण-भर बाद उसने पूछा—"आप लोगोंके विवाहका प्रस्ताव चल रहा था, सो क्या तय हो गया? वन्दनाने सम्मति दे दी?"

"नहीं। पर असम्मति भी नहीं जाहिर की।"

"यह आशाकी बात है अशोक बाबू। चुप रह जाना भी अनेक क्षेत्रोंमें सम्मतिका लक्षण है।"

अशोक कृतज्ञ-दृष्टिसे क्षण-भर देखता रहा, फिर बोला—"नहीं भी हो सकता है। कमसे कम मैं खुद अभी तक ऐसा ही समझता हूँ।" फिर ज़रा ठहरकर बोला—"मुश्किलकी बात यह है कि मैं ग़रीब हूँ और वन्दना धनवती। धनपर मेरा लोभ न हो सो बात नहीं, पर बुआजीके समान वही मेरा एक मात्र लक्ष्य नहीं है। मगर यह बात समझाऊँ कैसे कि बुआजीके साथ मैंने षड्यंत्र नहीं किया?"

इस युवकके प्रति मन-ही-मन विप्रदासका भाव कुछ उपेक्षापूर्ण था, अब उसकी बातकी सरलतासे वह भाव कुछ-कुछ घट गया। विप्रदासने सदय कंठसे कहा—"बुआके षड्यंत्रमें आप वास्तवमें शामिल न होंगे तो यह बात वन्दना किसी-न-किसी दिन अवश्य समझ जायगी, तब फिर उसके प्रसन्न होनेमें भी देर न लगेगी, और धनकी बातसे फिर कोई बाधा भी न होगी।"

०

गई थी, जल्दी-जल्दी आनेमें पाँवसे कोई चीज़ छू गई; जितना ही उन्होंने अपनेको समझाना चाहा कि ऐसी कोई बात नहीं, उससे पूजामें कोई बाधा नहीं आ सकती, उतना ही उनका मन समझनेसे इन्कार करने लगा कि कहीं किसी भी रास्तेसे आपके काममें त्रुटि न हो जाय। इसलिए दुबारा नहाकर फिर आपकी पूजाकी तैयारियाँ कीं। आपने लेकिन उस दिन नाराज़ होकर कह दिया था कि 'बन्दना, सुबह अगर तुम न जग सको तो अन्नदा-दीदीसे पूजाकी तैयारियाँ करवा देना।' याद है आपको विप्रदास बाबू?"

विप्रदासने सिर हिलाकर कहा—"है।"

अशोक कहने लगा—"इसी तरह कितने ही दिनोंकी कितनी ही छोटी-छोटी बातें करते-करते उस दिन बहुत रात हो गई, अन्तमें उन्होंने कहा—'मौसीने उन लोगोंके कुसंस्कारकी बात कहके चुटकी ली,—मैंने खुद भी एक दिन ऐसा किया था,—पर आज कौनसा अच्छा है और कौनसा बुरा, इसके समझनेमें उलझन हो जाती है।' खाने-पीनेका विचार तो कभी किया नहीं, आजन्मका विश्वास है—इसमें दोष नहीं, पर अब झिझक-सी आती है। बुद्धिकी ओरसे लज्जा पाता हूँ, लोगोंसे छिपाना चाहता हूँ, पर जब कभी मनमें खयाल आता है कि यह सब उन्हें पसन्द नहीं तभी मन मानो उनकी तरफ़से मुँह फेर बैठता है।"

सुनते-सुनते विप्रदासका चेहरा फीका पड़ गया, उसने जबरदस्ती हँसनेकी कोशिश करते हुए कहा—"बन्दनाने क्या अब खाने-पीनेमें छुआछूतका विचार करना शुरू कर दिया है? पर उस दिन तो वह यहाँ आकर दम्भके साथ कह गई थी कि मौसीके घर जाकर उसने अपने समाज और अपनी स्वाभाविक बुद्धिको पुनः प्राप्त कर लिया है और मुखर्जी-परिवारकी हजारों तरहकी कृत्रिमतासे छुटकारा पाकर वह जी गई है!"

अशोक आश्चर्यके साथ कुछ कहना ही चाहता था कि इतनेमें विघ्न उपस्थित हो गया। परदा हटाकर बन्दना वहाँ आ पहुँची। उसने कहा—"मुखर्जी साहब, सब कुछ ठीक करके रख जाती हूँ। कल सबेरे नौ बजेकी गाड़ीसे चलना है। पूजा-ऊजा वाहियात काम सब उसके पहले ही कर लीजिएगा। इतनी विडम्बना भी भगवानने आपकी तकदीरमें लिख दी है!"

विप्रदासने हँसते हुए कहा—"ऐसा ही हो शायद!"

"शायद नहीं, निश्चय। सोचा करती हूँ, काश कोई अगर आपकी इन सब

गई थी, जल्दी-जल्दी आनेमें पाँवसे कोई चीज़ छू गई; जितना ही उन्होंने अपनेको समझाना चाहा कि ऐसी कोई बात नहीं, उससे पूजामें कोई बाधा नहीं आ सकती, उतना ही उनका मन समझनेसे इन्कार करने लगा कि कहीं किसी भी रास्तेसे आपके काममें त्रुटि न हो जाय। इसलिए दुबारा नहाकर फिर आपकी पूजाकी तैयारियाँ कीं। आपने लेकिन उस दिन नाराज़ होकर कह दिया था कि 'बन्दना, सुबह अगर तुम न जग सको तो अन्नदा-दीदीसे पूजाकी तैया-रियाँ करवा देना।' याद है आपको विप्रदास बाबू?"

विप्रदासने सिर हिलाकर कहा—"है।"

अशोक कहने लगा—"इसी तरह कितने ही दिनोंकी कितनी ही छोटी-छोटी बातें करते-करते उस दिन बहुत रात हो गई, अन्तमें उन्होंने कहा—'मौसीने उन लोगोंके कुसंस्कारकी बात कहके चुटकी ली,—मैंने खुद भी एक दिन ऐसा किया था,—पर आज कौनसा अच्छा है और कौनसा बुरा, इसके समझनेमें उलझन हो जाती है।' खाने-पीनेका विचार तो कभी किया नहीं, आजन्मका विश्वास है—इसमें दोष नहीं, पर अब झिझक-सी आती है। बुद्धिकी ओरसे लज्जा पाता हूँ, लोगोंसे छिपाना चाहता हूँ, पर जब कभी मनमें ख़याल आता है कि यह सब उन्हें पसन्द नहीं तभी मन मानो उनकी तरफ़से मुँह फेर बैठता है।"

सुनते-सुनते विप्रदासका चेहरा फीका पड़ गया, उसने जबरदस्ती हँसनेकी कोशिश करते हुए कहा—"बन्दनाने क्या अब खाने-पीनेमें छुआछूतका विचार करना शुरू कर दिया है? पर उस दिन तो वह यहाँ आकर दम्भके साथ कह गई थी कि मौसीके घर जाकर उसने अपने समाज और अपनी स्वाभाविक बुद्धिको पुनः प्राप्त कर लिया है और मुखर्जी-परिवारकी हजारों तरहकी कृत्रिमतासे छुटकारा पाकर वह जी गई है!"

अशोक आश्चर्यके साथ कुछ कहना ही चाहता था कि इतनेमें विघ्न उपस्थित हो गया। परदा हटाकर बन्दना वहाँ आ पहुँची। उसने कहा—"मुखर्जी साहब, सब कुछ ठीक करके रख जाती हूँ। कल सबेरे नौ बजेकी गाड़ीसे चलना है। पूजा-ऊजा वाहियात काम सब उसके पहले ही कर लीजिएगा। इतनी विडम्बना भी भगवानने आपकी तकदीरमें लिख दी है!"

विप्रदासने हँसते हुए कहा—"ऐसा ही हो शायद!"

"शायद नहीं, निश्चय। सोचा करती हूँ, काश कोई अगर आपकी इन सब

मैत्रेयीकी बात छेड़ी। उस लड़कीके गुणोंकी सीमा नहीं, दयामयीको दुःख इस बातका है कि एक-मुखसे उसकी सूची रचकर दाखिल करना संभव नहीं हो सकता। बोलीं—"बापने सिखाया न हो ऐसा कोई विषय ही बाकी नहीं। ऐसा कोई काम नहीं जो वह न जानती हो। बहूकी तबीयत भी अच्छी नहीं चल रही है—इसीसे उस अकेलीही-ने मानो सारा भार सिरपर लाद लिया है। भाग्यसे उसे बुला लिया था, नहीं तो क्या होता, सोचते भी डर लगता है।"

विप्रदासने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा—"कहती क्या हो मा!"

दयामयीने कहा—"सच्ची बात है बेटा। लड़कीका काम-धन्धा देखकर मालूम होता है कि तेरे बाप जो बोझ मेरे ऊपर छोड़कर चले गये हैं उसके लिए अब कोई फिक्र की बात नहीं रह गई। बहूको ऐसी देवरानी मिल जाय तो वह सारा भार मज़ेमें उठा सकती है, कहीं भी कोई कोर-कसर नहीं रहेगी। इस साल तो अब हो न सकेगा, अगर जीती रही तो अगले साल निश्चिन्त होकर कैलास-दर्शनको जा सकूँगी।"

विप्रदास चुप रहा। दयामयीकी बात संभव है कि झूठ न हो, हो सकता है कि मैत्रेयी ऐसी ही प्रशंसाके योग्य हो, किन्तु फिर भी यशोगानकी एक सीमा होती है, स्थान-काल भी देखा जाता है। उनका लक्ष्य चाहे कुछ भी हो, पर उपलक्ष्य भी छिपा न रहा। एक तरहकी अकरुण असहिष्णु क्षुद्रताने उनकी सुपरिचित मर्यादाको मानो खंडित कर दिया। सहसा लड़केके मुँहकी ओर देखकर दयामयी अपनी इस भूलको तो समझ गईं, पर कैसे इसका प्रतिकार किया जाय,—यह उनकी समझमें न आया। द्विजदास कामकी भीड़में अन्यत्र घिरा हुआ था, खबर पाते ही वहाँ आ पहुँचा।

विप्रदासने कहा—"बहुत भारी काम छेड़ दिया है तैंने, सम्हालेगा कैसे?"

द्विजदासने कहा—"भार तो आपने खुद अपने ऊपर नहीं लिया भाई-साहब, मुझपर दिया है। आपको क्या डर है?"

वन्दनाने इसका जवाब दिया, उसने कहा—"इन्हें तो इस बातकी चिन्ता है कि खर्चका तमाम रुपया अगर प्रजासे न वसूल हुआ तो मूल-धनमें हाथ लगाना पड़ेगा। क्या यह डरकी बात नहीं द्विजू बाबू?"

सबके सब हँस पड़े, और इस हँसीके भीतरसे माका मनोभार मानो कुछ घट गया, उन्होंने प्रसन्न मुखसे कृत्रिम रोषके स्वरमें कहा—"इसे परेशान करनेमें तुम भी क्या ठीक अपनी बहन जैसी ही हो गई वन्दना? विपिन मेरा

मैत्रेयीकी बात छेड़ी। उस लड़कीके गुणोंकी सीमा नहीं, दयामयीको दुःख इस बातका है कि एक-मुखसे उसकी सूची रचकर दाखिल करना संभव नहीं हो सकता। बोलीं—"बापने सिखाया न हो ऐसा कोई विषय ही बाकी नहीं। ऐसा कोई काम नहीं जो वह न जानती हो। बहूकी तबीयत भी अच्छी नहीं चल रही है—इसीसे उस अकेलीही-ने मानो सारा भार सिरपर लाद लिया है। भाग्यसे उसे बुला लिया था, नहीं तो क्या होता, सोचते भी डर लगता है।"

विप्रदासने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा—"कहती क्या हो मा!"

दयामयीने कहा—"सच्ची बात है बेटा। लड़कीका काम-धन्धा देखकर मालूम होता है कि तेरे बाप जो बोझ मेरे ऊपर छोड़कर चले गये हैं उसके लिए अब कोई फिकर की बात नहीं रह गई। बहूको ऐसी देवरानी मिल जाय तो वह सारा भार मज़ेमें उठा सकती है, कहीं भी कोई कोर-कसर नहीं रहेगी। इस साल तो अब हो न सकेगा, अगर जीती रही तो अगले साल निश्चिन्त होकर कैलास-दर्शनको जा सकूँगी।"

विप्रदास चुप रहा। दयामयीकी बात संभव है कि झूठ न हो, हो सकता है कि मैत्रेयी ऐसी ही प्रशंसाके योग्य हो, किन्तु फिर भी यशोगानकी एक सीमा होती है, स्थान-काल भी देखा जाता है। उनका लक्ष्य चाहे कुछ भी हो, पर उपलक्ष्य भी छिपा न रहा। एक तरहकी अकरुण असहिष्णु क्षुद्रताने उनकी सुपरिचित मर्यादाको मानो खंडित कर दिया। सहसा लड़केके मुँहकी ओर देखकर दयामयी अपनी इस भूलको तो समझ गई, पर कैसे इसका प्रतिकार किया जाय,—यह उनकी समझमें न आया। द्विजदास कामकी भीड़में अन्यत्र घिरा हुआ था, खबर पाते ही वहाँ आ पहुँचा।

विप्रदासने कहा—"बहुत भारी काम छेड़ दिया है तैंने, सम्हालेगा कैसे?"

द्विजदासने कहा—"भार तो आपने खुद अपने ऊपर नहीं लिया भाई-साहब, मुझपर दिया है। आपको क्या डर है?"

वन्दनाने इसका जवाब दिया, उसने कहा—"इन्हें तो इस बातकी चिन्ता है कि खर्चका तमाम रुपया अगर प्रजासे न वसूल हुआ तो मूल-धनमें हाथ लगाना पड़ेगा। क्या यह डरकी बात नहीं द्विजू बाबू?"

सबके सब हँस पड़े, और इस हँसीके भीतरसे माका मनोभार मानो कुछ घट गया, उन्होंने प्रसन्न मुखसे कृत्रिम रोषके स्वरमें कहा—"इसे परेशान करनेमें तुम भी क्या ठीक अपनी बहन जैसी ही हो गई वन्दना? विपिन मेरा

उसके लिए ऐसे किसीकी ज़रूरत है जो उसे ठीक रास्तेपर चला ले जा सके। नहीं तो वह किसी दिन खुद भी डूबेगा और दूसरोंको भी डुबायेगा।"

द्विजदास अब तब तक चुप था, अब उसने बात की, बोला—"तुम्हारी आख़िरी बात ठीक नहीं हुई मा। खुद डूबूँगा, यह बात शायद किसी दिन सच हो सकती है, पर दूसरोंको न डुबोऊँगा, इतना तुम निश्चय जान लो।"

माने कहा—"इनमेंसे एक भी सुखकी बात नहीं द्विजू, एक भी आनन्दकी बात नहीं। असलमें तुझे चलानेवाला कोई-न-कोई होना ही चाहिए।"

द्विजदासने कहा—"यही बात साफ़ साफ़ कहो जिससे सबकी चिन्ता दूर हो। मुझे चलानेवाला कोई एक चाहिए ही, सो ठीक है, पर इसका जुगाड़ भी तो लगभग तुम कर ही चुकी हो।"

माने कहा—"अगर सचमुच ही कर चुकी होऊँ तो तू अपना भाग्य ही समझ।"

तर्क-वितर्कका मूल तात्पर्य अब सबके सामने स्पष्ट-सा हो पड़ा।

मा कहने लगीं—"इतना बड़ा जो काण्ड कर डाला तैंने, किसीकी बात सुनी, कह दिया—भाई-साहबका हुकम है! पर भाई-साहबने क्या यह कह दिया था कि अश्वमेध-यज्ञ कर डाल? अब सम्हालेगा कौन इसे, बता? भाग्यसे मैत्रेयी आ गई थी, उसीका थोड़ा-बहुत भरोसा है।"

द्विजदासने कहा—"काम पहले पूरा हो जाने दो मा, उसके बाद जिसे चाहो सनद लिख के दे देना, मैं ज़रा भी आपत्ति न करूँगा; अभीसे उसकी जल्दी क्या है?"

बन्दनाने पूछा—"तब सनदपर दस्तखत कौन करेगा द्विजबाबू, तृतीय-पुरुष तो नहीं?"

द्विजदासने कहा—"नहीं, तृतीय-पुरुषकी क्या मजाल है! आज तक महापराक्रान्त प्रथम और द्वितीय पुरुष ज्योंके त्यों जो विद्यमान हैं!"—कहते-कहते दोनों ही हँस पड़े।

विप्रदास और उसकी मा परस्पर एक दूसरेका मुँह देखने लगे, उनकी कुछ समझमें न आया।

इतनेमें अन्नदाने आकर कहा—"जीजी-बाई, बड़े बाबूकी दवाएँ कल जिसमें सम्हालकर रखी थीं वह कागजका बक्स तो नहीं मिल रहा है,—खो-खा तो नहीं गया?"

उसके लिए ऐसे किसीकी ज़रूरत है जो उसे ठीक रास्तेपर चला ले जा सके। नहीं तो वह किसी दिन खुद भी डूबेगा और दूसरोंको भी डुबायेगा।"

द्विजदास अब तब तक चुप था, अब उसने बात की, बोला—"तुम्हारी आख़िरी बात ठीक नहीं हुई मा। खुद डूबूँगा, यह बात शायद किसी दिन सच हो सकती है, पर दूसरोंको न डुबोऊँगा, इतना तुम निश्चय जान लो।"

माने कहा—"इनमेंसे एक भी सुखकी बात नहीं द्विजू, एक भी आनन्दकी बात नहीं। असलमें तुझे चलानेवाला कोई-न-कोई होना ही चाहिए।"

द्विजदासने कहा—"यही बात साफ़ साफ़ कहो जिससे सबकी चिन्ता दूर हो। मुझे चलानेवाला कोई एक चाहिए ही, सो ठीक है, पर इसका जुगाड़ भी तो लगभग तुम कर ही चुकी हो।"

माने कहा—"अगर सचमुच ही कर चुकी होऊँ तो तू अपना भाग्य ही समझ।"

तर्क-वितर्कका मूल तात्पर्य अब सबके सामने स्पष्ट-सा हो पड़ा।

मा कहने लगीं—"इतना बड़ा जो काण्ड कर डाला तैंने, किसीकी बात सुनी, कह दिया—भाई-साहबका हुकम है! पर भाई-साहबने क्या यह कह दिया था कि अश्वमेध-यज्ञ कर डाल? अब सम्हालेगा कौन इसे, बता? भाग्यसे मैत्रेयी आ गई थी, उसीका थोड़ा-बहुत भरोसा है।"

द्विजदासने कहा—"काम पहले पूरा हो जाने दो मा, उसके बाद जिसे चाहो सनद लिख के दे देना, मैं ज़रा भी आपत्ति न करूँगा; अभीसे उसकी जल्दी क्या है?"

बन्दनाने पूछा—"तब सनदपर दस्तखत कौन करेगा द्विजबाबू, तृतीय-पुरुष तो नहीं?"

द्विजदासने कहा—"नहीं, तृतीय-पुरुषकी क्या मजाल है! आज तक महापराक्रान्त प्रथम और द्वितीय पुरुष ज्योंके त्यों जो विद्यमान हैं!"—कहते-कहते दोनों ही हँस पड़े।

विप्रदास और उसकी मा परस्पर एक दूसरेका मुँह देखने लगे, उनकी कुछ समझमें न आया।

इतनेमें अन्नदाने आकर कहा—"जीजी-बाई, बड़े बाबूकी दवाएँ कल जिसमें सम्हालकर रखी थीं वह कागजका बक्स तो नहीं मिल रहा है,—खो-खा तो नहीं गया?"

कर सकीं। सिर्फ़ दवा पिलाना ही तो नहीं था,—सवेरे संध्या-पूजाकी तैयारीसे लेकर रातको मशहरी डालकर सुला आने तक जो-कुछ काम था, सब ये ही करती थीं। अब ये अगर दवा नहीं देना चाहतीं मा, तो रहने दो, विपिन ऐसे ही अच्छा-चंगा हो उठेगा।"

विप्रदासने उसी वक्त इस बातका समर्थन करते हुए गंभीरतापूर्वक कहा—"सचमुच स्वस्थ हो उठूँगा मा, तुम लोग अब बन्दनाके काममें बाधा न डालो, इसके सुबुद्धि हो और मुझे दवा पिलाना बन्द कर दे। मैं मन-वचन-कायसे आशीर्वाद दूँगा—बन्दना राज-रानी होवे।"

दयामयी चुपचाप देखती रहीं। उनकी दोनों आँखोंसे मानो स्नेह और ममता छलकी पड़ती थी।

एक महरीने आकर कहा—"मा, बहू-रानी कह रही हैं कलकत्तेसे जो अभी चीज़-वस्त आई है वह किस कमरेमें रखी जायगी?"

दयामयीके जवाब देनेके पहले ही बन्दना बोल उठी—"मा, मैं आपकी म्लेच्छ-लड़की हूँ तो क्या आपके इतने बड़े काममेंसे मुझे कोई भी भार नहीं मिलेगा, सिर्फ़ चुपचाप बैठी रहूँगी? ऐसी भी तो बहुत-सी चीज़ें हैं जिनके छूने-छानेसे कुछ बनता-बिगड़ता नहीं?"

दयामयीने हाथ पकड़के उसे बिलकुल छातीसे लगा लिया, और आँचलसे चाबियोंका एक गुच्छा खोलकर उसके हाथमें थमाते हुए कहा—"चुपचाप तुम्हें बैठी रहने क्यों दूँगी बेटी? यह दी तुम्हें अपने भण्डारकी चाबी, जिसे सिवा बहूके मैं और किसीको नहीं दे सकती। आजसे इसका भार तुम्हींपर रहा।"

"क्या है मा, इस भण्डारमें!"

चाबियोंका यह गुच्छा अत्यन्त परिचित है, द्विजदासने तिरछी आँखोंसे उसे देखते हुए कहा—"जो कुछ है सब छुआछूतकी हदके बाहरकी चीज़ें हैं—सोना-चाँदी, रुपये-पैसे, रेशमी कपड़े,—जिन्हें बड़े-बड़े धार्मिक व्यक्ति भी सिरपर लादनेमें आपत्ति नहीं करेंगे—तुम्हारे छू देनेपर भी।"

बन्दनाने पूछा—"क्या करना होगा मा मुझे?"

दयामयी कहने लगीं—"अध्यापक-पण्डितोंकी विदाई, अतिथि-अभ्यागतोंकी सम्मान-रक्षा, आत्मीय-स्वजनोंके खर्चेका इन्तज़ाम, और उसके साथ-साथ इस लड़केपर ज़रा कड़ा शासन,—यही काम है।"—कहते हुए उन्होंने द्विजदासकी तरफ इशारा किया और फिर कहा—"मैं हिसाब नहीं

कर सकीं। सिर्फ़ दवा पिलाना ही तो नहीं था,—सवेरे संध्या-पूजाकी तैयारीसे लेकर रातको मशहरी डालकर सुला आने तक जो-कुछ काम था, सब ये ही करती थीं। अब ये अगर दवा नहीं देना चाहतीं मा, तो रहने दो, विपिन ऐसे ही अच्छा-चंगा हो उठेगा।"

विप्रदासने उसी वक्त इस बातका समर्थन करते हुए गंभीरतापूर्वक कहा—"सचमुच स्वस्थ हो उठूँगा मा, तुम लोग अब बन्दनाके काममें बाधा न डालो, इसके सुबुद्धि हो और मुझे दवा पिलाना बन्द कर दे। मैं मन-वचन-कायसे आशीर्वाद दूँगा—बन्दना राज-रानी होवे।"

दयामयी चुपचाप देखती रहीं। उनकी दोनों आँखोंसे मानो स्नेह और ममता छलकी पड़ती थी।

एक महरीने आकर कहा—"मा, बहू-रानी कह रही हैं कलकत्तेसे जो अभी चीज़-वस्त आई है वह किस कमरेमें रखी जायगी?"

दयामयीके जवाब देनेके पहले ही बन्दना बोल उठी—"मा, मैं आपकी म्लेच्छ-लड़की हूँ तो क्या आपके इतने बड़े काममेंसे मुझे कोई भी भार नहीं मिलेगा, सिर्फ़ चुपचाप बैठी रहूँगी? ऐसी भी तो बहुत-सी चीज़ें हैं जिनके छूने-छानेसे कुछ बनता-बिगड़ता नहीं?"

दयामयीने हाथ पकड़के उसे बिलकुल छातीसे लगा लिया, और आँचलसे चाबियोंका एक गुच्छा खोलकर उसके हाथमें थमाते हुए कहा—"चुपचाप तुम्हें बैठी रहने क्यों दूँगी बेटी? यह दी तुम्हें अपने भण्डारकी चाबी, जिसे सिवा बहूके मै और किसीको नहीं दे सकती। आजसे इसका भार तुम्हींपर रहा।"

"क्या है मा, इस भण्डारमें!"

चाबियोंका यह गुच्छा अत्यन्त परिचित है, द्विजदासने तिरछी आँखोंसे उसे देखते हुए कहा—"जो कुछ है सब छुआछूतकी हदके बाहरकी चीज़ें हैं—सोना-चाँदी, रुपये-पैसे, रेशमी कपड़े,—जिन्हें बड़े-बड़े धार्मिक व्यक्ति भी सिरपर लादनेमें आपत्ति नहीं करेंगे—तुम्हारे छू देनेपर भी।"

बन्दनाने पूछा—"क्या करना होगा मा मुझे?"

दयामयी कहने लगीं—"अध्यापक-पण्डितोंकी विदाई, अतिथि-अभ्यागतोंकी सम्मान-रक्षा, आत्मीय-स्वजनोंके खर्चेका इन्तजाम, और उसके साथ-साथ इस लड़केपर ज़रा कड़ा शासन,—यही काम है।"—कहते हुए उन्होंने द्विजदासकी तरफ इशारा किया और फिर कहा—"मैं हिसाब नहीं

भी कम नहीं; बहू-बेटी और नाती-पोतोंको लेकर प्रत्येककी अलग-अलग गृहस्थी है। बाहरकी तरफ है कचहरी और उससे सम्बन्धित सब तरहकी व्यवस्थां; परन्तु भीतरकी तरफ इस हिस्सेमें है ठाकुरद्वारा, रसोईघर, दयामयीकी विशाल गौ-शाला, ऊँची चहारदीवारीवाला बगीचा और उसके बीचमें तालाब। दुमंजिलेके पूरबकी तरफके कमरे दयामयीके हैं, उन्हींमेंसे एकके सामने ले जाकर बन्दनासे उन्होंने कहा—"बेटी, यह कमरा तुम्हारा है, इसका सारा भार तुमपर छोड़ती हूँ।"

उधरके बरामदेमें बैठी सती और मैत्रेयी कुछ चीजें बड़े ध्यानसे देख-भाल रही थीं, दयामयीकी आवाज़ सुनकर इधर देख उठीं; और बन्दनाको देखते ही दोनों काम छोड़कर उसके पास आकर खड़ी हो गईं। बन्दना सचमुच ही आयेगी, ऐसी आशा किसीको भी न थी। सतीके पाँव छूकर बन्दनाने मैत्रेयीको नमस्कार किया। माने कहा—"मेरी यह म्लेच्छ लड़की भी किसी कामका भार लेना चाहती है बहू, चुपचाप बैठी रहनेसे नाराज़ है। तुम लोगोंको बहुत-सा काम दे रखा है, इसे देती हूँ मैं अपने भण्डारकी चाबी।"

मैत्रेयीने पूछा—"भण्डारमें क्या है मा?"

माने कहा—"इसमें ऐसी चीज़ें हैं जिनको म्लेच्छ-लड़कीके छूनेपर भी छूत नहीं लगती।"—इतना कहकर दयामयीने कौतुककी हँसी हँसकर कमरा खोला और उसके भीतर जा खड़ी हुईं। जमीनपर बहुतसे चाँदीके थाल रखे हुए थे—ब्राह्मण-पण्डितोंको विदाईमें देनेके लिए। एक जगह कलकत्तेसे भुनाकर मँगाये हुए रुपयों और अठन्नी-चौअन्नियोंका ढेर लगा हुआ था। कीमती रेशमी वस्त्रादि अभी तक ज्योंके त्यों बँधे पड़े हुए हैं—खोलकर देखनेका अवकाश ही नहीं मिला। इनके अलावा दयामयीकी अपनी आलमारी और सन्दूक भी इसी कमरेमें है। हाथसे सब दिखाते हुए उन्होंने हँसक कहा—"बन्दना, इनम मेरा यथा-सर्वस्व है; और इसीपर द्विजूका सबसे ज्यादा लोभ है। यहीं तुम्हें सबसे ज्यादा पहरा देना होगा बेटी।"

बन्दनाके मुँहकी तरफ देखकर सतीने उसकी तरफसे कहा—"इतने बड़े कामका भार क्या इसपर सौंपा जा सकता है मा? बहुत ज्यादा रुपये-पैसेका मामला है—" उसकी बात पूरी भी न हो पाई कि दयामयी कहने लगीं—"बहुत ज्यादा रुपये-पैसेका मामला होनेसे ही तो इसके हाथमें चाबी सौंपी है बहू। नहीं तो द्विजू मुझे दिवालिया कर देगा।"

भी कम नहीं; बहू-बेटी और नाती-पोतोंको लेकर प्रत्येककी अलग-अलग गृहस्थी है। बाहरकी तरफ है कचहरी और उससे सम्बन्धित सब तरहकी व्यवस्था; परन्तु भीतरकी तरफ इस हिस्सेमें है ठाकुरद्वारा, रसोईघर, दयामयीकी विशाल गौ-शाला, ऊँची चहारदीवारीवाला बगीचा और उसके बीचमें तालाब। दुमंजिलेके पूरबकी तरफके कमरे दयामयीके हैं, उन्हींमेंसे एकके सामने ले जाकर बन्दनासे उन्होंने कहा—"बेटी, यह कमरा तुम्हारा है, इसका सारा भार तुमपर छोड़ती हूँ।"

उधरके बरामदेमें बैठी सती और मैत्रेयी कुछ चीजें बड़े ध्यानसे देख-भाल रही थीं, दयामयीकी आवाज़ सुनकर इधर देख उठीं; और बन्दनाको देखते ही दोनों काम छोड़कर उसके पास आकर खड़ी हो गईं। बन्दना सचमुच ही आयेगी, ऐसी आशा किसीको भी न थी। सतीके पाँव छूकर बन्दनाने मैत्रेयीको नमस्कार किया। माने कहा—"मेरी यह म्लेच्छ लड़की भी किसी कामका भार लेना चाहती है बहू, चुपचाप बैठी रहनेसे नाराज़ है। तुम लोगोंको बहुत-सा काम दे रखा है, इसे देती हूँ मैं अपने भण्डारकी चाबी।"

मैत्रेयीने पूछा—"भण्डारमें क्या है मा?"

माने कहा—"इसमें ऐसी चीज़ें हैं जिनको म्लेच्छ-लड़कीके छूनेपर भी छूत नहीं लगती।"—इतना कहकर दयामयीने कौतुककी हँसी हँसकर कमरा खोला और उसके भीतर जा खड़ी हुई। जमीनपर बहुतसे चाँदीके थाल रखे हुए थे—ब्राह्मण-पण्डितोंको विदाईमें देनेके लिए। एक जगह कलकत्तेसे भुनाकर मँगाये हुए रुपयों और अठन्नी-चौअन्नियोंका ढेर लगा हुआ था। कीमती रेशमी वस्त्रादि अभी तक ज्योंके त्यों बँधे पड़े हुए हैं—खोलकर देखनेका अवकाश ही नहीं मिला। इनके अलावा दयामयीकी अपनी आलमारी और सन्दूक भी इसी कमरेमें है। हाथसे सब दिखाते हुए उन्होंने हँसक कहा—"बन्दना, इनम मेरा यथा-सर्वस्व है; और इसीपर द्विजूका सबसे ज्यादा लोभ है। यहीं तुम्हें सबसे ज्यादा पहरा देना होगा बेटी।"

बन्दनाके मुँहकी तरफ देखकर सतीने उसकी तरफसे कहा—"इतने बड़े कामका भार क्या इसपर सौंपा जा सकता है मा? बहुत ज्यादा रुपये-पैसेका मामला है—" उसकी बात पूरी भी न हो पाई कि दयामयी कहने लगीं—"बहुत ज्यादा रुपये-पैसेका मामला होनेसे ही तो इसके हाथमें चाबी सौंपी है बहू। नहीं तो द्विजू मुझे दिवालिया कर देगा।"

सती और मैत्रेयी भी आ पहुँचीं, वन्दना भण्डारके दरवाजेमें ताला लगाकर पास आ खड़ी हुई, नाते-रिश्तेदारोंमेंसे भी बहुतसे स्त्री-पुरुष कुतूहली हो उठे। शशधरने आकर प्रणाम करते हुए कहा—"मा, हम लोग चल दिये। आनेके लिए आज्ञा दी थी हम लोग आ गये, पर टिक नहीं सके।"

"क्यों बेटा?"

"विप्रदास बाबूने अपने कमरेमेंसे मुझे निकाल दिया है।"

"इसकी वजह?"

"वजह शायद यही होगी कि वे बड़े आदमी हैं। मारे अहंकारके आँख-कानसे कुछ दिखाई सुनाई नहीं देता। सोचा होगा कि अपने घर बुलाकर अपमान करना आसान है। लेकिन अपने लड़केको ज़रा समझा दीजिएगा, मेरे बाप भी जमींदारी छोड़ गये हैं और वह निहायत छोटी भी नहीं है। मुझे भी भीख माँगके गुज़र नहीं करनी पड़ती।"

दयामयी व्याकुल होकर बोलीं—"विपिनको बुलवाती हूँ बेटा, क्या हुआ है पूछती हूँ। मेरा काम अभी पूरा नहीं हुआ है, ब्राह्मण-भोजन बाकी है, वैष्णव-भिक्षुकोंकी बिदाई भी अभी नहीं हुई है। उसके पहले ही अगर तुम लोग नाराज़ होके चले जाओगे शशधर, तो जिस तालाबकी अभी अभी प्रतिष्ठा हुई है उसीमें मैं डूब मरूँगी, यह तुम लोग निश्चयसे समझ लेना।"—कहते-कहते उनकी आँखोंमें आँसू भर आये।

सासुके आँसुओंसे विशेष कोई फल न हुआ। भद्र-सन्तान होते हुए भी शशधरकी आकृति और प्रकृति दोनोंमेंसे कोई भद्रोचित नहीं है। पास जाकर सटके खड़े होनेमें मन संकुचित हो उठता है। उसका विपुल शरीर और विपुलतर मुखमण्डल क्रुद्ध बिलावकी तरह फूलने लगा, बोला—"रह सकता हूँ, अगर विप्रदास बाबू यहाँ आकर सबके सामने हाथ जोड़कर मुझसे माफी माँगे। नहीं तो नहीं।"

उसका यह प्रस्ताव इतना अधिक अचिन्त्य और असंभव-सा था कि सुनकर सब आश्चर्यसे दंग रह गये। विप्रदास माफी माँगेगा हाथ जोड़के! और सबके सामने! कुछ देर तक सभी चुप रहे; सहसा आशंकासे जर्द चेहरेसे अत्यन्त विनयके साथ सती बोल उठी—"नन्दोईजी, अभी नहीं। काम-काज सब निबट जाने दो, रातको मा ज़रूर इसका फैसला कर देंगी। तुम्हारा अपमान

सती और मैत्रेयी भी आ पहुँचीं, वन्दना भण्डारके दरवाजेमें ताला लगाकर पास आ खड़ी हुई, नाते-रिश्तेदारोंमेंसे भी बहुतसे स्त्री-पुरुष कुतूहली हो उठे। शशधरने आकर प्रणाम करते हुए कहा—"मा, हम लोग चल दिये। आनेके लिए आज्ञा दी थी हम लोग आ गये, पर टिक नहीं सके।"

"क्यों बेटा?"

"विप्रदास बाबूने अपने कमरेमेंसे मुझे निकाल दिया है।"

"इसकी वजह?"

"वजह शायद यही होगी कि वे बड़े आदमी हैं। मारे अहंकारके आँख-कानसे कुछ दिखाई सुनाई नहीं देता। सोचा होगा कि अपने घर बुलाकर अपमान करना आसान है। लेकिन अपने लड़केको ज़रा समझा दीजिएगा, मेरे बाप भी जमींदारी छोड़ गये हैं और वह निहायत छोटी भी नहीं है। मुझे भी भीख माँगके गुज़र नहीं करनी पड़ती।"

दयामयी व्याकुल होकर बोलीं—"विपिनको बुलवाती हूँ बेटा, क्या हुआ है पूछती हूँ। मेरा काम अभी पूरा नहीं हुआ है, ब्राह्मण-भोजन बाकी है, वैष्णव-भिक्षुकोंकी बिदाई भी अभी नहीं हुई है। उसके पहले ही अगर तुम लोग नाराज़ होके चले जाओगे शशधर, तो जिस तालाबकी अभी अभी प्रतिष्ठा हुई है उसीमें मैं डूब मरूँगी, यह तुम लोग निश्चयसे समझ लेना।"—कहते-कहते उनकी आँखोंमें आँसू भर आये।

सासुके आँसुओंसे विशेष कोई फल न हुआ। भद्र-सन्तान होते हुए भी शशधरकी आकृति और प्रकृति दोनोंमेंसे कोई भद्रोचित नहीं है। पास जाकर सटके खड़े होनेमें मन संकुचित हो उठता है। उसका विपुल शरीर और विपुलतर मुखमण्डल क्रुद्ध बिलावकी तरह फूलने लगा, बोला—"रह सकता हूँ, अगर विप्रदास बाबू यहाँ आकर सबके सामने हाथ जोड़कर मुझसे माफी माँगे। नहीं तो नहीं।"

उसका यह प्रस्ताव इतना अधिक अचिन्त्य और असंभव-सा था कि सुनकर सब आश्चर्यसे दंग रह गये। विप्रदास माफी माँगेगा हाथ जोड़के! और सबके सामने! कुछ देर तक सभी चुप रहे; सहसा आशंकासे जर्द चेहरेसे अत्यन्त विनयके साथ सती बोल उठी—"नन्दोईजी, अभी नहीं। काम-काज सब निबट जाने दो, रातको मा ज़रूर इसका फैसला कर देंगी। तुम्हारा अपमान

भी वक्त नहीं। त्रास लज्जा और गहरे अपमानसे दयामयीकी कर्तव्य-बुद्धिपर परदा-सा पड़ गया। कुछ सोच न सकीं और डरती हुई बोलीं—" तुम ज़रा ठहरो बेटा, मैं विपिनको बुलवाती हूँ। मुझे ऐसा लगता है कि तुमसे कहीं-न-कहीं कोई जबरदस्त भूल हो गई है; पर इन घर-भरके सब लोगोंके बीच यह कलंक प्रकट हो जानेसे मुझे आत्महत्या करके मर जाना पड़ेगा बेटा। "

शशधरने कहा—" मैं खड़ा हूँ, बुलाइए उन्हें। विप्रदास बाबू झूठ ही कह दें कि यह काम उन्होंने नहीं किया। "

" झूठ वह बोलता नहीं शशधर। "—इतना कहकर दयामयीने विप्रदासको बुलवा भेजा। कोई पाँच मिनट बाद विप्रदास आके खड़ा हो गया। वैसा ही शान्त गम्भीर और आत्म-निमग्न। सिर्फ़ आँखोंमें एक तरहकी उदास क्लान्तिकी छाया झलक रही है,—उसके पीछे कौन-सी बात छिपी हुई है यह बताना कठिन है।

दयामयी उफनते हुए आवेगके साथ कह उठीं—" तेरे खिलाफ़ शशधर क्या बात कह रहा है विपिन? कहता है तैंने उसे अपने क़मरेमेंसे निकाल दिया है। यह क्या कभी सच हो सकता है? "

विप्रदासने कहा—" सच तो है ही मा। "

" कमरेसे सचमुच ही निकाल दिया है तैंने मेरे जमाईको? मेरे इस काम-काजके घरमें? "

" हाँ, सचमुच ही निकाल दिया है। कह दिया है कि आइन्दा फिर कभी मेरे कमरेमें न आवें। "

सुनकर दयामयी वज्राहतकी भाँति निस्पन्द हो गईं। कुछ देर बाद, उनका यह अभिभूत-भाव दूर होनेपर उन्होंने पूछा—" क्यों? "

" उसे तुम्हारा न सुनना ही अच्छा है मा। "

सती स्थिर न रह सकी, व्याकुल होकर बोल उठी—" हम लोग कोई भी सुनना नहीं चाहतीं, पर नन्दोईजी कल्याणीको लेकर इसी वक्त चले जाना चाहते हैं। इतने आदमियोंके बीच, ज़रा सोच देखो कि कितनी ज़बरदस्त फजीहत होगी,—इनसे कहो कि तुमसे अचानक अन्याय हो गया है, कहो इन लोगोंसे रहनेके लिए। "

भी वक्त नहीं। त्रास लज्जा और गहरे अपमानसे दयामयीकी कर्तव्य-बुद्धिपर परदा-सा पड़ गया। कुछ सोच न सकीं और डरती हुई बोलीं—" तुम ज़रा ठहरो बेटा, मैं विपिनको बुलवाती हूँ। मुझे ऐसा लगता है कि तुमसे कहीं-न-कहीं कोई जबरदस्त भूल हो गई है; पर इन घर-भरके सब लोगोंके बीच यह कलंक प्रकट हो जानेसे मुझे आत्महत्या करके मर जाना पड़ेगा बेटा।"

शशधरने कहा—" मैं खड़ा हूँ, बुलाइए उन्हें। विप्रदास बाबू झूठ ही कह दें कि यह काम उन्होंने नहीं किया।"

" झूठ वह बोलता नहीं शशधर।"—इतना कहकर दयामयीने विप्रदासको बुलवा भेजा। कोई पाँच मिनट बाद विप्रदास आके खड़ा हो गया। वैसा ही शान्त गम्भीर और आत्म-निमग्न। सिर्फ़ आँखोंमें एक तरहकी उदास क्लान्तिकी छाया झलक रही है,—उसके पीछे कौन-सी बात छिपी हुई है यह बताना कठिन है।

दयामयी उफनते हुए आवेगके साथ कह उठीं—" तेरे खिलाफ़ शशधर क्या बात कह रहा है विपिन? कहता है तैंने उसे अपने क़मरेमेंसे निकाल दिया है। यह क्या कभी सच हो सकता है?"

विप्रदासने कहा—" सच तो है ही मा।"

" कमरेसे सचमुच ही निकाल दिया है तैंने मेरे जमाईको? मेरे इस काम-काजके घरमें?"

" हाँ, सचमुच ही निकाल दिया है। कह दिया है कि आइन्दा फिर कभी मेरे कमरेमें न आवें।"

सुनकर दयामयी वज्राहतकी भाँति निस्पन्द हो गईं। कुछ देर बाद, उनका यह अभिभूत-भाव दूर होनेपर उन्होंने पूछा—" क्यों?"

" उसे तुम्हारा न सुनना ही अच्छा है मा।"

सती स्थिर न रह सकी, व्याकुल होकर बोल उठी—" हम लोग कोई भी सुनना नहीं चाहतीं, पर नन्दोईजी कल्याणीको लेकर इसी वक्त चले जाना चाहते हैं। इतने आदमियोंके बीच, ज़रा सोच देखो कि कितनी ज़बरदस्त फ़जीहत होगी,—इनसे कहो कि तुमसे अचानक अन्याय हो गया है, कहो इन लोगोंसे रहनेके लिए।"

और अभिमानके तूफानने उन्हें सामनेकी ओर ही ढकेल दिया, कटु कण्ठसे बोलीं—" यह तुम्हारी अन्यायपूर्ण जिद है विपिन, तुम्हारे लिए मैं लड़की-जमाईको जनम-भरके लिए पराया नहीं बना सकती बेटा। तुम्हारी जो इच्छा हो सो करो। शशधर, आओ तुम लोग मेरे साथ आओ,—उसकी बातपर ध्यान देनेकी ज़रूरत नहीं। मकान उसका अकेलेका नहीं है। "—इतना कहकर वे शशधर और कल्याणीको अपने साथ लेकर चली गईं। उनके पीछे पीछे गई मैत्रेयी, जैसे वह उन्हीं लोगोंकी अपनी कोई हो।

मालूम होने लगा था कि सतीका हृदय-मन अब बिलकुल चकनाचूर हो जायगा। किन्तु उसकी अचंचल दृढ़ता देखकर बन्दना और विप्रदास दोनों ही आश्चर्यसे दंग रह गये। उसकी आँखोंमें आँसू न थे, किन्तु चेहरा पीला-ज़र्द पड़ गया था, बोली—" नन्दोईजीने क्या किया है हम नहीं जानतीं, पर बिना कारण तुमने भी इतनी बड़ी वारदात न की होगी सो निश्चयसे जानती हूँ। सोच-विचार मत करो, अपने मनमें मैं तुम्हें रंचमात्र भी दोष न दूँगी। "

विप्रदास चुप रहा। सतीने पूछा—" तुम क्या आज ही चले जाओगे ?"

" नहीं, कल जाऊँगा। "

" अब न आओगे इस घरमें ? "

" इरादा तो नहीं है। "

" मैं ? वासू ? "

" जाना तुम लोगोंको भी होगा। कल न जा सको, और किसी दिन। "

" नहीं, और किसी दिन नहीं,—हम लोग भी कल जायेंगे। "—इतना कहकर सतीने बन्दनासे पूछा—" तू क्या करेगी बन्दना, कल ही जायेगी ? "

बन्दनाने कहा—" नहीं। मैंने तो झगड़ा नहीं किया जीजी, जो दल बाँधकर कल ही जाना पड़े ? "

सतीने कहा—" झगड़ा मैंने भी नहीं किया बन्दना, न इन्होंने किया है। पर जहाँ इनके लिए जगह नहीं है वहाँ मेरे लिए भी नहीं है। एक दिनके लिए भी नहीं। तेरा ब्याह हुआ होता तो इस बातको समझ जाती। "

बन्दनाने कहा—" ब्याह नहीं होने पर भी समझती हूँ जीजी, पतिके लिए जगह नहीं होती तो स्त्रीके लिए भी नहीं हो सकती। पर भूल तो होती ही

और अभिमानके तूफानने उन्हें सामनेकी ओर ही ढकेल दिया, कद्ध कण्ठसे बोलीं—" यह तुम्हारी अन्यायपूर्ण जिद है विपिन, तुम्हारे लिए मैं लड़की-जमाईको जनम-भरके लिए पराया नहीं बना सकती बेटा। तुम्हारी जो इच्छा हो सो करो। शशधर, आओ तुम लोग मेरे साथ आओ,—उसकी बातपर ध्यान देनेकी ज़रूरत नहीं। मकान उसका अकेलेका नहीं है। "—इतना कहकर वे शशधर और कल्याणीको अपने साथ लेकर चली गईं। उनके पीछे पीछे गई मैत्रेयी, जैसे वह उन्हीं लोगोंकी अपनी कोई हो।

मालूम होने लगा था कि सतीका हृदय-मन अब बिलकुल चकनाचूर हो जायगा। किन्तु उसकी अचंचल दृढ़ता देखकर बन्दना और विप्रदास दोनों ही आश्चर्यसे दंग रह गये। उसकी आँखोंमें आँसू न थे, किन्तु चेहरा पीला-जर्द पड़ गया था, बोली—" नन्दोईजीने क्या किया है हम नहीं जानतीं, पर बिना कारण तुमने भी इतनी बड़ी वारदात न की होगी सो निश्चयसे जानती हूँ। सोच-विचार मत करो, अपने मनमें मैं तुम्हें रंचमात्र भी दोष न दूँगी। "

विप्रदास चुप रहा। सतीने पूछा—" तुम क्या आज ही चले जाओगे ? "

" नहीं, कल जाऊँगा। "

" अब न आओगे इस घरमें ? "

" इरादा तो नहीं है। "

" मैं ? वासू ? "

" जाना तुम लोगोंको भी होगा। कल न जा सको, और किसी दिन। "

" नहीं, और किसी दिन नहीं,—हम लोग भी कल जायेंगे। "—इतना कहकर सतीने बन्दनासे पूछा—" तू क्या करेगी बन्दना, कल ही जायेगी ? "

बन्दनाने कहा—" नहीं। मैंने तो झगड़ा नहीं किया जीजी, जो दल बाँधकर कल ही जाना पड़े ? "

सतीने कहा—" झगड़ा मैंने भी नहीं किया बन्दना, न इन्होंने किया है। पर जहाँ इनके लिए जगह नहीं है वहाँ मेरे लिए भी नहीं है। एक दिनके लिए भी नहीं। तेरा ब्याह हुआ होता तो इस बातको समझ जाती। "

बन्दनाने कहा—" ब्याह नहीं होने पर भी समझती हूँ जीजी, पतिके लिए जगह नहीं होती तो स्त्रीके लिए भी नहीं हो सकती। पर भूल तो होती ही

पाषाण शिलापर उनका लेशमात्र भी दाग नहीं पड़ता। जगतमें वे अकेले हैं, किसीके अपने नहीं हैं वे,—संसारमें कोई उनका अपना नहीं हो सकता।"—यह कहकर आँखोंपर आँचल दबाकर वह वहाँसे चली गई।

× × ×

उस दिन काम-काज बहुत रात बीते खतम हुआ। इस घरकी सुशृंखलित धारामें कहीं भी कोई व्याघात नहीं हुआ। बाहरसे कोई जान ही न सका कि उस शृंखलाकी सबसे बड़ी कड़ी ही आज टूटकर चकनाचूर हो गई है। सवेरा होनेमें ज्यादा देर नहीं है। काम-काजसे थका हुआ विशाल भवन बिलकुल नीरव है,—जिसे जहाँ जगह मिल गई थी वह वहीं नींदमें पड़ा सो रहा है। भण्डारकी भारी जुम्मेदारी निभाकर बन्दना श्रान्त कदमोंसे अपने कमरेकी तरफ जा रही थी, उसकी निगाह पड़ गई कि उधरके बरामदेके पास द्विजदासके कमरेमें बत्ती जल रही है। दुविधा उठ खड़ी हुई कि इस समय वहाँ जाना उचित है या नहीं, किसीकी निगाह पड़ गई तो वह उसके साथ न्याय नहीं करेगा और निन्दा शायद सौ-सौ मुँहसे फैल जायगी; मगर फिर भी वह रुक न सकी, जिस उद्वेगने उसे दिन-भरसे चंचल और अशान्त कर रक्खा है वह उसे उसी ओर ढकेल ले गया। बन्द दरवाजेके सामने जाकर उसने पुकारा—"द्विजू बाबू, अभी तक जाग रहे हैं?"

भीतरसे जवाब आया—"हाँ। पर इतनी रातमें आप कैसे?"

"आ सकती हूँ?"

"बड़ी खुशीसे।"

बन्दनाने दरवाजा खोलकर भीतर जाकर देखा कि ढेरके ढेर कागजात लिये हुए द्विजदास बिस्तरपर बैठा हुआ है। उसने पूछा—"आजका हिसाब होगा? पर हिसाब तो भागा नहीं जा रहा द्विजू बाबू, इतनी रात जागनेसे तबीयत जो खराब हो जायगी?"

द्विजदासने कहा—"हो जाती तो जी जाता, इन सबको आँखोंसे न देखना पड़ता।"

"खर्च बहुत ज्यादा हो गया होगा? भाई साहबके सामने कैफियत देनी पड़ेगी क्या?"

द्विजदास कागजातोंको एक तरफ हटा-हुटूकर सीधा होके बैठ गया, बोला—

पाषाण शिलापर उनका लेशमात्र भी दाग नहीं पड़ता। जगतमें वे अकेले हैं, किसीके अपने नहीं हैं वे,—संसारमें कोई उनका अपना नहीं हो सकता।" —यह कहकर आँखोंपर आँचल दबाकर वह वहाँसे चली गई।

× × ×

उस दिन काम-काज बहुत रात बीते खतम हुआ। इस घरकी सुशृंखलित धारामें कहीं भी कोई व्याघात नहीं हुआ। बाहरसे कोई जान ही न सका कि उस शृंखलाकी सबसे बड़ी कड़ी ही आज टूटकर चकनाचूर हो गई है। सवेरा होनेमें ज्यादा देर नहीं है। काम-काजसे थका हुआ विशाल भवन बिलकुल नीरव है,—जिसे जहाँ जगह मिल गई थी वह वहीं नींदमें पड़ा सो रहा है। भण्डारकी भारी जुम्मेदारी निभाकर बन्दना श्रान्त कदमोंसे अपने कमरेकी तरफ जा रही थी, उसकी निगाह पड़ गई कि उधरके बरामदेके पास द्विजदासके कमरेमें बत्ती जल रही है। दुविधा उठ खड़ी हुई कि इस समय वहाँ जाना उचित है या नहीं, किसीकी निगाह पड़ गई तो वह उसके साथ न्याय नहीं करेगा और निन्दा शायद सौ-सौ मुँहसे फैल जायगी; मगर फिर भी वह रुक न सकी, जिस उद्वेगने उसे दिन-भरसे चंचल और अशान्त कर रक्खा है वह उसे उसी ओर ढकेल ले गया। बन्द दरवाजेके सामने जाकर उसने पुकारा—"द्विजू बाबू, अभी तक जाग रहे हैं?"

भीतरसे जवाब आया—"हाँ। पर इतनी रातमें आप कैसे?"

"आ सकती हूँ?"

"बड़ी खुशीसे।"

बन्दनाने दरवाजा खोलकर भीतर जाकर देखा कि ढेरके ढेर कागजात लिये हुए द्विजदास बिस्तरपर बैठा हुआ है। उसने पूछा—"आजका हिसाब होगा? पर हिसाब तो भागा नहीं जा रहा द्विजू बाबू, इतनी रात जागनेसे तबीयत जो खराब हो जायगी?"

द्विजदासने कहा—"हो जाती तो जी जाता, इन सबको आँखोंसे न देखना पड़ता।"

"खर्च बहुत ज्यादा हो गया होगा? भाई साहबके सामने कैफियत देनी पड़ेगी क्या?"

द्विजदास कागजातोंको एक तरफ हटा-हुटाकर सीधा होके बैठ गया, बोला—

मानती ही नहीं। जिसे रोना होता है वह रोता रहता है, पर अन्त उसका यहींपर है।"—क्षण-भर मौन रहकर फिर कहने लगा—"आप जानना चाहती हैं कारण? विस्तारसे तो मैं नहीं जानता, पर जितना जानता हूँ उसे सिर्फ आपको ही बताऊँगा, और सहायता अगर कभी माँगनी पड़ी तो आपसे ही माँगूँगा—फिर आप चाहे कहीं भी क्यों न रहें।"

"सिर्फ मुझसे ही क्यों?"

"उसका कारण यह है कि हाथ अगर पसारना ही पड़े तो महत्‌के आगे—यही शास्त्रका विधान है।"

"पर महत् क्या और कोई नहीं है?"

"शायद हो, पर मुझे उसका पता नहीं मालूम। भाई-साहबकी बात न छेड़ूँगा, पर हमेशाका अभ्यास था भाभीके आगे हाथ पसारनेका, वह रास्ता भी आज बन्द हो गया। आप उनकी बहन हैं, मेरा दावा उसी नातेसे है।"

"और मा?"

द्विजदासने कहा—"रथ जब तेजीसे चलता है तो मा उसकी असाधारण सारथी रहती हैं, पर पहिये जब कीचड़में धँस जाते हैं तो मा उस वक्त असहाय-निरुपाय हो जाती हैं। उतरकर वे उसे ढकेल नहीं सकतीं। उस बुरे वक्तपर जाऊँगा आपके पास,—देंगी भिक्षा?"

"भिक्षाका विषय बगैर जाने कैसे बताऊँ द्विजू बाबू?"

"सो तो मैं खुद भी नहीं जानता बन्दना; और सहजमें माँगने मैं भी न जाऊँगा। जब कहींसे भी कुछ न मिलेगा, तभी पहुँचूँगा आपके पास।"

बन्दना बहुत देर तक नीचेको सिर झुकाये बैठी रही, फिर मुँह उठाकर बोली—"जो मैंने जानना चाहा था, नहीं बतायेंगे?"

द्विजदासने कहा—"सब मुझे नहीं मालूम, जितना जानता हूँ वह भी शायद अभ्रान्त न हो। पर एक विषयमें मुझे कोई सन्देह नहीं कि भाई-साहब आज सर्वस्वान्त हो गये—उनके पास कुछ भी नहीं रहा, सब गया।"

बन्दना चौंक उठी, बोली—"मुखर्जी साहब आज सर्वस्वान्त हो गये! कैसे ऐसा हुआ द्विजू बाबू?"

द्विजदासने कहा—"बहुत ही आसानीसे और उस शशधरके षड्यंत्रसे। साहा-चौधरी-कम्पनीने अकस्मात् उस दिन दिवाला निकाल दिया और भाई-

मानती ही नहीं। जिसे रोना होता है वह रोता रहता है, पर अन्त उसका यहींपर है।"—क्षण-भर मौन रहकर फिर कहने लगा—"आप जानना चाहती हैं कारण ? विस्तारसे तो मैं नहीं जानता, पर जितना जानता हूँ उसे सिर्फ आपको ही बताऊँगा, और सहायता अगर कभी माँगनी पड़ी तो आपसे ही माँगूँगा—फिर आप चाहे कहीं भी क्यों न रहें।"

"सिर्फ मुझसे ही क्यों ?"

"उसका कारण यह है कि हाथ अगर पसारना ही पड़े तो महत्‌के आगे—यही शास्त्रका विधान है।"

"पर महत्‌ क्या और कोई नहीं है ?"

"शायद हो, पर मुझे उसका पता नहीं मालूम। भाई-साहबकी बात न छेड़ूँगा, पर हमेशाका अभ्यास था भाभीके आगे हाथ पसारनेका, वह रास्ता भी आज बन्द हो गया। आप उनकी बहन हैं, मेरा दावा उसी नातेसे है।"

"और मा ?"

द्विजदासने कहा—"रथ जब तेजीसे चलता है तो मा उसकी असाधारण सारथी रहती हैं, पर पहिये जब कीचड़में धँस जाते हैं तो मा उस वक्त असहाय-निरुपाय हो जाती हैं। उतरकर वे उसे ढकेल नहीं सकतीं। उस बुरे वक्तपर जाऊँगा आपके पास,—देंगी भिक्षा ?"

"भिक्षाका विषय बगैर जाने कैसे बताऊँ द्विजू बाबू ?"

"सो तो मैं खुद भी नहीं जानता बन्दना; और सहजमें माँगने मैं भी न जाऊँगा। जब कहींसे भी कुछ न मिलेगा, तभी पहुँचूँगा आपके पास।"

बन्दना बहुत देर तक नीचेको सिर झुकाये बैठी रही, फिर मुँह उठाकर बोली—"जो मैंने जानना चाहा था, नहीं बतायेंगे ?"

द्विजदासने कहा—"सब मुझे नहीं मालूम, जितना जानता हूँ वह भी शायद अभ्रान्त न हो। पर एक विषयमें मुझे कोई सन्देह नहीं कि भाई-साहब आज सर्वस्वान्त हो गये—उनके पास कुछ भी नहीं रहा, सब गया।"

बन्दना चौंक उठी, बोली—"मुखर्जी साहब आज सर्वस्वान्त हो गये ! कैसे ऐसा हुआ द्विजू बाबू ?"

द्विजदासने कहा—"बहुत ही आसानीसे और उस शशधरके षड्यंत्रसे। साहा-चौधरी-कम्पनीने अकस्मात् उस दिन दिवाला निकाल दिया और भाई-

ब्याह तुम्हींने किया था मेरा, आज बाल-बच्चोंको लेकर मैं भीख माँगती फिरूँगी और तुम अपनी आँखोंसे देखा करोगे ? मा देख सकती हैं, पर तुम ? ' जहाँ उनका धर्म है, जहाँ उनका विवेक और वैराग्य है, जहाँ वे हम सबसे बड़े हैं, कल्याणीने वहीं चोट की। भाई साहबने अभय देते हुए कहा, ' तू घर जा बहन, जो कुछ करना होगा मैं करूँगा। ' उसी अभय-मंत्रको जपते-जपते कल्याणी अपने घर चली गई। उसके बादका इतिहास संक्षिप्त है वन्दना। पर उधर तो देखो, सवेरा हो रहा है। "—कहते हुए उसने खुली हुई खिड़कीकी ओर उसकी दृष्टि आकर्षित की।

वन्दना उठके खड़ी हो गई, बोली—" और ये कागजात आपके कैसे हैं ?"

द्विजदासने कहा—" मेरे निर्भय रहनेके दस्तावेज हैं। आते वक्त भाई साहब अपने साथ लेते आये थे। पर मैं पूछता हूँ, आप भी क्या हम लोगोंको ऐसे ही छोड़कर आज ही चली जायेंगी ? "

" ठीक नहीं मालूम द्विजू बाबू। पर अब समय नहीं रहा, मैं जा रही हूँ। फिर मुलाकात होगी। "—इतना कहकर वन्दना धीरेसे वहाँसे चली आई।

× × ×

२४

अपनी जीजीको जबरदस्ती एक कुरसीपर बिठाकर वन्दना उसके पाँवोंमें महावर लगा रही थी। उसे यह मंगलाचार सिखाकर अन्नदा खुद न-जाने कहाँ छिप गई है। उसकी आँखें लाल-सुर्ख हो रही हैं, लगातार आँसू बहाते-बहाते आँखें सूज गई हैं। वन्दनाके पूछनेपर उसने संक्षेपमें कहा था—" बहूको मैं अपना मुँह नहीं दिखा सकूँगी। "

" तुम क्यों नहीं दिखा सकोगी अनु-दीदी, तुम्हें किस बातकी शरम है ? "

" मुझे शरम इस बातकी है कि इसके पहले ही मैं क्यों नहीं मर गई ? सिर्फ द्विजूको ही तो मैंने पाल-पोसकर इतना बड़ा नहीं किया जीजी-बाई, विपिनको भी किया है। उसकी मा जब मरी थी तो किसके हाथ सौंपा था उसने अपने दो-महीनेके नन्हें-से बच्चेको ? मेरे ही हाथों। उस दिन कहाँ थीं

ब्याह तुम्हींने किया था मेरा, आज बाल-बच्चोंको लेकर मैं भीख माँगती फिरूँगी और तुम अपनी आँखोंसे देखा करोगे ? मा देख सकती हैं, पर तुम ?' जहाँ उनका धर्म है, जहाँ उनका विवेक और वैराग्य है, जहाँ वे हम सबसे बड़े हैं, कल्याणीने वहीं चोट की। भाई साहबने अभय देते हुए कहा, 'तू घर जा बहन, जो कुछ करना होगा मैं करूँगा।' उसी अभय-मंत्रको जपते-जपते कल्याणी अपने घर चली गई। उसके बादका इतिहास संक्षिप्त है वन्दना। पर उधर तो देखो, सवेरा हो रहा है।"—कहते हुए उसने खुली हुई खिड़कीकी ओर उसकी दृष्टि आकर्षित की।

वन्दना उठके खड़ी हो गई, बोली—"और ये कागजात आपके कैसे हैं ?"

द्विजदासने कहा—"मेरे निर्भय रहनेके दस्तावेज हैं। आते वक्त भाई साहब अपने साथ लेते आये थे। पर मैं पूछता हूँ, आप भी क्या हम लोगोंको ऐसे ही छोड़कर आज ही चली जायेंगी ?"

"ठीक नहीं मालूम द्विजू बाबू। पर अब समय नहीं रहा, मैं जा रही हूँ। फिर मुलाकात होगी।"—इतना कहकर वन्दना धीरेसे वहाँसे चली आई।

× × ×

२४

अपनी जीजीको जबरदस्ती एक कुरसीपर बिठाकर वन्दना उसके पाँवोंमें महावर लगा रही थी। उसे यह मंगलाचार सिखाकर अन्नदा खुद न-जाने कहाँ छिप गई है। उसकी आँखें लाल-सुर्ख हो रही हैं, लगातार आँसू बहाते-बहाते आँखें सूज गई हैं। वन्दनाके पूछनेपर उसने संक्षेपमें कहा था—"बहूको मैं अपना मुँह नहीं दिखा सकूँगी।"

"तुम क्यों नहीं दिखा सकोगी अनु-दीदी, तुम्हें किस बातकी शरम है ?"

"मुझे शरम इस बातकी है कि इसके पहले ही मैं क्यों नहीं मर गई ? सिर्फ द्विजूको ही तो मैंने पाल-पोसकर इतना बड़ा नहीं किया जीजी-बाई, विपिनको भी किया है। उसकी मा जब मरी थी तो किसके हाथ सौंपा था उसने अपने दो-महीनेके नन्हें-से बच्चेको ? मेरे ही हाथों। उस दिन कहाँ थीं

आये जो लोग—आजके एक ही धक्केमें उन लोगोंको तुम भूल गई जीजी ? तुम्हारी सासु, तुम्हारे देवर, तुम्हारे घरके दासी-दास, आश्रित लोग, ठाकुरद्वारा, अतिथिशाला, गौशाला, गुरु-पुरोहित—इन सबका अभाव पूरा हो जायगा केवल पति और पुत्रसे ? और कोई नहीं है जीवनमें—सिर्फ यही हैं ?"

वन्दना कहने लगी—"यह किन लोगोंके मुँहकी बात है जानती हो जीजी, जिस समाजमें मैं पली-पनपी हूँ उन लोगोंके मुँहकी। तुम सोचती होगी कि पति-भक्तिकी यही अन्तिम बात है, स्त्रीके लिए इससे बढ़कर सोचनेकी और कोई बात नहीं। पर यह तुम्हारी भूल है। कलकत्ते चलो मेरी मौसीके घर, देखोगी—यह बात वहाँ पुरानी हुई पड़ी है—इससे ज्यादा वे सोचती भी नहीं, करती भी नहीं। इसपर तुर्रा यह कि—" कहते कहते वह रुक गई। उसे सहसा ऐसा लगा कि कोई शायद पीछे खड़ा है, मुँड़कर देखा तो द्विजदास है। कब वह पीछे आ खड़ा हुआ, दोनोंमेंसे किसीको मालूम नहीं पड़ा। शरमा कर वन्दना कुछ कहना ही चाहती थी कि द्विजदासने कहा—"डरनेकी कोई बात नहीं, न तो मैं आपकी मौसीको ही पहचानता हूँ और न उनके यहाँके औरोंको, आपकी बात उन लोगोंसे प्रकट नहीं करूँगा। पर असलमें आपसे गलती हो रही है। संसारमें पशु-पक्षियोंका भी दल होता है, उनके आचरणको किसी फारमूलामें बाँधा जा सकता है, पर आदमियोंका दल नहीं। एक साथ इस तरह औसत विचार उनके बारेमें नहीं किया जा सकता। सवेरेसे यही बात सोच रहा हूँ। मौसीके दलसे घसीटकर अनायास ही आपको भाईसाहबके दलमें दाखिल किया जा सकता है, और फिर दयामयीके दलसे निकालकर मजेसे उस मैत्रेयीको आपकी मौसीके दलमें चालान किया जा सकता है। मैं शर्त लगाके कह सकता हूँ कि कहीं भी रंचमात्र विपर्यय नहीं होनेका। वाह रे आदमीका मन! वाह रे उसकी प्रकृति!"

सतीने आश्चर्यके साथ पूछा—"इस बातके मानी क्या लालाजी ?"

द्विजदासने उससे ज्यादा आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा—"तुम्हारे सामने भी मानी ? द्विजूके काम और द्विजूकी बातके भी अगर मानी होने लगें भाभी, तो फिर अब तक दयामयी-विप्रदासके दरबारमें न जाकर तुम्हारे पास ही उसकी सब अर्जियाँ क्यों पेश होतीं भला ? मानी समझनेकी गरज तुम्हें नहीं है, इसी लिए तो ? आज तुम्हारे जानेके दिन भी उसे बना रहने दो भाभी, ठीक

आये जो लोग—आजके एक ही धक्केमें उन लोगोंको तुम भूल गईं जीजी ? तुम्हारी सासु, तुम्हारे देवर, तुम्हारे घरके दासी-दास, आश्रित लोग, ठाकुरद्वारा, अतिथिशाला, गौशाला, गुरु-पुरोहित—इन सबका अभाव पूरा हो जायगा केवल पति और पुत्रसे ? और कोई नहीं है जीवनमें—सिर्फ यही हैं ?"

वन्दना कहने लगी—"यह किन लोगोंके मुँहकी बात है जानती हो जीजी, जिस समाजमें मैं पली-पनपी हूँ उन लोगोंके मुँहकी। तुम सोचती होगी कि पति-भक्तिकी यही अन्तिम बात है, स्त्रीके लिए इससे बढ़कर सोचनेकी और कोई बात नहीं। पर यह तुम्हारी भूल है। कलकत्ते चलो मेरी मौसीके घर, देखोगी—यह बात वहाँ पुरानी हुई पड़ी है—इससे ज्यादा वे सोचती भी नहीं, करती भी नहीं। इसपर तुर्रा यह कि—" कहते कहते वह रुक गई। उसे सहसा ऐसा लगा कि कोई शायद पीछे खड़ा है, मुँड़कर देखा तो द्विजदास है। कब वह पीछे आ खड़ा हुआ, दोनोंमेंसे किसीको मालूम नहीं पड़ा। शरमा कर वन्दना कुछ कहना ही चाहती थी कि द्विजदासने कहा—"डरनेकी कोई बात नहीं, न तो मैं आपकी मौसीको ही पहचानता हूँ और न उनके यहाँके औरोंको, आपकी बात उन लोगोंसे प्रकट नहीं करूँगा। पर असलमें आपसे गलती हो रही है। संसारमें पशु-पक्षियोंका भी दल होता है, उनके आचरणको किसी फारमूलामें बाँधा जा सकता है, पर आदमियोंका दल नहीं। एक साथ इस तरह औसत विचार उनके बारेमें नहीं किया जा सकता। सवेरेसे यही बात सोच रहा हूँ। मौसीके दलसे घसीटकर अनायास ही आपको भाईसाहबके दलमें दाखिल किया जा सकता है, और फिर दयामयीके दलसे निकालकर मजेसे उस मैत्रेयीको आपकी मौसीके दलमें चालान किया जा सकता है। मैं शर्त लगाके कह सकता हूँ कि कहीं भी रंचमात्र विपर्यय नहीं होनेका। वाह रे आदमीका मन ! वाह रे उसकी प्रकृति !"

सतीने आश्चर्यके साथ पूछा—"इस बातके मानी क्या लालाजी ?"

द्विजदासने उससे ज्यादा आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा—"तुम्हारे सामने भी मानी ? द्विजूके काम और द्विजूकी बातके भी अगर मानी होने लगें भाभी, तो फिर अब तक दयामयी-विप्रदासके दरबारमें न जाकर तुम्हारे पास ही उसकी सब अर्जियाँ क्यों पेश होतीं भला ? मानी समझनेकी गरज तुम्हें नहीं है, इसी लिए तो ? आज तुम्हारे जानेके दिन भी उसे बना रहने दो भाभी, ठीक

फिर बन्दनासे कहा—" तू भी यहाँ अब देर न लगाना बहन, जितनी जल्दी हो सके बम्बई चली जाना। कलकत्ते जानेकी ज़रूरत नहीं, काकाजी वहाँ अकेले हैं, इसका खयाल रखना।"

बन्दनाने भी द्विजूकी तरह पाँवोंपर सिर रखकर प्रणाम किया, पाँवोंकी धूल लेकर माथेसे लगाई और कहा—" नहीं जीजी, मौसीके घर अब नहीं, उधरका पाठ खतम करके ही लौटी थी, उसे मैं नहीं भूलूँगी।"—कहते हुए उसने अपने आँचलसे आँखें पोंछी और फिर कहा—" शायद कल ही बम्बई रवाना हो जाऊँगी; मगर तुम भी जानेके पहले यह भरोसा देती जाओ जीजी, कि फिर जल्दी ही तुम लोगोंको देख सकूँ।"

सतीने मन-ही-मन क्या आशीर्वाद दिया सो वही जाने, हाथ उठाके उसकी ठोड़ी छूकर चुम्बन किया, और हँसते हुए कहा—" सो तो तेरे अपने हाथकी बात है बन्दना। काकाजीसे कहना जाकर कि तेरे ब्याहमें वे हमें निमंत्रण भेजें, जहाँ भी कहीं रहूँ जरूर पहुँच जाऊँगी।"—ज़रा ठहरकर, शायद मन-ही-मन यह सोचकर कि कहना ठीक है या नहीं, फिर कहा—" मेरी बड़ी-भारी साध थी कि इस घरमें ही तू आवे। लालाजीके हाथ तुझे सौंपकर और तेरे हाथों घर-गिरस्तीका भार—वासूका भार—सब सौंपकर माके साथ कैलास-यात्राको जाती, लौटती तो लौट आती, नहीं तो नहीं सही,—लेकिन, आदमी सोचता कुछ है, होता कुछ और ही है।"—इतना कहकर वह चुप हो गई। कुछ देर स्तब्ध रहकर फिर कहने लगी—" इस घरमें मैंने जो कुछ पाया था, संसारमें कोई उसे नहीं पाता। और सबसे ज्यादा पाया था मैंने अपनी सासको। पर उन्हींके साथ विच्छेद हो गया सबसे बढ़कर। जानेके पहले पाँव भी नहीं लग सकी, दरवाजा बन्द है, चौखटकी धूल माथेसे लगाकर कहा, 'मा, इस काठकी चौखटपर तुम्हारे पाँवोंकी धूल लगी हुई है, यही मेरे—" बात पूरी न कर सकी, कंठ रुक आया, अब तो वह बेकल हो टूट-फूट-सी गई, उसकी दोनों आँखोंसे दर-दर आँसुओंकी धार बह चली। दो-तीन मिनट अपनेको सम्हालनेमें लग गये, आँचलसे आँखें पोंछकर बोली—" और अनु-दीदीको भी ढूँढ़-ढूँढ़ हैरान हो गई, वह भी नहीं मिली। वह मेरी मासे भी बड़ी है बन्दना। हम लोगोंके चले जानेपर उससे कह तो देना तू, मैं उससे नाराज़ होके गई हूँ।"—फिर उसकी आँखें भर आईं। उसने आँचलसे आँखें पोंछ डालीं। उसने एक बिल्ली पाली थी, नाम रखा था

फिर वन्दनासे कहा—" तू भी यहाँ अब देर न लगाना बहन, जितनी जल्दी हो सके बम्बई चली जाना। कलकत्ते जानेकी ज़रूरत नहीं, काकाजी वहाँ अकेले हैं, इसका खयाल रखना।"

वन्दनाने भी द्विजूकी तरह पाँवोंपर सिर रखकर प्रणाम किया, पाँवोंकी धूल लेकर माथेसे लगाई और कहा—" नहीं जीजी, मौसीके घर अब नहीं, उधरका पाठ खतम करके ही लौटी थी, उसे मैं नहीं भूलूँगी।"—कहते हुए उसने अपने आँचलसे आँखें पोंछी और फिर कहा—" शायद कल ही बम्बई रवाना हो जाऊँगी; मगर तुम भी जानेके पहले यह भरोसा देती जाओ जीजी, कि फिर जल्दी ही तुम लोगोंको देख सकूँ।"

सतीने मन-ही-मन क्या आशीर्वाद दिया सो वही जाने, हाथ उठाके उसकी ठोड़ी छूकर चुम्बन किया, और हँसते हुए कहा—" सो तो तेरे अपने हाथकी बात है बन्दना। काकाजीसे कहना जाकर कि तेरे ब्याहमें वे हमें निमंत्रण भेजें, जहाँ भी कहीं रहूँ जरूर पहुँच जाऊँगी।"—ज़रा ठहरकर, शायद मन-ही-मन यह सोचकर कि कहना ठीक है या नहीं, फिर कहा—" मेरी बड़ी-भारी, साध थी कि इस घरमें ही तू आवे। लालाजीके हाथ तुझे सौंपकर और तेरे हाथों घर-गिरस्तीका भार—वासूका भार—सब सौंपकर माके साथ कैलास-यात्राको जाती, लौटती तो लौट आती, नहीं तो नहीं सही,—लेकिन, आदमी सोचता कुछ है, होता कुछ और ही है।"—इतना कहकर वह चुप हो गई। कुछ देर स्तब्ध रहकर फिर कहने लगी—" इस घरमें मैंने जो कुछ पाया था, संसारमें कोई उसे नहीं पाता। और सबसे ज्यादा पाया था मैंने अपनी सासको। पर उन्हींके साथ विच्छेद हो गया सबसे बढ़कर। जानेके पहले पाँव भी नहीं लग सकी, दरवाजा बन्द है, चौखटकी धूल माथेसे लगाकर कहा, 'मा, इस काठकी चौखटपर तुम्हारे पाँवोंकी धूल लगी हुई है, यही मेरे—" बात पूरी न कर सकी, कंठ रुक आया, अब तो वह बेकल हो टूट-फूट-सी गई, उसकी दोनों आँखोंसे दर-दर आँसुओंकी धार बह चली। दो-तीन मिनट अपनेको सम्हालनेमें लग गये, आँचलसे आँखें पोंछकर बोली—" और अनु-दीदीको भी ढूँढ़-ढूँढ़ हैरान हो गई, वह भी नहीं मिली। वह मेरी मासे भी बड़ी है बन्दना। हम लोगोंके चले जानेपर उससे कह तो देना तू, मैं उससे नाराज़ होके गई हूँ।"—फिर उसकी आँखें भर आई। उसने आँचलसे आँखें पोंछ डालीं। उसने एक बिल्ली पाली थी, नाम रखा था

ही दिनोंके मित्र और सखी-सहेलियाँ। किसी दिन किसी बहानेसे फिर कभी उसका इस गाँवमें आना संभव हो सकता है,—यह सोचा भी नहीं जा सकता। विचित्र है यह दुनिया,—न-जाने कितनी अद्भुत और अनसोची घटनाएँ यहाँ पलक मारते ही घट जाया करती हैं। एक-एक करके उस प्रथम दिनसे लेकर आज तककी सब बातें द्विजदासको याद आने लगीं। वही अचानक आना और फिर अचानक नाराज़ होकर चला जाना। बीचमें सिर्फ़ कुछ घंटोंकी बातचीत। उस दिन वन्दनाने हँसते हुए कहा था—"सिर्फ़ आँखोंका परिचय ही नहीं है द्विजू बाबू, नहीं तो, देवरके गुण-अवगुण लिख भेजनेमें जीजीने कभी आलस नहीं किया। मैं सब-कुछ जानती हूँ, आपके सम्बन्धमें मुझसे कोई बात छिपी नहीं है। जब-जब घर-भरके लोगोंको आपने जलाया-सताया है तब-तब उसकी सारी खबर पहुँचती रही है मेरे पास।" द्विजदासने पूछा था—"हम परस्पर कोई किसीको जानते नहीं, फिर भी आपके सामने मेरी बदनामी फैलानेमें सार्थकता क्या थी?" वन्दनाने हँसके जवाब दिया था—"शायद मैं समझती हूँ कि जीजीको असलमें आप देखे नहीं सुहाते,—यह उसीका बदला है।"

इसके बाद दोनों ने ही हँसके बातको परिहासमें रूपान्तरित कर दिया था; परन्तु उस दिन दोनोंमेंसे किसीने भी न सोचा था कि यह था सतीका द्विजूके प्रति वन्दनाका चित्त आकर्षित करनेका कौशल! शायद कभी अपनी बहनको अपने पास लाकर रख सके, शायद कभी उसके हाथ सौंपकर देवरको शासनमें लाया जा सके। परन्तु वैसा नहीं हुआ, उसकी मनकी कल्पना मनहीमें छिपी रह गई। आज भी दोनोंमें से कोई भी उन चिट्ठियोंके मानी न समझ सका।

द्विजदास सीधा ऊपर चला गया। परदा हटाकर भीतर जाकर देखा—वन्दनाकी गोदमें किताब खुली पड़ी है, पर वह खुद जंगलेके बाहर देखती हुई स्थिर बैठी है। एक पंक्ति भी पढ़ी होगी कि नहीं शक है। सब समझते हुए भी सिर्फ़ बात शुरू करनेकी गरजसे द्विजदासने पूछा—"कौनसी किताब पढ़ रही थीं?"

वन्दनाने किताब बन्द करके मेजपर रख दी, और वह खड़ी होकर पूछने लगी—आपको लौटनेमें इतनी देर कैसे हुई? कलकत्तेकी गाड़ी तो कभीकी चली गई होगी?"

ही दिनोंके मित्र और सखी-सहेलियाँ। किसी दिन किसी बहानेसे फिर कभी उसका इस गाँवमें आना संभव हो सकता है,—यह सोचा भी नहीं जा सकता। विचित्र है यह दुनिया,—न-जाने कितनी अद्भुत और अनसोची घटनाएँ यहाँ पलक मारते ही घट जाया करती हैं। एक-एक करके उस प्रथम दिनसे लेकर आज तककी सब बातें द्विजदासको याद आने लगीं। वही अचानक आना और फिर अचानक नाराज़ होकर चला जाना। बीचमें सिर्फ़ कुछ घंटोंकी बातचीत। उस दिन वन्दनाने हँसते हुए कहा था—"सिर्फ़ आँखोंका परिचय ही नहीं है द्विजू बाबू, नहीं तो, देवरके गुण-अवगुण लिख भेजनेमें जीजीने कभी आलस नहीं किया। मैं सब-कुछ जानती हूँ, आपके सम्बन्धमें मुझसे कोई बात छिपी नहीं है। जब-जब घर-भरके लोगोंको आपने जलाया-सताया है तब-तब उसकी सारी खबर पहुँचती रही है मेरे पास।" द्विजदासने पूछा था—"हम परस्पर कोई किसीको जानते नहीं, फिर भी आपके सामने मेरी बदनामी फैलानेमें सार्थकता क्या थी?" वन्दनाने हँसके जवाब दिया था—"शायद मैं समझती हूँ कि जीजीको असलमें आप देखे नहीं सुहाते,—यह उसीका बदला है।"

इसके बाद दोनों ने ही हँसके बातको परिहासमें रूपान्तरित कर दिया था; परन्तु उस दिन दोनोंमेंसे किसीने भी न सोचा था कि यह था सतीका द्विजूके प्रति वन्दनाका चित्त आकर्षित करनेका कौशल! शायद कभी अपनी बहनको अपने पास लाकर रख सके, शायद कभी उसके हाथ सौंपकर देवरको शासनमें लाया जा सके। परन्तु वैसा नहीं हुआ, उसकी मनकी कल्पना मनहीमें छिपी रह गई। आज भी दोनोंमें से कोई भी उन चिट्ठियोंके मानी न समझ सका।

द्विजदास सीधा ऊपर चला गया। परदा हटाकर भीतर जाकर देखा—वन्दनाकी गोदमें किताब खुली पड़ी है, पर वह खुद जंगलेके बाहर देखती हुई स्थिर बैठी है। एक पंक्ति भी पढ़ी होगी कि नहीं शक है। सब समझते हुए भी सिर्फ़ बात शुरू करनेकी गरजसे द्विजदासने पूछा—"कौनसी किताब पढ़ रही थीं?"

वन्दनाने किताब बन्द करके मेजपर रख दी, और वह खड़ी होकर पूछने लगी—आपको लौटनेमें इतनी देर कैसे हुई? कलकत्तेकी गाड़ी तो कमीकी चली गई होगी?"

परन्तु स्वाभाविक होनेसे ही मेरे लिए यह बड़ा-भारी संकट है कि इतनी बड़ी उलटी बात आदमीको समझाऊँ कैसे ?"

वन्दनाने यह नहीं कहा कि समझानेकी ऐसी ज़रूरत ही क्या है! दूसरी ओर मा-बापके विरुद्ध इतना बड़ा अभियोग सत्य हो सकता है, यह विश्वास करना भी उसके लिए कठिन है, ख़ासकर विप्रदासके विरुद्ध। किन्तु कोई तर्क न उठाकर वह चुप रह गई।

दूसरे ही क्षण अपने वक्तव्यको स्पष्टतर करनेके लिए द्विजदास खुद ही कहने लगा—"एक बातसे सान्त्वना है मुझे कि भाभी साथ हैं, नहीं तो भाई साहबके हाथ सौंपकर मुझे रत्तीभर भी शान्ति न रहती।"

वन्दनाने कहा—"आप तो निर्विकार हैं, बासुकी भलाई-बुराईसे आपको मतलब ही क्या? जो हो होता रहे न?"

सुनकर द्विजदासके चेहरेपर एक सुतीक्ष्ण वेदनाकी छाया-सी पड़ गई, किन्तु वह मौन रहा।

वन्दनाने कहा—"भाई साहबके प्रति गंभीर विश्वास और श्रद्धाकी बात एक दिन आपके अपने मुँहसे ही सुनी थी। वह भी क्या उन आँसुओंकी तरह ही पलक मारते सूख गई? या जो आदमी अपने दोषसे निःस्वया सर्वस्वान्त हो जाता है उसपर विश्वास नहीं किया जा सकता—आख़िर क्या यही आप कहना चाहते हैं?"

द्विजदास विस्मय और व्यथासे विह्वल आँखोंसे क्षण-भर उसकी ओर देखता रहा, फिर दोनों हाथ जोड़कर माथेसे लगाता हुआ आहिस्तेसे बोला—"नहीं, यह मैं नहीं कहना चाहता। मैं कह रहा था, प्यास बुझानेके लिए पानी माँगने कोई समुद्रके पास जाकर हाथ न फैलाये। पर, भाई साहबके संबंधमें अब और आलोचना रहने दो, बाहरवाले उसे नहीं समझेंगे"

इस बातसे वन्दनाको बड़ी-भारी भीतरी चोट पहुँची, पर प्रतिवादके लिए उसे कुछ ढूँढ़े नहीं मिला, वह स्तब्ध रह गई।

द्विजदासने अब बिलकुल दूसरी ही बात छेड़ी, उसने पूछा—"आप क्या कल ही बम्बई चली जायँगी?"

वन्दनाने कहा—"हाँ।"

"अशोक बाबू ही ले जायँगे?"

"हाँ, वे ही पहुँचा देंगे।"

परन्तु स्वाभाविक होनेसे ही मेरे लिए यह बड़ा-भारी संकट है कि इतनी बड़ी उलटी बात आदमीको समझाऊँ कैसे ?"

वन्दनाने यह नहीं कहा कि समझानेकी ऐसी ज़रूरत ही क्या है! दूसरी ओर मा-बापके विरुद्ध इतना बड़ा अभियोग सत्य हो सकता है, यह विश्वास करना भी उसके लिए कठिन है, खासकर विप्रदासके विरुद्ध। किन्तु कोई तर्क न उठाकर वह चुप रह गई।

दूसरे ही क्षण अपने वक्तव्यको स्पष्टतर करनेके लिए द्विजदास खुद ही कहने लगा—"एक बातसे सान्त्वना है मुझे कि भाभी साथ हैं, नहीं तो भाई साहबके हाथ सौंपकर मुझे रत्तीभर भी शान्ति न रहती।"

वन्दनाने कहा—"आप तो निर्विकार हैं, बासुकी भलाई-बुराईसे आपको मतलब ही क्या ? जो हो होता रहे न ?"

सुनकर द्विजदासके चेहरेपर एक सुतीक्ष्ण वेदनाकी छाया-सी पड़ गई, किन्तु वह मौन रहा।

वन्दनाने कहा—"भाई साहबके प्रति गंभीर विश्वास और श्रद्धाकी बात एक दिन आपके अपने मुँहसे ही सुनी थी। वह भी क्या उन आँसुओंकी तरह ही पलक मारते सूख गई ? या जो आदमी अपने दोषसे निःस्वया सर्वस्वान्त हो जाता है उसपर विश्वास नहीं किया जा सकता—आख़िर क्या यही आप कहना चाहते हैं ?"

द्विजदास विस्मय और व्यथासे विह्वल आँखोंसे क्षण-भर उसकी ओर देखता रहा, फिर दोनों हाथ जोड़कर माथेसे लगाता हुआ आहिस्तेसे बोला—"नहीं, यह मैं नहीं कहना चाहता। मैं कह रहा था, प्यास बुझानेके लिए पानी माँगने कोई समुद्रके पास जाकर हाथ न फैलाये। पर, भाई साहबके संबंधमें अब और आलोचना रहने दो, बाहरवाले उसे नहीं समझेंगे"

इस बातसे वन्दनाको बड़ी-भारी भीतरी चोट पहुँची, पर प्रतिवादके लिए उसे कुछ ढूँढ़े नहीं मिला, वह स्तब्ध रह गई।

द्विजदासने अब बिल्कुल दूसरी ही बात छेड़ी, उसने पूछा—"आप क्या कल ही बम्बई चली जायँगी ?"

वन्दनाने कहा—"हाँ।"

"अशोक बाबू ही ले जायँगे ?"

"हाँ, वे ही पहुँचा देंगे।"

संबंध नहीं कि जिससे ऐसी बात आप पूछ सकते हों। द्विजू बाबू, आप शिक्षित पुरुष हैं, ऐसा कुतूहल लज्जाजनक है।"

सुनके द्विजदास सचमुच ही लज्जित हो उठा, उसका चेहरा म्लान हो गया। बोला—"मुझसे गलती हो गई बन्दना। स्वभावसे मैं कुतूहली नहीं हूँ, दूसरोंकी बात जाननेका लोभ मुझमें बहुत कम है। मगर न जाने कैसे मुझे ऐसा लगता था कि संसारमें जो बात किसीसे भी नहीं कह सकता वह बात आपसे कह सकता हूँ। जिस विपत्तिमें और किसीको भी पुकारा नहीं जा सकता, आपको पुकार सकता हूँ। आप—"

उसकी बातके बीच में ही बन्दना हँस पड़ी, बोली—"पर अभी-अभी तो आप कह रहे थे कि भाई-साहबके विषयमें बाहरवालोंके साथ आलोचना आप नहीं करना चाहते। मैं तो ग़ैर ही हूँ, बिलकुल बाहरकी?"

द्विजदासने कहा—"अगर यही बात है, तो फिर आपने ही क्यों उनके संबंधमें मुझपर अश्रद्धाका आरोप लगाया? जानतीं नहीं आप, मेरे अन्दर क्या हो रहा है?"

बत्तीके प्रकाशमें स्पष्ट दिखाई दिया कि उसकी आँखोंकी कोरें आँसुओंसे भर आई हैं।

इतनेमें मैत्रेयीने कमरेमें प्रवेश किया। उसने कहा—"आप कब लौटे, हम लोगोंको तो कुछ मालूम ही नहीं पड़ा।"

द्विजदास मुड़कर खड़ा हो गया, बोला—"मालूम करनेकी कोई ज्यादा ज़रूरत थी क्या?"

मैत्रेयीने कहा—"यह खूब कहा! आपने कल नहीं खाया, आज भी नहीं खाया,—यह और किसीको मालूम हो या न हो, मुझे तो मालूम है। चलिए माके कमरेमें।"

"लेकिन माके कमरेका तो दरवाजा बन्द है।"

मैत्रेयीने कहा—"था तो बन्द ही, पर मैंने पीछा नहीं छोड़ा। सिर-धुन-धुनाकर दरवाजा खुलवा लिया है, उन्हें नहला-धुला दिया है, संध्या-पूजा भी करवा दी है, जबरदस्ती कुछ फल खिलाकर तब पिण्ड छोड़ा है। कह रही थीं—'द्विजू न खायगा तो मुझसे न खाया जायगा।' मैंने कहा—'सो नहीं होनेका मा, आपका यह हुकम मैं नहीं मान सकूँगी।' लेकिन तबसे हम सभी आपकी बाट देख रही हैं। चलिए, आपका खाना रख आई हूँ माके कमरेमें।"

संबंध नहीं कि जिससे ऐसी बात आप पूछ सकते हों। द्विजू बाबू, आप शिक्षित पुरुष हैं, ऐसा कुतूहल लज्जाजनक है।"

सुनके द्विजदास सचमुच ही लज्जित हो उठा, उसका चेहरा म्लान हो गया। बोला—"मुझसे गलती हो गई बन्दना। स्वभावसे मैं कुतूहली नहीं हूँ, दूसरोंकी बात जाननेका लोभ मुझमें बहुत कम है। मगर न जाने कैसे मुझे ऐसा लगता था कि संसारमें जो बात किसीसे भी नहीं कह सकता वह बात आपसे कह सकता हूँ। जिस विपत्तिमें और किसीको भी पुकारा नहीं जा सकता, आपको पुकार सकता हूँ। आप—"

उसकी बातके बीच में ही बन्दना हँस पड़ी, बोली—"पर अभी-अभी तो आप कह रहे थे कि भाई-साहबके विषयमें बाहरवालोंके साथ आलोचना आप नहीं करना चाहते। मैं तो ग़ैर ही हूँ, बिलकुल बाहरकी ?"

द्विजदासने कहा—"अगर यही बात है, तो फिर आपने ही क्यों उनके संबंधमें मुझपर अश्रद्धाका आरोप लगाया ? जानतीं नहीं आप, मेरे अन्दर क्या हो रहा है ?"

बत्तीके प्रकाशमें स्पष्ट दिखाई दिया कि उसकी आँखोंकी कोरें आँसुओंसे भर आई हैं।

इतनेमें मैत्रेयीने कमरेमें प्रवेश किया। उसने कहा—"आप कब लौटे, हम लोगोंको तो कुछ मालूम ही नहीं पड़ा।"

द्विजदास मुड़कर खड़ा हो गया, बोला—"मालूम करनेकी कोई ज्यादा ज़रूरत थी क्या ?"

मैत्रेयीने कहा—"यह खूब कहा ! आपने कल नहीं खाया, आज भी नहीं खाया,—यह और किसीको मालूम हो या न हो, मुझे तो मालूम है। चलिए माके कमरेमें।"

"लेकिन माके कमरेका तो दरवाजा बन्द है।"

मैत्रेयीने कहा—"था तो बन्द ही, पर मैंने पीछा नहीं छोड़ा। सिर-धुन-धुनाकर दरवाजा खुलवा लिया है, उन्हें नहला-धुला दिया है, संध्या-पूजा भी करवा दी है, जबरदस्ती कुछ फल खिलाकर तब पिण्ड छोड़ा है। कह रही थीं—'द्विजू न खायगा तो मुझसे न खाया जायगा।' मैंने कहा—'सो नहीं होनेका मा, आपका यह हुकम मैं नहीं मान सकूँगी।' लेकिन तबसे हम सभी आपकी बाट देख रही हैं। चलिए, आपका खाना रख आई हूँ माके कमरेमें।"

द्विजदासने कहा—" निबटारेका रास्ता अगर खुला था तो आपने कर क्यों नहीं लिया ?

" मैं कर लेता ? "—शशधरने अत्यन्त आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा—" यह कैसी बात है तुम्हारी ? मेरा अपमान तो किया उन्होंने और निबटारा मैं कर लेता ? सलाह तो बुरी नहीं ! "—कहकर वह जबरदस्ती खींच-खींचके हँसने लगा। उसकी हँसी रुकनेपर द्विजदासने कहा—" सलाह तो बुरी नहीं दी शशधर बाबू। औरतें कहा करती हैं पहाड़की ओट रहना,—सो भाई-साहब थे पहाड़, आप थे उनकी ओटमें। अब आमने-सामने खड़े होंगे हम और आप। मान-अपमानका खेल अभी खतम थोड़े ही हो गया है,—अभी तो शुरू ही हुआ है। "

" इसके मानी ? "

" मानी यही कि मैं आपका बाल्य-बन्धु विप्रदास नहीं हूँ,—मैं हूँ द्विजदास। "

शशधरके चेहरेकी हँसी धीरे-धीरे गायब हो गई, उसने भयंकर गम्भीर कण्ठसे पूछा—" तुम्हारी बातका अर्थ क्या है, ज़रा खुलासा करके तो कहो ?"

बड़े भाईके मित्र होनेके कारण शशधर द्वारा ' तुम ' कहे जानेपर भी द्विजदास उससे ' आप ' ही कहा करता था; बोला—" आपकी यह बात मैं मानता हूँ कि अर्थ आज स्पष्ट हो जाना ही अच्छा है। मेरे भाई-साहब उस श्रेणीके आदमी हैं जो सत्यकी रक्षाके लिए सर्वस्वान्त तक हो सकते हैं, आश्रितोंके लिए देहका मास तक काटके दे सकते हैं; उन जैसे लोगोंके ' आदर्श ' नामकी न-जाने कौनसी एक विचित्र चीज़ होती है जिसके लिए ऐसा काम नहीं जो वे न कर सकते हों,—वे लोग एक तरहके पागल हैं—इसीसे उनकी ऐसी दुर्दशा होती है। परन्तु मैं निहायत साधारण आदमी हूँ, मेरा आपके साथ ज्यादा प्रभेद नहीं है। ठीक आप ही की तरह मेरे ईर्ष्या है, घृणा है, बदला लेनेके शैतानी बुद्धि भी है, लिहाजा भाई-साहबको आपने धोखा देकर ठगा होगा तो मैं भी आपको ठगूँगा, उनके नामसे जालसाजी की होगी तो मैं भी आपको आरामसे जेलकी हवा खिलवाऊँगा,—कमसे कम कोशिश करनेमें कोई त्रुटि न रखूँगा जब तक कि दोनों पक्ष ही राहके भिखारी नहीं हो जाते। विज्ञ-जनोंके मुँहसे सुना है कि ऐसी ही शायद इसकी परिणति है। सो अब वही होने दो। "

द्विजदासने कहा—“ निबटारेका रास्ता अगर खुला था तो आपने कर क्यों नहीं लिया ?

“ मैं कर लेता ? ”—शशधरने अत्यन्त आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा—“ यह कैसी बात है तुम्हारी ? मेरा अपमान तो किया उन्होंने और निबटारा मैं कर लेता ? सलाह तो बुरी नहीं ! ”—कहकर वह जबरदस्ती खींच-खींचके हँसने लगा। उसकी हँसी रुकनेपर द्विजदासने कहा—“ सलाह तो बुरी नहीं दी शशधर बाबू। औरतें कहा करती हैं पहाड़की ओट रहना,—सो भाई-साहब थे पहाड़, आप थे उनकी ओटमें। अब आमने-सामने खड़े होंगे हम और आप। मान-अपमानका खेल अभी खतम थोड़े ही हो गया है,—अभी तो शुरू ही हुआ है। ”

“ इसके मानी ? ”

“ मानी यही कि मैं आपका बाल्य-बन्धु विप्रदास नहीं हूँ,—मैं हूँ द्विजदास। ”

शशधरके चेहरेकी हँसी धीरे-धीरे गायब हो गई, उसने भयंकर गम्भीर कण्ठसे पूछा—“ तुम्हारी बातका अर्थ क्या है, ज़रा खुलासा करके तो कहो ?”

बड़े भाईके मित्र होनेके कारण शशधर द्वारा ‘ तुम ’ कहे जानेपर भी द्विजदास उससे ‘ आप ’ ही कहा करता था; बोला—“ आपकी यह बात मैं मानता हूँ कि अर्थ आज स्पष्ट हो जाना ही अच्छा है। मेरे भाई-साहब उस श्रेणीके आदमी हैं जो सत्यकी रक्षाके लिए सर्वस्वान्त तक हो सकते हैं, आश्रितोंके लिए देहका मास तक काटके दे सकते हैं; उन जैसे लोगोंके ‘ आदर्श ’ नामकी न-जाने कौनसी एक विचित्र चीज़ होती है जिसके लिए ऐसा काम नहीं जो वे न कर सकते हों,—वे लोग एक तरहके पागल हैं—इसीसे उनकी ऐसी दुर्दशा होती है। परन्तु मैं निहायत साधारण आदमी हूँ, मेरा आपके साथ ज्यादा प्रभेद नहीं है। ठीक आप ही की तरह मेरे ईर्ष्या है, घृणा है, बदला लेनेके शैतानी बुद्धि भी है, लिहाजा भाई-साहबको आपने धोखा देकर ठगा होगा तो मैं भी आपको ठगूँगा, उनके नामसे जालसाजी की होगी तो मैं भी आपको आरामसे जेलकी हवा खिलवाऊँगा,—कमसे कम कोशिश करनेमें कोई त्रुटि न रक्खूँगा जब तक कि दोनों पक्ष ही राहके भिखारी नहीं हो जाते। विज्ञ-जनोंके मुँहसे सुना है कि ऐसी ही शायद इसकी परिणति है। सो अब वही होने दो। ”

मैत्रेयी वहाँ आई; उसके हाथमें परोसी हुई थाली थी, बोली—" फिरसे सब खाना बनाके लाई हूँ, खाने बैठिए। इसी कमरेमें पाटा लगा दूँ ? "

" यह आपसे किसने कहा ? "

" किसीने नहीं। कलसे आपने कुछ खाया-पीया नहीं, सो क्या मैं नहीं जानती ? "

" इतने लोगोंके रहते हुए आपको जाननेकी आवश्यकता ? "

मैत्रेयी सिर झुकाये चुपचाप खड़ी रही। जवाब न पाकर द्विजदासने कहा— " अच्छा, वहीं रख दीजिए। अभी भूख नहीं है, अगर लगी तो बादमें खा लूँगा। "

मैत्रेयी एक किनारेसे पाटा लगाकर, उसपर थाली रखकर, जतनके साथ सब ढाक-ढूककर वहाँसे चली गई। उसने ज्यादा आग्रह नहीं किया, यह भी नहीं कहा कि ठंडा हो जानेसे खाना अच्छा नहीं लगेगा।

रातके क़रीब बारह बजे होंगे, द्विजदास कुरसी छोड़कर उठ खड़ा हुआ। मामूली थोड़ा-सा खा-पीकर सो जाऊँ—यह सोचकर हाथ-मुँह धोनेके लिए जैसे ही बाहर गया, देखा कि दरवाजेके पास कोई खड़ा है। बरामदेमें बहुत कम प्रकाश था, पहचान न सकनेसे उसने पूछा—" कौन ? "

" मैं हूँ मैत्रेयी। "

द्विजदासके आश्चर्यकी सीमा न रही, बोला—" इतनी रातको आप यहाँ क्यों ? "

" खाते वक्त किसी चीज़की अगर ज़रूरत पड़ गई—इसीसे बैठी हूँ। "

" यह आपकी बहुत ज्यादती है। पहले तो जरूरत ही नहीं पड़ती और पड़ती भी तो क्या घरमें और कोई नहीं है ? "

मैत्रेयीने मृदु कंठसे कहा—" कई दिनोंके निरन्तर परिश्रमसे सब थके हुए हैं। कोई जाग नहीं रहा है, सब सो गये। "

द्विजदासने कहा—" आपने खुद भी तो कम मेहनत नहीं की है, तो फिर आप क्यों नहीं सोईं ? "

मैत्रेयीने कोई जवाब नहीं दिया, चुप रही।

द्विजदासका अपेक्षाकृत रूखा स्वर अब बहुत-कुछ मुलायम हो आया, बोला—" इस तरह बैठा रहना भद्दा दिखाई देता है। आप भीतर चलके

मैत्रेयी वहाँ आई; उसके हाथमें परोसी हुई थाली थी, बोली—" फिरसे सब खाना बनाके लाई हूँ, खाने बैठिए। इसी कमरेमें पाटा लगा दूँ ? "

" यह आपसे किसने कहा ? "

" किसीने नहीं। कलसे आपने कुछ खाया-पीया नहीं, सो क्या मैं नहीं जानती ? "

" इतने लोगोंके रहते हुए आपको जाननेकी आवश्यकता ? "

मैत्रेयी सिर झुकाये चुपचाप खड़ी रही। जवाब न पाकर द्विजदासने कहा—" अच्छा, वहीं रख दीजिए। अभी भूख नहीं है, अगर लगी तो बादमें खा लूँगा। "

मैत्रेयी एक किनारेसे पाटा लगाकर, उसपर थाली रखकर, जतनके साथ सब ढाक-ढूककर वहाँसे चली गई। उसने ज्यादा आग्रह नहीं किया, यह भी नहीं कहा कि ठंडा हो जानेसे खाना अच्छा नहीं लगेगा।

रातके करीब बारह बजे होंगे, द्विजदास कुरसी छोड़कर उठ खड़ा हुआ। मामूली थोड़ा-सा खा-पीकर सो जाऊँ—यह सोचकर हाथ-मुँह धोनेके लिए जैसे ही बाहर गया, देखा कि दरवाजेके पास कोई खड़ा है। बरामदेमें बहुत कम प्रकाश था, पहचान न सकनेसे उसने पूछा—" कौन ? "

" मैं हूँ मैत्रेयी। "

द्विजदासके आश्चर्यकी सीमा न रही, बोला—" इतनी रातको आप यहाँ क्यों ? "

" खाते वक्त किसी चीज़की अगर ज़रूरत पड़ गई—इसीसे बैठी हूँ। "

" यह आपकी बहुत ज्यादती है। पहले तो जरूरत ही नहीं पड़ती और पड़ती भी तो क्या घरमें और कोई नहीं है ? "

मैत्रेयीने मृदु कंठसे कहा—" कई दिनोंके निरन्तर परिश्रमसे सब थके हुए हैं। कोई जाग नहीं रहा है, सब सो गये। "

द्विजदासने कहा—" आपने खुद भी तो कम मेहनत नहीं की है, तो फिर आप क्यों नहीं सोईं ? "

मैत्रेयीने कोई जवाब नहीं दिया, चुप रही।

द्विजदासका अपेक्षाकृत रूखा स्वर अब बहुत-कुछ मुलायम हो आया, बोला—" इस तरह बैठा रहना भद्दा दिखाई देता है। आप भीतर चलके

मैत्रेयीने कहा—“ उसे और क्या हो गया ? वह भी क्या बगैर-खाये है ? ”
अब तक मैत्रेयीकी बातें उसे बहुत अच्छी लग रही थीं, एक तरहकी प्रसन्नताकी हवा इस दुःखमें भी मानो उसके मनको कुछ-कुछ स्पर्श कर जाती थी, परन्तु इस अन्तकी बातसे उसका चित्त एक क्षणमें विरूप हो उठा, बोला—“ अनु-दीदीके बारेमें इस तरह बात नहीं की जाती । शायद सुन रखा होगा कि वे हमारे यहाँकी दासी हैं, पर इस घरमें उनसे बढ़कर मेरा और कोई नहीं है । हम लोगोंको पाल-पोसकर उन्हींने इतना बड़ा किया है । ”

मैत्रेयीने कहा—“ सो सुना है । पर ऐसे तो कितने ही घरानोंमें पुरानी दासियाँ लड़के-बालोंको पालती-पोसती हैं । इसमें नई बात कानसी है ? अच्छा, आपका भोजन हो चुकनेपर मैं उनकी खबर लूँगी । ”

द्विजदास जवाब बगैर दिये क्षण-भर उसके मुँहकी ओर देखता रहा । सहसा उसे ऐसा लगा कि ठीक ही तो है, ऐसा तो कितने ही परिवारोंमें हुआ करता है । जो भीतरकी बात नहीं जानता उसके निकट सिर्फ़ बाहरकी घटनामें अत्यन्त आश्चर्यकी बात इसमें क्या है ? उसकी कठोर विचारधारा हलकी हो आई । बोला—“ अनु-दीदीने न भी खाया हो तो इतनी रात बीते वे न खायेंगी । उनके लिए लिए आज चिन्ता करनेकी ज़रूरत नहीं । ”

फिर कई मिनट तक कोई कुछ न बोला । द्विजदासने पूछा—“ मैत्रेयी, ग़ैरोंकी इस तरह सेवा करना तुमने सीखा किससे ? अपनी मासे ? ”

मैत्रेयीने कहा—“ नहीं तो, अपनी जीजीसे । उनके समान पतिकी सेवा करते हुए मैंने किसीको नहीं देखा । ”

द्विजदासने हँसके कहा—“ पति क्या ग़ैर हुआ करते हैं ? मैं ग़ैरोंकी सेवा करनेकी बात पूछ रहा था ? ”

“ ओह—ग़ैरोंकी ? ”—कहकर तुरत ही मैत्रेयीने हँसके शरमाके मुँह नीचे झुका लिया ।

द्विजदासने कहा—“ अच्छा खैर, कहो, अपनी जीजीकी ही बात कहो । ”

मैत्रेयीने कहा—जीजी अब जीती नहीं हैं । तीन साल हुए, एक लड़का और दो लड़कियाँ छोड़के मर गई हैं । चौधरी-साहबने साल-भर भी धीरज नहीं धरा, फिर ब्याह कर लिया है । कितना बड़ा अन्याय है बताइए तो ? ”

द्विजदासने कहा—“ पुरुष ऐसा ही किया करते हैं । वे इसे अन्याय नहीं मानते । ”

मैत्रेयीने कहा—"उसे और क्या हो गया ? वह भी क्या बगैर-खाये है ?"

अब तक मैत्रेयीकी बातें उसे बहुत अच्छी लग रही थीं, एक तरहकी प्रसन्नताकी हवा इस दुःखमें भी मानो उसके मनको कुछ-कुछ स्पर्श कर जाती थी, परन्तु इस अन्तकी बातसे उसका चित्त एक क्षणमें विरूप हो उठा, बोला—"अनु-दीदीके बारेमें इस तरह बात नहीं की जाती। शायद सुन रखा होगा कि वे हमारे यहाँकी दासी हैं, पर इस घरमें उनसे बढ़कर मेरा और कोई नहीं है। हम लोगोंको पाल-पोसकर उन्हींने इतना बड़ा किया है।"

मैत्रेयीने कहा—"सो सुना है। पर ऐसे तो कितने ही घरानोंमें पुरानी दासियाँ लड़के-बालोंको पालती-पोसती हैं। इसमें नई बात कानसी है ? अच्छा, आपका भोजन हो चुकनेपर मैं उनकी खबर लूँगी।"

द्विजदास जवाब बगैर दिये क्षण-भर उसके मुँहकी ओर देखता रहा। सहसा उसे ऐसा लगा कि ठीक ही तो है, ऐसा तो कितने ही परिवारोंमें हुआ करता है। जो भीतरकी बात नहीं जानता उसके निकट सिर्फ़ बाहरकी घटनामें अत्यन्त आश्चर्यकी बात इसमें क्या है ? उसकी कठोर विचारधारा हलकी हो आई। बोला—"अनु-दीदीने न भी खाया हो तो इतनी रात बीते वे न खायेंगी। उनके लिए लिए आज चिन्ता करनेकी ज़रूरत नहीं।"

फिर कई मिनट तक कोई कुछ न बोला। द्विजदासने पूछा—"मैत्रेयी, गैरोंकी इस तरह सेवा करना तुमने सीखा किससे ? अपनी मासे ?"

मैत्रेयीने कहा—"नहीं तो, अपनी जीजीसे। उनके समान पतिकी सेवा करते हुए मैंने किसीको नहीं देखा।"

द्विजदासने हँसके कहा—"पति क्या ग़ैर हुआ करते हैं ? मैं ग़ैरोंकी सेवा करनेकी बात पूछ रहा था ?"

"ओह—ग़ैरोंकी ?"—कहकर तुरत ही मैत्रेयीने हँसके शरमाके मुँह नीचे झुका लिया।

द्विजदासने कहा—"अच्छा ख़ैर, कहो, अपनी जीजीकी ही बात कहो।"

मैत्रेयीने कहा—जीजी अब जीती नहीं हैं। तीन साल हुए, एक लड़का और दो लड़कियाँ छोड़के मर गई हैं। चौधरी-साहबने साल-भर भी धीरज नहीं धरा, फिर ब्याह कर लिया है। कितना बड़ा अन्याय है बताइए तो ?"

द्विजदासने कहा—"पुरुष ऐसा ही किया करते हैं। वे इसे अन्याय नहीं मानते।"

परिवारमें महादुःख आ गया यह सच है, मगर फिर भी मैं जानता हूँ कि तुम्हारी यह बात साधारण स्त्रियोंके अति तुच्छ सांसारिक हिसाबसे बढ़कर और कुछ नहीं है।" इतना कहनेके बाद ही वह उठ खड़ा हुआ। उसका खाना समाप्त हो चुका था।

दूसरे दिन दोपहर-भर वह घर नहीं रहा, किस कामसे कहाँ चला गया था सो वही जाने। संध्याके अँधेरेमें चुपचाप वह घर वापस आया और सीधा वन्दनाके कमरेके सामने जा खड़ा हुआ, आवाज दी—"भीतर आ सकता हूँ?"

"कौन, द्विजू बाबू? आइए आइए।"

द्विजदासने भीतर जाकर देखा—वन्दनाने अपना बकस-अकस सम्हालकर तैयार कर लिया है, सफरकी तैयारियाँ लगभग पूरी हो चुकी हैं। बोला—सचमुच ही चल दीं, ऐं? एक दिन भी ज्यादा नहीं रखा जा सका?"

उसके चेहरेकी तरफ देखकर वन्दनाकी इच्छा नहीं हुई कि कुछ कहे, फिर भी कहना ही पड़ा—"जाना तो होगा ही, एक-आध रोज ज्यादा रखके लाभ क्या है बताइए?"

द्विजदासने कहा—"लाभकी बात तो मैंने सोची नहीं, सिर्फ सोचता हूँ—सभी चले जा रहे हैं, इतने बड़े घरमें मेरा अब कोई मित्र-बन्धु नहीं रह गया।"

वन्दनाने कहा—"पुराने मित्र जाते हैं और नये आते हैं—ऐसा ही संसारका नियम है द्विजू बाबू, उसी आशापर धीरज धरके रहना पड़ता है,—चंचल होनेसे काम नहीं चलता।"

द्विजदासने जवाब नहीं दिया, चुप रहा।

वन्दनाने कहा—"समय ज्यादा नहीं है, कामकी बातें दो-एक कह लूँ। सुना होगा शायद, शशधर बाबू कल्याणीको लेकर चले गये हैं।"

"नहीं, सुना तो नहीं, पर अनुमान कर लिया था।"

"जाते वक्त एक बूँद पानी भी उन्हें कोई नहीं पिला सका। दोनोंने आके माको प्रणाम करके कहा—'हम लोग जा रहे हैं।' माने कहा—'जाओ।' फिर दूसरी ओर मुँह फेरे रहीं।"—इतना कहकर वन्दना चुप हो गई। जिस वजहसे उन लोगोंको जाना पड़ रहा है, माके सामने द्विजूने कल रातको जो बातें कही थीं उनका उल्लेख तक नहीं किया।

कुछ क्षण मौन रहकर वह फिर कहने लगी—"मा बहुत ज्यादा मुरझा गई हैं। देखनेसे करुणा आती है,—लज्जाके मारे किसीके आगे मानो उनसे मुँह

परिवारमें महादुःख आ गया यह सच है, मगर फिर भी मैं जानता हूँ कि तुम्हारी यह बात साधारण स्त्रियोंके अति तुच्छ सांसारिक हिसाबसे बढ़कर और कुछ नहीं है।" इतना कहनेके बाद ही वह उठ खड़ा हुआ। उसका खाना समाप्त हो चुका था।

दूसरे दिन दोपहर-भर वह घर नहीं रहा, किस कामसे कहाँ चला गया था सो वही जाने। संध्याके अँधेरेमें चुपचाप वह घर वापस आया और सीधा वन्दनाके कमरेके सामने जा खड़ा हुआ, आवाज दी—"भीतर आ सकता हूँ?"

"कौन, द्विजू बाबू? आइए आइए।"

द्विजदासने भीतर जाकर देखा—वन्दनाने अपना बकस-अकस सम्हालकर तैयार कर लिया है, सफरकी तैयारियाँ लगभग पूरी हो चुकी हैं। बोला—सचमुच ही चल दीं, ऐं? एक दिन भी ज्यादा नहीं रखा जा सका?"

उसके चेहरेकी तरफ देखकर वन्दनाकी इच्छा नहीं हुई कि कुछ कहे, फिर भी कहना ही पड़ा—"जाना तो होगा ही, एक-आध रोज ज्यादा रखके लाभ क्या है बताइए?"

द्विजदासने कहा—"लाभकी बात तो मैंने सोची नहीं, सिर्फ सोचता हूँ—सभी चले जा रहे हैं, इतने बड़े घरमें मेरा अब कोई मित्र-बन्धु नहीं रह गया।"

वन्दनाने कहा—"पुराने मित्र जाते हैं और नये आते हैं—ऐसा ही संसारका नियम है द्विजू बाबू, उसी आशापर धीरज धरके रहना पड़ता है,—चंचल होनेसे काम नहीं चलता।"

द्विजदासने जवाब नहीं दिया, चुप रहा।

वन्दनाने कहा—"समय ज्यादा नहीं है, कामकी बातें दो-एक कह दूँ। सुना होगा शायद, शशधर बाबू कल्याणीको लेकर चले गये हैं।"

"नहीं, सुना तो नहीं, पर अनुमान कर लिया था।"

"जाते वक्त एक बूँद पानी भी उन्हें कोई नहीं पिला सका। दोनोंने आके माको प्रणाम करके कहा—'हम लोग जा रहे हैं।' माने कहा—'जाओ।' फिर दूसरी ओर मुँह फेरे रहीं।"—इतना कहकर वन्दना चुप हो गई। जिस वजहसे उन लोगोंको जाना पड़ रहा है, माके सामने द्विजूने कल रातको जो बातें कही थीं उनका उल्लेख तक नहीं किया।

कुछ क्षण मौन रहकर वह फिर कहने लगी—"मा बहुत ज्यादा मुरझा गई हैं। देखनेसे करुणा आती है,—लज्जाके मारे किसीके आगे मानो उनसे मुँह

सभी तरहके दुःख अपना सकता हूँ, पर उनके कार्योंका बोझ भला कैसे ढोऊँगा ?—साहस नहीं होता। उन्हीं सबको देखने आज बाहर गया था। उनका स्कूल, उनका विद्यालय, उनकी संस्कृत-पाठशाला, मुसलमानोंके लिए स्थापित मकतब या मदरसे,—और वे भी क्या दो-एक हैं ? बहुतसे हैं। किसान रिआयाकी आब-पाशीके लिए एक नहर खुदाई जा रही है, बहुत दिनों तक उसके लिए रुपये जुटाने पड़ेंगे। कागजोंमें एक लम्बी सूची मिली है मुझे—उसमें सिर्फ दानके आँकड़े हैं। वे लोग जब माँगने आयंगे तो मैं क्या कहूँगा, कुछ समझमें नहीं आता।"

बन्दनाने कहा—"कहिएगा उन्हें, मिलेगा। उन्हें देना ही होगा। पर एक बात पूछती हूँ आपसे, क्या अब तक उन्होंने इस बारेमें किसीसे कुछ कहा सुना नहीं ?"

"नहीं।"

"इसकी वजह ?"

द्विजदासने कहा—"सुकृत गोपन करनेके लिए नहीं; किन्तु कहते भी तो किससे ? संसारमें उनका बन्धु तो कोई था नहीं। जब-जब दुःख आया है उसे अकेले ही झेला है, और जब आनन्द आया है उसका भी अकले ही उपभोग किया है। अथवा जताया हो तो उनके उस एकमात्र बन्धुको।"—कहते हुए उसने ऊपरकी ओर देखा, और फिर कहने लगा—"पर उस बातको आत्मीय-स्वजन कैसे जान सकते हैं ? जानते होंगे सिर्फ वे और उनका वह अन्तर्यामी।"

बन्दनाने कुतूहलके साथ पूछा—"अच्छा द्विजू बाबू, आपको क्या मालूम होता है मुखर्जी साहबने किसी दिन किसीसे प्यार नहीं किया ? किसी भी आदमीको ?"

द्विजदासने कहा—"नहीं, यह बात उनकी प्रकृतिके विरुद्ध हैं। मनुष्योंके संसारमें इतना बड़ा निःसंग एकाकी पुरुष और कोई भी न होगा।"

इसके बाद बहुत देर तक दोनों चुप रहे।

बन्दनाने जबरदस्ती मानो एक बोझ-सा झाड़के फेंक दिया, बोली—"सो होने दीजिए द्विजू बाबू। उनका सारा काम आपको उठा लेना पड़ेगा,—एकको भी आप छोड़ नहीं सकते।"

"पर मैं तो भाई-साहब नहीं हूँ, अकेला उठा कैसे सकता हूँ बन्दना ?"

सभी तरहके दुःख अपना सकता हूँ, पर उनके कार्योंका बोझ भला कैसे ढोऊँगा ?—साहस नहीं होता। उन्हीं सबको देखने आज बाहर गया था। उनका स्कूल, उनका विद्यालय, उनकी संस्कृत-पाठशाला, मुसलमानोंके लिए स्थापित मकतब या मदरसे,—और वे भी क्या दो-एक हैं ? बहुतसे हैं। किसान रिआयाकी आब-पाशीके लिए एक नहर खुदाई जा रही है, बहुत दिनों तक उसके लिए रुपये जुटाने पड़ेंगे। कागजोंमें एक लम्बी सूची मिली है मुझे—उसमें सिर्फ दानके आँकड़े हैं। वे लोग जब माँगने आयंगे तो मैं क्या कहूँगा, कुछ समझमें नहीं आता।"

बन्दनाने कहा—"कहिएगा उन्हें, मिलेगा। उन्हें देना ही होगा। पर एक बात पूछती हूँ आपसे, क्या अब तक उन्होंने इस बारेमें किसीसे कुछ कहा सुना नहीं ?"

"नहीं।"

"इसकी वजह ?"

द्विजदासने कहा—"सुकृत गोपन करनेके लिए नहीं; किन्तु कहते भी तो किससे ? संसारमें उनका बन्धु तो कोई था नहीं। जब-जब दुःख आया है उसे अकेले ही झेला है, और जब आनन्द आया है उसका भी अकले ही उपभोग किया है। अथवा जताया हो तो उनके उस एकमात्र बन्धुको।"—कहते हुए उसने ऊपरकी ओर देखा, और फिर कहने लगा—"पर उस बातको आत्मीय-स्वजन कैसे जान सकते हैं ? जानते होंगे सिर्फ़ वे और उनका वह अन्तर्यामी।"

बन्दनाने कुतूहलके साथ पूछा—"अच्छा द्विजू बाबू, आपको क्या मालूम होता है मुखर्जी साहबने किसी दिन किसीसे प्यार नहीं किया ? किसी भी आदमीको ?"

द्विजदासने कहा—"नहीं, यह बात उनकी प्रकृतिके विरुद्ध हैं। मनुष्योंके संसारमें इतना बड़ा निःसंग एकाकी पुरुष और कोई भी न होगा।"

इसके बाद बहुत देर तक दोनों चुप रहे।

बन्दनाने जबरदस्ती मानो एक बोझ-सा झाड़के फेंक दिया, बोली—"सो होने दीजिए द्विजू बाबू। उनका सारा काम आपको उठा लेना पड़ेगा,—एकको भी आप छोड़ नहीं सकते।"

"पर मैं तो भाई-साहब नहीं हूँ, अकेला उठा कैसे सकता हूँ बन्दना ?"

"सुनके उन्होंने क्या कहा ?"

"कहा कुछ भी नहीं, सिर्फ़ मेरे मुँहकी तरफ़ देखते रह गये। उनकी हालत देखकर मुझे बड़ा दुःख हुआ द्विजू बाबू।"

"दुःख अगर सचमुच ही हुआ हो तो अब भी उम्मीद है। पर जान रखिएगा यह सब मौसीके घरकी घोरतर प्रतिक्रिया है,—महज सामयिक, टिकनेवाली नहीं।"

वन्दनाने कहा—"असम्भव नहीं, हो भी सकती है। मगर सीखा बहुत है। सोचती हूँ, भाग्यसे कलकत्ते खूब आ गई, वरना बहुत-सी बातें अज्ञात ही रह जातीं।"

द्विजदास कुछ देर चुप रहकर बोला—"ज्यादा वक्त अब नहीं रहा, अन्तिम उपदेश मुझे क्या देना है सो दे जाइए—मुझे क्या करना होगा ?"

वन्दनाने परिहासकी भंगिमासे कई बार सिर हिलाते हुए कहा—"उपदेश चाहिए ? सचमुच ही चाहिए क्या ?"

द्विजदासने कहा—"हाँ, सचमुच ही चाहिए। मैं भाई-साहब नहीं हूँ, मुझे बन्धुकी भी ज़रूरत है और उपदेशकी भी। ब्याह करने मुझसे कहे जा रही है, सो मैं करूँगा। मगर मुहब्बत न सही, बन्धुत्व बगैर पाये जो भार आप मुझे दिये जा रही हैं उसे वहन कैसे करूँगा ?"

द्विजदासके चेहरेपर परिहासका आभास तक न था, उसके कंठस्वरने वन्दनाको विचलित कर दिया, उसने कहा—"डरकी कोई बात नहीं द्विजू बाबू, बन्धु आयेगा, सचमुचका प्रयोजन होनेपर भगवान उसे आपके दरवाजेके पास आकर पहुँचा जायेंगे। इतना विश्वास रखिएगा।"

प्रत्युत्तरमें द्विजदास कुछ कहना ही चाहता था कि इतनेमें बाधा आ पड़ी। बाहरसे मैत्रेयीकी आवाज़ आई—"द्विजू बाबू भीतर हैं क्या ? मा आपको एक बार बुला रही हैं।"

द्विजू उठके खड़ा हो गया, बोला—"बारह बजे गाड़ी जाती है, साढ़े-ग्यारह बजे यहाँसे रवाना होना पड़ेगा। ठीक वक्तपर आपको आकर आवाज़ दूँगा। याद रहे।"—इतना कहकर वह जल्दीसे बाहर चला गया।

× × ×

"सुनके उन्होंने क्या कहा ?"

"कहा कुछ भी नहीं, सिर्फ़ मेरे मुँहकी तरफ देखते रह गये। उनकी हालत देखकर मुझे बड़ा दुःख हुआ द्विजू बाबू।"

"दुःख अगर सचमुच ही हुआ हो तो अब भी उम्मीद है। पर जान रखिएगा यह सब मौसीके घरकी घोरतर प्रतिक्रिया है,—महज सामयिक, टिकनेवाली नहीं।"

वन्दनाने कहा—"असम्भव नहीं, हो भी सकती है। मगर सीखा बहुत है। सोचती हूँ, भाग्यसे कलकत्ते खूब आ गई, वरना बहुत-सी बातें अज्ञात ही रह जातीं।"

द्विजदास कुछ देर चुप रहकर बोला—"ज्यादा वक्त अब नहीं रहा, अन्तिम उपदेश मुझे क्या देना है सो दे जाइए—मुझे क्या करना होगा ?"

वन्दनाने परिहासकी भंगिमासे कई बार सिर हिलाते हुए कहा—"उपदेश चाहिए ? सचमुच ही चाहिए क्या ?"

द्विजदासने कहा—"हाँ, सचमुच ही चाहिए। मैं भाई-साहब नहीं हूँ, मुझे बन्धुकी भी ज़रूरत है और उपदेशकी भी। ब्याह करने मुझसे कहे जा रही है, सो मैं करूँगा। मगर मुहब्बत न सही, बन्धुत्व बगैर पाये जो भार आप मुझे दिये जा रही हैं उसे वहन कैसे करूँगा ?"

द्विजदासके चेहरेपर परिहासका आभास तक न था, उसके कंठस्वरनें वन्दनाको विचलित कर दिया, उसने कहा—"डरकी कोई बात नहीं द्विजू बाबू, बन्धु आयेगा, सचमुचका प्रयोजन होनेपर भगवान उसे आपके दरवाजेके पास आकर पहुँचा जायेंगे। इतना विश्वास रखिएगा।"

प्रत्युत्तरमें द्विजदास कुछ कहना ही चाहता था कि इतनेमें बाधा आ पड़ी। बाहरसे मैत्रेयीकी आवाज़ आई—"द्विजू बाबू भीतर हैं क्या ? मा आपको एक बार बुला रही हैं।"

द्विजू उठके खड़ा हो गया, बोला—"बारह बजे गाड़ी जाती है, साढ़े-ग्यारह बजे यहाँसे रवाना होना पड़ेगा। ठीक वक्तपर आपको आकर आवाज़ दूँगा। याद रहे।"—इतना कहकर वह जल्दीसे बाहर चला गया।

× × ×

इतनेमें पतिके कर्मस्थल पंजाबसे मौसीजी आ पहुँचीं। उनकी तबीयत अच्छी नहीं है। पंजाबकी अपेक्षा बम्बईकी आब-हवा अच्छी है, यह सलाह उन्हें किस डाक्टरने दी है, सो तो वे ही जानती हैं, पर आई हैं स्वास्थ्यके ही बहाने। बम्बई आनेके पहले वन्दना उनसे मिलके नहीं आई, यह शिकायत उनके मनके अन्दर मौजूद थी, परन्तु बहनौतिनके मिजाजका जो कुछ थोड़ा-बहुत परिचय उन्हें मिला है उससे बहनोई रे-साहबके दरबारमें प्रकट रूपसे नालिश रुजू करनेकी उन्हें हिम्मत नहीं पड़ रही थी; फिर भी खानेकी टेबिलपर बैठकर इशारेसे उन्होंने यह बात छेड़ ही दी। बोलीं—"मिस्टर रे, आपने एक बातपर ग़ौर किया है या नहीं, मैं नहीं कह सकती, पर मैंने बहुत जगह देखा है कि मा-बापका इकलौता लड़का या इकलौती बेटी इतने ज्यादा जिद्दी हो जाया करते हैं कि उनके साथ निभना मुश्किल हो जाता है।"

साहबने इस बातको उसी क्षण स्वीकार कर लिया, और देखा कि दृष्टान्त उनके हाथके पास ही मौजूद है। आनन्दके साथ उसका उल्लेख करते हुए बोले—"जैसे यह पगली बिटिया। एक बार 'ना' कर दिया तो, किसकी मजाल कि 'हाँ' करा ले? बचपनहीसे देखता आ रहा हूँ—"

वन्दनाने कहा—"इसीसे शायद अपनी जिद्दिन लड़कीको प्यार नहीं करते होंगे, क्यों बापूजी?"

साहबने ज़ोरके साथ प्रतिवाद किया, बोले—"तू मेरी जिद्दिन लड़की है? हरगिज़ नहीं। कोई नहीं कह सकता।"

वन्दना हँस दी, बोली—"अभी-अभी तो तुम कह रहे थे बापूजी!"

"मैं? हरगिज नहीं।"

सुनकर मौसीतक बगैर हँसे न रह सकीं।

वन्दनाने पूछा—"अच्छा बापूजी, तुम्हारी तरह माको भी क्या मैं देखे न सुहाती थी?"

साहबने कहा—"तेरी माको? इस विषयको लेकर तो कितनी ही बार उससे मेरा झगड़ा हो जाया करता था। एक बार बचपनमें तैंने मेरी घड़ी तोड़ दी थी। तेरी माने गुस्सेमें आकर तेरा कान ऐंठ दिया और तू रोती हुई दौड़ी आई मेरे पास। मैंने गोदमें उठा लिया और फिर उस दिन तेरी माके साथ दिन-भर नहीं बोला।"—कहते-कहते वे पूर्वस्मृतिके आवेगमें उठके पास आ गये और लड़कीका माथा छातीसे लगाकर धीरे-धीरे हाथ फेरने लगे।

इतनेमें पतिके कर्मस्थल पंजाबसे मौसीजी आ पहुँचीं। उनकी तबीयत अच्छी नहीं है। पंजाबकी अपेक्षा बम्बईकी आब-हवा अच्छी है, यह सलाह उन्हें किस डाक्टरने दी है, सो तो वे ही जानती हैं, पर आई हैं स्वास्थ्यके ही बहाने। बम्बई आनेके पहले वन्दना उनसे मिलके नहीं आई, यह शिकायत उनके मनके अन्दर मौजूद थी, परन्तु बहनौतिनके मिजाजका जो कुछ थोड़ा-बहुत परिचय उन्हें मिला है उससे बहनोई रे-साहबके दरबारमें प्रकट रूपसे नालिश रुजू करनेकी उन्हें हिम्मत नहीं पड़ रही थी; फिर भी खानेकी टेबिलपर बैठकर इशारेसे उन्होंने यह बात छेड़ ही दी। बोलीं—"मिस्टर रे, आपने एक बातपर ग़ौर किया है या नहीं, मैं नहीं कह सकती, पर मैंने बहुत जगह देखा है कि मा-बापका इकलौता लड़का या इकलौती बेटी इतने ज्यादा जिद्दी हो जाया करते हैं कि उनके साथ निभना मुश्किल हो जाता है।"

साहबने इस बातको उसी क्षण स्वीकार कर लिया, और देखा कि दृष्टान्त उनके हाथके पास ही मौजूद है। आनन्दके साथ उसका उल्लेख करते हुए बोले—"जैसे यह पगली बिटिया। एक बार 'ना' कर दिया तो, किसकी मजाल कि 'हाँ' करा ले? बचपनहीसे देखता आ रहा हूँ—"

वन्दनाने कहा—"इसीसे शायद अपनी जिद्दिन लड़कीको प्यार नहीं करते होंगे, क्यों बापूजी?"

साहबने ज़ोरके साथ प्रतिवाद किया, बोले—"तू मेरी जिद्दिन लड़की है? हरगिज़ नहीं। कोई नहीं कह सकता।"

वन्दना हँस दी, बोली—"अभी-अभी तो तुम कह रहे थे बापूजी!"

"मैं? हरगिज नहीं।"

सुनकर मौसीतक बगैर हँसे न रह सकीं।

वन्दनाने पूछा—"अच्छा बापूजी, तुम्हारी तरह माको भी क्या मैं देखे न सुहाती थी?"

साहबने कहा—"तेरी माको? इस विषयको लेकर तो कितनी ही बार उससे मेरा झगड़ा हो जाया करता था। एक बार बचपनमें तैंने मेरी घड़ी तोड़ दी थी। तेरी माने गुस्सेमें आकर तेरा कान ऐंठ दिया और तू रोती हुई दौड़ी आई मेरे पास। मैंने गोदमें उठा लिया और फिर उस दिन तेरी माके साथ दिन-भर नहीं बोला।"—कहते-कहते वे पूर्वस्मृतिके आवेगमें उठके पास आ गये और लड़कीका माथा छातीसे लगाकर धीरे-धीरे हाथ फेरने लगे।

लगा है, खाना बन्द हो गया है। उसने कहा—"मौसाजीको बेमतलब बहुत ज्यादा डर दिखाया है मौसी, और अब मेरे बापूजीको भी दिखा रही हो। ऐसा क्या हो गया, बताना भला ? बापूजी अभी बहुत दिन जीयेंगे। अपनी लड़कीकी भलाईके लिए जो कुछ करना होगा उसके लिए उन्हें बहुत समय मिलेगा। तुम झूठमूठको चिन्तामें मत डालो बापूजीको।"

मौसी कोई दबनेवाली रूह नहीं। खासकर, रे साहबने जब कि उन्हींका समर्थन करते हुए कहा—"तुम्हारी मौसीजी ठीक ही कह रही हैं बन्दना। वास्तवमें मेरी तबीयत अब ठीक नहीं रहा करती, और यह तो ठीक ही है कि शरीरका कभी विश्वास नहीं करना चाहिए। ये अपनी आत्मीय हैं, समय रहते ये अगर सावधान न करें तो कौन करेगा बताओ ?"—इतना कहकर वे दोनोंके मुँहकी तरफ देखने लगे। मौसीने तिरछी निगाहोंसे देखा कि बन्दनाका चेहरा छाया-च्छन्न-सा हो रहा है, वे तुरंत लज्जित-कंठसे व्यस्तताके साथ कह उठीं—"यह कहना आपका बिलकुल असंगत है मिस्टर रे। आपकी सौ सालकी परमायु हो, हमारी सबकी यही प्रार्थना है। मैंने तो सिर्फ यही कहना चाहा था—"

साहब बीच ही में बोल उठे—"नहीं, आप ठीक ही कह रही हैं। सच-मुच स्वास्थ्य मेरा ठीक नहीं है। समयपर सावधान न होना, कर्तव्यकी उपेक्षा करना सचमुच ही अनुचित है।"

बन्दनाने अपने गूढ़ क्रोधको दमन करते हुए कहा—"आज बापूजी कुछ खा-पी ही न सकेंगे मौसीजी।"

मौसीने कहा—"रहने दीजिए इन सब बातोंको मिस्टर रे। आपका खाना-पीना पूरा न हुआ तो मुझे बहुत कष्ट होगा।"

साहबकी खाने-पीनेमें रुचि जाती रही थी, फिर भी जबरदस्ती उन्होंने मांसका एक टुकड़ा काटके मुँहमें डाला। इसके बाद खाने-पीनेका काम कुछ देर तक चुपचाप ही चलता रहा।

साहबने पूछा—"जमाई साहबकी प्रैक्टिस कैसी चल रही है मिसेज़ घोषाल ?"

मौसीने जवाब दिया—"अभी तो शुरू ही की है। सुना है बुरी नहीं चलती।"

फिर कुछ देर सन्नाटा रहा। मौसीने मुँहका ग्रास निगलते हुए कहा—"प्रैक्टिस कैसी भी चले मिस्टर रे, मैं उसको बहुत महत्व नहीं देती। मेरा

लगा है, खाना बन्द हो गया है। उसने कहा—"मौसाजीको बेमतलब बहुत ज्यादा डर दिखाया है मौसी, और अब मेरे बापूजीको भी दिखा रही हो। ऐसा क्या हो गया, बताना भला? बापूजी अभी बहुत दिन जीयेंगे। अपनी लड़कीकी भलाईके लिए जो कुछ करना होगा उसके लिए उन्हें बहुत समय मिलेगा। तुम झूठमूठको चिन्तामें मत डालो बापूजीको।"

मौसी कोई दबनेवाली रूह नहीं। खासकर, रे साहबने जब कि उन्हींका समर्थन करते हुए कहा—"तुम्हारी मौसीजी ठीक ही कह रही हैं बन्दना। वास्तवमें मेरी तबीयत अब ठीक नहीं रहा करती, और यह तो ठीक ही है कि शरीरका कभी विश्वास नहीं करना चाहिए। ये अपनी आत्मीय हैं, समय रहते ये अगर सावधान न करें तो कौन करेगा बताओ?"—इतना कहकर वे दोनोंके मुँहकी तरफ देखने लगे। मौसीने तिरछी निगाहोंसे देखा कि बन्दनाका चेहरा छाया-च्छन्न-सा हो रहा है, वे तुरंत लज्जित-कंठसे व्यस्तताके साथ कह उठीं—"यह कहना आपका बिलकुल असंगत है मिस्टर रे। आपकी सौ सालकी परमायु हो, हमारी सबकी यही प्रार्थना है। मैंने तो सिर्फ़ यही कहना चाहा था—"

साहब बीच ही में बोल उठे—"नहीं, आप ठीक ही कह रही हैं। सच-मुच स्वास्थ्य मेरा ठीक नहीं है। समयपर सावधान न होना, कर्तव्यकी उपेक्षा करना सचमुच ही अनुचित है।"

बन्दनाने अपने गूढ़ क्रोधको दमन करते हुए कहा—"आज बापूजी कुछ खा-पी ही न सकेंगे मौसीजी।"

मौसीने कहा—"रहने दीजिए इन सब बातोंको मिस्टर रे। आपका खाना-पीना पूरा न हुआ तो मुझे बहुत कष्ट होगा।"

साहबकी खाने-पीनेमें रुचि जाती रही थी, फिर भी जबरदस्ती उन्होंने मांसका एक टुकड़ा काटके मुँहमें डाला। इसके बाद खाने-पीनेका काम कुछ देर तक चुपचाप ही चलता रहा।

साहबने पूछा—"जमाई साहबकी प्रैक्टिस कैसी चल रही है मिसेज़ घोषाल?"

मौसीने जवाब दिया—"अभी तो शुरू ही की है। सुना है बुरी नहीं चलती।"

फिर कुछ देर सन्नाटा रहा। मौसीने मुँहका ग्रास निगलते हुए कहा—"प्रैक्टिस कैसी भी चले मिस्टर रे, मैं उसको बहुत महत्व नहीं देती। मेरा

पर यह नहीं देखा कि इकलौती लड़कीके बापोंकी तरह दाम्भिक आदमी भी संसारमें कम होते हैं। मेरे बापूजीकी धारणा है कि उनकी लड़की जैसी लड़की संसारमें दूसरी नहीं है।"

मौसीने कहा—"उस धारणाकी मैं भी बड़ी हिस्सेदार हूँ बन्दना। सजा मिलनेवाली हो तो वह मुझे भी मिलनी चाहिए।"

पिताके मुँहपर अनिर्वचनीय परितृप्तिकी मन्द-मन्द हँसी चमक उठी, उन्होंने कहा—"मैं दाम्भिक हूँ या नहीं सो तो नहीं जानता, पर इतना जानता हूँ कि कन्या-रत्नकी दृष्टिसे मैं सचमुच ही भाग्यवान हूँ। ऐसी लड़की बहुत कम बापोंको मिलती है।"

बन्दनाने कहा—"बापूजी, यह क्या, आज तो तुमने एक भी 'सन्देश' नहीं खाया? अच्छे नहीं बने शायद?"

साहबने प्रेटमेंसे आधा 'सन्देश' तोड़कर मुँहमें देते हुए कहा—"सब कुछ बिटियाने अपने हाथसे बनाया है। अबकी कलकत्तेसे लौटनेके बाद इसने साराका सारा खाना बदल दिया है। रसेदार तरकारी, भुजिया, मछलीका झोल, दही-सन्देश और भी न जाने क्या-क्या बनाया करती है। किससे सीख आई है मालूम नहीं, घरमें मास तो आने ही नहीं देती। कहती है उससे मेरी तबीयत ख़राब हो जाती है। देखिए मिसेज़ घोषाल, ये सब बंगाली खाने खाते-खाते मालूम होता है जैसे बुढ़ापेमें मैं अच्छा ही हूँ। अब ज़रा कुछ भूख भी लगने लगी है।"

बन्दनाने कहा—"मौसीजीको आदत नहीं है, शायद तकलीफ होती हो।"

मौसीने इस गूढ़ व्यंगपर कुछ ध्यान नहीं दिया, बोलीं—"नहीं-नहीं, तकलीफ काहेकी है, यह तो मुझे अच्छा ही लगता है। सिर्फ़ आब-हवा बदलना ही तो चेञ्ज नहीं है, खाने-पीनेमें भी चेञ्ज होना ज़रूरी है। इसीसे शायद मैं इतनी जल्दी स्वस्थ हो उठी हूँ।"

"अच्छी होने लगी हो, न मौसीजी?"

"ज़रूर। इसमें शक थोड़े ही है।"

"तो और भी कुछ दिन रह जाओ। और भी अच्छी हो जाओगी।"

"लेकिन ज्यादा दिन रहना भी मुश्किल है बन्दना। अशोकने लिखा है कि इस महीनेके आख़िरमें ही वह पंजाब चेञ्जके लिए आनेवाला है। उसके आनेके पहले ही मुझे वहाँ पहुँच जाना है।"

पर यह नहीं देखा कि इकलौती लड़कीके बापोंकी तरह दाम्भिक आदमी भी संसारमें कम होते हैं। मेरे बापूजीकी धारणा है कि उनकी लड़की जैसी लड़की संसारमें दूसरी नहीं है।"

मौसीने कहा—"उस धारणाकी मैं भी बड़ी हिस्सेदार हूँ वन्दना। सजा मिलनेवाली हो तो वह मुझे भी मिलनी चाहिए।"

पिताके मुँहपर अनिर्वचनीय परितृप्तिकी मन्द-मन्द हँसी चमक उठी, उन्होंने कहा—"मैं दाम्भिक हूँ या नहीं सो तो नहीं जानता, पर इतना जानता हूँ कि कन्या-रत्नकी दृष्टिसे मैं सचमुच ही भाग्यवान हूँ। ऐसी लड़की बहुत कम बापोंको मिलती है।"

वन्दनाने कहा—"बापूजी, यह क्या, आज तो तुमने एक भी 'सन्देश' नहीं खाया? अच्छे नहीं बने शायद?"

साहबने प्लेटमेंसे आधा 'सन्देश' तोड़कर मुँहमें देते हुए कहा—"सब कुछ बिटियाने अपने हाथसे बनाया है। अबकी कलकत्तेसे लौटनेके बाद इसने साराका सारा खाना बदल दिया है। रसेदार तरकारी, भुजिया, मछलीका झोल, दही-सन्देश और भी न जाने क्या-क्या बनाया करती है। किससे सीख आई है मालूम नहीं, घरमें मास तो आने ही नहीं देती। कहती है उससे मेरी तबीयत खराब हो जाती है। देखिए मिसेज़ घोषाल, ये सब बंगाली खाने खाते-खाते मालूम होता है जैसे बुढ़ापेमें मैं अच्छा ही हूँ। अब ज़रा कुछ भूख भी लगने लगी है।"

वन्दनाने कहा—"मौसीजीको आदत नहीं है, शायद तकलीफ होती हो।"

मौसीने इस गूढ़ व्यंगपर कुछ ध्यान नहीं दिया, बोलीं—"नहीं-नहीं, तकलीफ काहेकी है, यह तो मुझे अच्छा ही लगता है। सिर्फ़ आब-हवा बदलना ही तो चेञ्ज नहीं है, खाने-पीनेमें भी चेञ्ज होना ज़रूरी है। इसीसे शायद मैं इतनी जल्दी स्वस्थ हो उठी हूँ।"

"अच्छी होने लगी हो, न मौसीजी?"

"ज़रूर। इसमें शक थोड़े ही है।"

"तो और भी कुछ दिन रह जाओ। और भी अच्छी हो जाओगी।"

"लेकिन ज्यादा दिन रहना भी मुश्किल है वन्दना। अशोकने लिखा है कि इस महीनेके आख़िरमें ही वह पंजाब चेञ्जके लिए आनेवाला है। उसके आनेके पहले ही मुझे वहाँ पहुँच जाना है।"

बोली—" मेरी सती जीजीका व्याह हुआ था नौ-सालकी उमरमें। बाप-माने जिनके हाथ उन्हें सौंप दिया उन्हींको जीजीने अंगीकार कर लिया, अपनी बुद्धिसे उन्होंने चुनाव नहीं किया। फिर भी, भाग्यसे जिस पतिको पाया वह संसारमें दुर्लभ है। मैं उसी भाग्यपर ही विश्वास करूँगी बापूजी। विप्रदास बाबू साधु पुरुष हैं, आनेके पहले उन्होंने मुझे आशीर्वाद देते हुए कहा था—जहाँ मेरा कल्याण है, भगवान वहीं मुझे पहुँचा देंगे। उनकी वह बात कभी झूठी नहीं होनेकी। तुम मुझे जैसा आदेश दोगे मैं उसीका पालन करूँगी। मनमें किसी प्रकारका संशय, किसी तरहका डर-भय मैं न रक्खूँगी।"

साहब आश्चर्यसे दंग रह गये और उसके मुँहकी तरफ़ देखते रहे, मुँहसे उनके एक शब्द भी न निकला।

मौसीने कहा—" व्याहके समय तुम्हारी सती जीजी थीं बालिका, इससे उनके मतामतका कोई सवाल ही नहीं उठा। मगर तुम तो बच्ची नहीं हो, बड़ी हो गई हो, अपनी भलाई-बुराईकी जुम्मेदारी अब तुम्हींपर है, इस तरह आँख मींचके भाग्यके भरोसे खेल खेलना तो अब तुम्हें नहीं सोहता बन्दना।"

" सोहता है या नहीं, मैं नहीं जानती मौसीजी, परन्तु उन्हींकी तरह, वैसे ही भाग्यको प्रसन्न मनसे मान लूँगी।"

" मगर इस तरह उदासीनकी तरह बात करोगी तो तुम्हारे बापूजी मन स्थिर कैसे करेंगे?"

" जिस तरह इनके बड़े भाईने किया था सती-जीजीके सम्बन्धमें, जिस तरह इनके समस्त पूर्व पुरखोंने अपनी अपनी सन्तानोंका विवाह किया था—मेरे सम्बन्धमें भी उसी तरह बापूजी अपने मनको स्थिर करें।"

" तुम खुद कुछ भी न देखोगी, कुछ भी न सोचोगी?"

" सोचा-सोची, देखा-देखी बहुत देख चुकी मौसीजी। अब और नहीं। अब भरोसा करूँगी बापूजीके आशीर्वादपर और उस भाग्यपर जिसको आजतक कोई नहीं देख सका।"

मौसीने हताश होकर ज़रा-कुछ कड़ुए स्वरमें कहा—" भाग्यको हम भी मानती हैं; लेकिन अपने समाज, अपनी शिक्षा, और अपने संस्कार, सबको डुबोकर मुखर्जियोंका इन कई दिनोंका संसर्ग ही तुम्हें इतना ज्यादा आच्छन्न कर डालेगा—यह मैंने नहीं सोचा था। तुम्हारी बात सुनकर अब ऐसा नहीं मालूम होता कि तुम हमारी वही बन्दना हो। मानो हम लोगोंके लिए तुम बिलकुल ही पराई हो गई हो।"

बोली—"मेरी सती जीजीका ब्याह हुआ था नौ-सालकी उमरमें। बाप-माने जिनके हाथ उन्हें सौंप दिया उन्हींको जीजीने अंगीकार कर लिया, अपनी बुद्धिसे उन्होंने चुनाव नहीं किया। फिर भी, भाग्यसे जिस पतिको पाया वह संसारमें दुर्लभ है। मैं उसी भाग्यपर ही विश्वास करूँगी बापूजी। विप्रदास बाबू साधु पुरुष हैं, आनेके पहले उन्होंने मुझे आशीर्वाद देते हुए कहा था—जहाँ मेरा कल्याण है, भगवान वहीं मुझे पहुँचा देंगे। उनकी वह बात कभी झूठी नहीं होनेकी। तुम मुझे जैसा आदेश दोगे मैं उसीका पालन करूँगी। मनमें किसी प्रकारका संशय, किसी तरहका डर-भय मैं न रखूँगी।"

साहब आश्चर्यसे दंग रह गये और उसके मुँहकी तरफ़ देखते रहे, मुँहसे उनके एक शब्द भी न निकला।

मौसीने कहा—"ब्याहके समय तुम्हारी सती जीजी थीं बालिका, इससे उनके मतामतका कोई सवाल ही नहीं उठा। मगर तुम तो बच्ची नहीं हो, बड़ी हो गई हो, अपनी भलाई-बुराईकी जुम्मेदारी अब तुम्हींपर है, इस तरह आँख मींचके भाग्यके भरोसे खेल खेलना तो अब तुम्हें नहीं सोहता बन्दना।"

"सोहता है या नहीं, मैं नहीं जानती मौसीजी, परन्तु उन्हींकी तरह, वैसे ही भाग्यको प्रसन्न मनसे मान लूँगी।"

"मगर इस तरह उदासीनकी तरह बात करोगी तो तुम्हारे बापूजी मन स्थिर कैसे करेंगे?"

"जिस तरह इनके बड़े भाईने किया था सती-जीजीके सम्बन्धमें, जिस तरह इनके समस्त पूर्व पुरखोंने अपनी अपनी सन्तानोंका विवाह किया था—मेरे सम्बन्धमें भी उसी तरह बापूजी अपने मनको स्थिर करें।"

"तुम खुद कुछ भी न देखोगी, कुछ भी न सोचोगी?"

"सोचा-सोची, देखा-देखी बहुत देख चुकी मौसीजी। अब और नहीं। अब भरोसा करूँगी बापूजीके आशीर्वादपर और उस भाग्यपर जिसको आजतक कोई नहीं देख सका।"

मौसीने हताश होकर ज़रा-कुछ कड़ुए स्वरमें कहा—"भाग्यको हम भी मानती हैं; लेकिन अपने समाज, अपनी शिक्षा, और अपने संस्कार, सबको डुबोकर मुखर्जियोंका इन कई दिनोंका संसर्ग ही तुम्हें इतना ज्यादा आच्छन्न कर डालेगा—यह मैंने नहीं सोचा था। तुम्हारी बात सुनकर अब ऐसा नहीं मालूम होता कि तुम हमारी वही बन्दना हो। मानो हम लोगोंके लिए तुम बिलकुल ही पराई हो गई हो।"

तड़के ही उठकर नहा-धोकर मेरे कमरेमें पहुँच जाती है और पाँव छूती है। कहता हूँ, बिटिया, पहले तो तू यह सब कुछ न करती थी ? जवाब देती है, तब जानती न थी बापूजी। अब जो तुम्हारे पाँवोंकी धूल माथेसे लगाकर दिन शुरू करती हूँ तो समझ लेती हूँ कि वह मुझे दिन-भरके सब कामोंमें रक्षा करेगी।"—कहते कहते उनकी आँखें फिर डबडबा आईं।

मौसी मन-ही-मन अत्यन्त नाराज़ होकर बोलीं—"यह सब नया ढंग सीख आई है उसी मुखर्जियोंके घरसे। आप तो जानते हैं कि वे कैस दकियानूसी कट्टर हैं। मगर इसे रिलीज़न नहीं कहते, कुसंस्कार कहते हैं। वह पूजा-ऊजा भी करती है क्या ?"

साहबने कहा—"मालूम नहीं करती है या नहीं। शायद नहीं करती। कुसंस्कार मुझे भी लगा है, मना भी किया-कराया, पर वह पगली पहलेकी तरह अब तो बहस ही नहीं करती, चुपचाप सिर्फ़ सुनती और देखती रहती है। मेरा भी मुँह बन्द हो जाता है—कुछ कहते नहीं बनता।"

मौसीने कहा—"यह आपकी कमजोरी है। पर इतना निश्चित समझ लीजिए कि इसे रिलीज़न नहीं कहते, इसका नाम है सुपरस्टिशन, अन्धश्रद्धा। इसको प्रश्रय देना अन्याय है, अपराध है।"

साहब दुविधाके साथ धीरे-धीरे कहने लगे—"वही हो शायद। रिलीज़न शब्द मुँहसे ही कहता रहा हूँ, कभी खुद तो चर्चा की नहीं उसकी, उसका नेचर, स्वरूप, क्या है सो भी नहीं जानता; सिर्फ़ कभी-कभी अवाक् होकर सोचा करता हूँ कि लड़कीको इस तरह ऊपरसे नीचे तक बदल किसने दिया ! वह हँसी नहीं, आनन्दकी चंचलता नहीं, वर्षाऋतुके खिलते हुए फूलकी तरह उसकी पँखुड़ियाँ मानो पानीसे भीगी हुई हैं। कभी उसे बुलाकर कहता हूँ, पगली, मुझसे छिपा मत, भीतर-ही-भीतर तुझे किसी बीमारीने तो नहीं घेर लिया है ? चटसे हँसके सिर हिलाकर कह देती है, नहीं बापूजी, मैं बिलकुल अच्छी हूँ, मुझे किसी बीमारीने नहीं घेरा।' हँसती हुई वह तो घरके काममें लग जाती है, पर मेरी छातीके पंजर ढीले पड़ जाते हैं मिसेज़ घोषाल। यही एक लड़की है, मा नहीं, अपने हाथसे इतना बड़ा किया है इसे,—अपना सर्वस्व देकर भी अगर अपनी उसी वन्दनाको वैसीकी वैसी वापस पा जाता—"

मौसीने ज़ोर लगाकर कहा—"पायेंगे। मैं वचन दे रही हूँ, ज़रूर पायेंगे।

तड़के ही उठकर नहा-धोकर मेरे कमरेमें पहुँच जाती है और पाँव छूती है। कहता हूँ, बिटिया, पहले तो तू यह सब कुछ न करती थी? जवाब देती है, तब जानती न थी बापूजी। अब जो तुम्हारे पाँवोंकी धूल माथेसे लगाकर दिन शुरू करती हूँ तो समझ लेती हूँ कि वह मुझे दिन-भरके सब कामोंमें रक्षा करेगी।"—कहते कहते उनकी आँखें फिर डबडबा आईं।

मौसी मन-ही-मन अत्यन्त नाराज़ होकर बोलीं—"यह सब नया ढंग सीख आई है उसी मुखर्जियोंके घरसे। आप तो जानते हैं कि वे कैस दकियानूसी कट्टर हैं। मगर इसे रिलीज़न नहीं कहते, कुसंस्कार कहते हैं। वह पूजा-ऊजा भी करती है क्या?"

साहबने कहा—"मालूम नहीं करती है या नहीं। शायद नहीं करती। कुसंस्कार मुझे भी लगा है, मना भी किया-कराया, पर वह पगली पहलेकी तरह अब तो बहस ही नहीं करती, चुपचाप सिर्फ़ सुनती और देखती रहती है। मेरा भी मुँह बन्द हो जाता है—कुछ कहते नहीं बनता।"

मौसीने कहा—"यह आपकी कमजोरी है। पर इतना निश्चित समझ लीजिए कि इसे रिलीज़न नहीं कहते, इसका नाम है सुपरस्टिशन, अन्धश्रद्धा। इसको प्रश्रय देना अन्याय है, अपराध है।"

साहब दुबिधाके साथ धीरे-धीरे कहने लगे—"वही हो शायद। रिलीज़न शब्द मुँहसे ही कहता रहा हूँ, कभी खुद तो चर्चा की नहीं उसकी, उसका नेचर, स्वरूप, क्या है सो भी नहीं जानता; सिर्फ़ कभी-कभी अवाक् होकर सोचा करता हूँ कि लड़कीको इस तरह ऊपरसे नीचे तक बदल किसने दिया? वह हँसी नहीं, आनन्दकी चंचलता नहीं, वर्षाऋतुके खिलते हुए फूलकी तरह उसकी पँखुड़ियाँ मानो पानीसे भीगी हुई हैं। कभी उसे बुलाकर कहता हूँ, पगली, मुझसे छिपा मत, भीतर-ही-भीतर तुझे किसी बीमारीने तो नहीं घेर लिया है? चटसे हँसके सिर हिलाकर कह देती है, नहीं बापूजी, मैं बिलकुल अच्छी हूँ, मुझे किसी बीमारीने नहीं घेरा।' हँसती हुई वह तो घरके काममें लग जाती है, पर मेरी छातीके पंजर ढीले पड़ जाते हैं मिसेज़ घोषाल। यही एक लड़की है, मा नहीं, अपने हाथसे इतना बड़ा किया है इसे,—अपना सर्वस्व देकर भी अगर अपनी उसी बन्दनाको वैसोकी वैसी वापस पा जाता—"

मौसीने ज़ोर लगाकर कहा—"पायेंगे। मैं वचन दे रही हूँ, ज़रूर पायेंगे।

कहते हुए राय साहब ज़रा हँस दिये। फिर बोले—"अशोक आ रहे हैं। उन्हें आज एक तार भेज दूँगा।"

"अच्छी बात है, भेज दो।"

मौसीने कहा—"मैं ही जबरदस्ती उसे बुलवा रही हूँ। देखना, आनेपर उसका असम्मान न होने पावे।"

"डरो मत मौसीजी, हमारे-यहाँ किसीका असम्मान नहीं किया जाता। अशोक बाबू खुद जानते हैं।"

लड़कीकी बात सुनकर राय साहबने प्रसन्न होकर कहा—"ऑफिस जाते वक्त रास्तेमें आज ही तार कर दूँगा बिटिया। आज शुक्रवार है, सोमवारको वह यहाँ पहुँच सकता है अगर कोई विघ्न न आया।"

इतनेमें दरबान डाक लेकर आ पहुँचा। ढेरके ढेर अखबार हैं, जगह-जगहकी चिट्ठी-पत्री भी कुछ कम नहीं। इधर कुछ दिनोंसे डाकके प्रति बन्दनाका औत्सुक्य नहीं था। वह समझ गई थी कि प्रतिदिनकी आशा करके प्रतीक्षा करना वृथा है। उसकी याद करके चिट्ठी लिखनेवाला है ही कौन। वह जा ही रही थी कि राय साहबने उसका नाम लेकर कहा—"तेरे नामकी भी दो चिट्ठियाँ हैं वन्दना। और, लीजिए, एक आपकी भी है मिसेज़ घोषाल।"

अपनीसे भी दूसरेकी चिट्ठीपर मौसीका ज्यादा कुतूहल है। मुँह बढ़ाकर देखती हुई बोलीं—"एक तो अशोकके हाथकी लिखी हुई मालूम होती है। दूसरी किसकी है?"

इस अकारण प्रश्नका वन्दनाने कोई उत्तर नहीं दिया, दोनों चिट्ठियाँ हाथमें लेकर वह अपने कमरेकी तरफ़ चल दी।

राय साहबने मुसकराते हुए कहा—"अशोकके साथ मालूम होता है चिट्ठी-पत्री चल रही है। तार कर दूँ, वह चला आवे। लड़का वास्तवमें अच्छा है। उसपर विश्वास न होता तो वन्दना कभी चिट्ठी न लिखती।"

प्रत्युत्तरमें मौसी भी गर्वके साथ ज़रा हँस दीं। अर्थात् 'जानती बहुत कुछ हूँ।'

शामके वक्त आफ़िससे लौटते वक्त हाजी-साहबके घर होते हुए रे साहब अकेले घर लौटे। वन्दना वहाँ नहीं गई। मौसी सामने ही पड़ गईं, मुँह बनाकर बोलीं—"वन्दना चिट्ठी लेकर जो तबकी घुसी है अपने कमरेमें, सो अब तक निकली ही नहीं।"

कहते हुए राय साहब ज़रा हँस दिये। फिर बोले—"अशोक आ रहे हैं। उन्हें आज एक तार भेज दूँगा।"

"अच्छी बात है, भेज दो।"

मौसीने कहा—"मैं ही जबरदस्ती उसे बुलवा रही हूँ। देखना, आनेपर उसका असम्मान न होने पावे।"

"डरो मत मौसीजी, हमारे-यहाँ किसीका असम्मान नहीं किया जाता। अशोक बाबू खुद जानते हैं।"

लड़कीकी बात सुनकर राय साहबने प्रसन्न होकर कहा—"ऑफिस जाते वक्त रास्तेमें आज ही तार कर दूँगा बिटिया। आज शुक्रवार है, सोमवारको वह यहाँ पहुँच सकता है अगर कोई विघ्न न आया।"

इतनेमें दरबान डाक लेकर आ पहुँचा। ढेरके ढेर अखबार हैं, जगह-जगहकी चिट्ठी-पत्री भी कुछ कम नहीं। इधर कुछ दिनोंसे डाकके प्रति बन्दनाका औत्सुक्य नहीं था। वह समझ गई थी कि प्रतिदिनकी आशा करके प्रतीक्षा करना वृथा है। उसकी याद करके चिट्ठी लिखनेवाला है ही कौन। वह जा ही रही थी कि राय साहबने उसका नाम लेकर कहा—"तेरे नामकी भी दो चिट्ठियाँ हैं वन्दना। और, लीजिए, एक आपकी भी है मिसेज़ घोषाल।"

अपनीसे भी दूसरेकी चिट्ठीपर मौसीका ज्यादा कुतूहल है। मुँह बढ़ाकर देखती हुई बोलीं—"एक तो अशोकके हाथकी लिखी हुई मालूम होती है। दूसरी किसकी है?"

इस अकारण प्रश्नका बन्दनाने कोई उत्तर नहीं दिया, दोनों चिट्ठियाँ हाथमें लेकर वह अपने कमरेकी तरफ़ चल दी।

राय साहबने मुसकराते हुए कहा—"अशोकके साथ मालूम होता है चिट्ठी-पत्री चल रही है। तार कर दूँ, वह चला आवे। लड़का वास्तवमें अच्छा है। उसपर विश्वास न होता तो वन्दना कभी चिट्ठी न लिखती।"

प्रत्युत्तरमें मौसी भी गर्वके साथ ज़रा हँस दीं। अर्थात् 'जानती बहुत कुछ हूँ।'

शामके वक्त आफ़िससे लौटते वक्त हाजी-साहबके घर होते हुए रे साहब अकेले घर लौटे। वन्दना वहाँ नहीं गई। मौसी सामने ही पड़ गईं, मुँह बनाकर बोलीं—"वन्दना चिट्ठी लेकर जो तबकी घुसी है अपने कमरेमें, सो अब तक निकली ही नहीं।"

भी ज्योंकी त्यों ऊर्ध्वमुखी होकर जल रही है, ज्योति कहींसे भी रंचमात्र नष्ट नहीं हुई है।

यह प्रसंग क्यों छेड़ा, सो बतलाना है। तीन दिन हुए भाई साहब घर वापस आगये हैं। सवेरे जब वे गाड़ीसे उतरे तो उनके पीछे-पीछे उतरा वासू। उसके पाँव नंगे थे और गलेमें उत्तरीय * पड़ा था। गाड़ी वापस चली गई, और कोई नहीं उतरा। सवेरेकी धूपमें छतपर खड़ा था, आँखोंके आगे सारी दुनिया अन्धकारमय हो उठी,—ठीक अमावसकी रातकी तरह। शायद दो ही मिनट बीते होंगे, उसके बाद सब दीखने लगा, फिर सब स्पष्ट हो आया। ऐसा भी हुआ करता है, इसके पहले मैं नहीं जानता था।

नीचे उतर आया। भाई साहबने कहा—'तेरी भाभी कल सवेरे मर गई द्विजू। हाथमें रुपये-पैसे ज्यादा नहीं हैं, उसके लिए मामूली-सा श्राद्धका आयोजन कर दे। मा कहाँ हैं?'

मैंने कहा—'ढाका गई हैं, अपनी लड़कीके घर।'

'ढाका?'—ज़रा चुप रहकर बोले—'क्या जानें, शायद आ न सकेंगी, पर मातृदाय जानकर वासू उन्हें चिट्ठी जरूर लिख दे।'

मैंने कहा—'देगा क्यों नहीं।'

वासू दौड़ा आया और मेरी गरदनसे लिपटकर उसने अपना मुँह छिपा लिया। उसके बाद रो उठा। जैसे उस रोनेकी कोई भाषा नहीं, वैसे ही चिट्ठीमें प्रकट करनेकी भी भाषा नहीं। शिकारका जानवर मरनके पहले अपनी अन्तिम नालिश जिस भाषामें छोड़ जाता है, बहुत-कुछ वैसा ही समझो। उसे गोदमें उठाकर भाग आया सीधा अपने कमरेमें। वह वैसा ही रोता रहा मेरी छातीमें मुँह छिपाकर। मैंने मन-ही-मन कहा—ओ रे वासू, नुकसानकी दृष्टिसे तैंने कुछ ज्यादा खोया हो सो बात नहीं, और भी एक आदमीकी क्षतिकी मात्रा तुझसे कहीं अधिक बढ गई है। और फिर तुझे समझानेवाला तो कोई है, पर उसके कोई भी नहीं है। सिर्फ़ एक आशा है—वन्दना अगर समझ सके।

इस तरह बहुत देर बीत गई। अन्तमें उसकी आँखें पोंछते हुए मैंने कहा—तू डरे मत रे, मा न रहें, बाप न रहें, पर मैं तो हूँ। ऋण तो उनका न चुका सकूँगा, पर उसे अस्वीकार कभी नहीं करूँगा। आज सबस बढ़कर

---

* उत्तरीय—माता या पिताकी मृत्यु होनेपर, अशौच दूर होने तक, जनेऊकी भाँति पहना जानेवाला धजी-सा एक कपड़ा।

भी ज्योंकी त्यों ऊर्ध्वमुखी होकर जल रही है, ज्योति कहींसे भी रंचमात्र नष्ट नहीं हुई है।

यह प्रसंग क्यों छेड़ा, सो बतलाना है। तीन दिन हुए भाई साहब घर वापस आगये हैं। सबेरे जब वे गाड़ीसे उतरे तो उनके पीछे-पीछे उतरा वासू। उसके पाँव नंगे थे और गलेमें उत्तरीय * पड़ा था। गाड़ी वापस चली गई, और कोई नहीं उतरा। सबेरेकी धूपमें छतपर खड़ा था, आँखोंके आगे सारी दुनिया अन्धकारमय हो उठी,—ठीक अमावसकी रातकी तरह। शायद दो ही मिनट बीते होंगे, उसके बाद सब दीखने लगा, फिर सब स्पष्ट हो आया। ऐसा भी हुआ करता है, इसके पहले मैं नहीं जानता था।

नीचे उतर आया। भाई साहबने कहा—'तेरी भाभी कल सबेरे मर गई द्विजू। हाथमें रुपये-पैसे ज्यादा नहीं हैं, उसके लिए मामूली-सा श्राद्धका आयोजन कर दे। मा कहाँ हैं?'

मैंने कहा—'ढाका गई हैं, अपनी लड़कीके घर।'

'ढाका?'—ज़रा चुप रहकर बोले—'क्या जानें, शायद आ न सकेंगी, पर मातृदाय जानकर वासू उन्हें चिट्ठी जरूर लिख दे।'

मैंने कहा—'देगा क्यों नहीं।'

वासू दौड़ा आया और मेरी गरदनसे लिपटकर उसने अपना मुँह छिपा लिया। उसके बाद रो उठा। जैसे उस रोनेकी कोई भाषा नहीं, वैसे ही चिट्ठीमें प्रकट करनेकी भी भाषा नहीं। शिकारका जानवर मरनके पहले अपनी अन्तिम नालिश जिस भाषामें छोड़ जाता है, बहुत-कुछ वैसा ही समझो। उसे गोदमें उठाकर भाग आया सीधा अपने कमरेमें। वह वैसा ही रोता रहा मेरी छातीमें मुँह छिपाकर। मैंने मन-ही-मन कहा—ओ रे वासू, नुकसानकी दृष्टिसे तैंने कुछ ज्यादा खोया हो सो बात नहीं, और भी एक आदमीकी क्षतिकी मात्रा तुझसे कहीं अधिक बढ गई है। और फिर तुझे समझानेवाला तो कोई है, पर उसके कोई भी नहीं है। सिर्फ एक आशा है—वन्दना अगर समझ सके।

इस तरह बहुत देर बीत गई। अन्तमें उसकी आँखें पोंछते हुए मैंने कहा—तू डरे मत रे, मा न रहें, बाप न रहें, पर मैं तो हूँ। ऋण तो उनका न चुका सकूँगा, पर उसे अस्वीकार कभी नहीं करूँगा। आज सबस बढ़कर

---

* उत्तरीय=माता या पिताकी मृत्यु होनेपर, अशौच दूर होने तक, जनेऊकी भाँति पहना जानेवाला धजी-सा एक कपड़ा।

‘ हाँ । उससे मेरा आशीर्वाद कह देना । कहना, सब्र रहा । ’

मैं भागकर भाभीके सूने घरमें आ गया । फोटो उतरवानेमें उन्हें बड़ी शरम लगती थी । सिर्फ़ एक तसवीर उनकी आलमारीमें छिपी हुई रखी थी । मेरी ही उतारी हुई थी वह । उसके सामने खड़ा होकर बोला—‘ धन्य हो गया मैं भाभी, समझ गया आज तुम्हारा हुकम । इतनी जल्दी चली जाओगी, यह मैंने नहीं सोचा था । मगर, कहीं भी अगर हो तुम, तो देखोगी कि तुम्हारे आदेशकी मैंने उपेक्षा नहीं की । सिर्फ़ इतनी शक्ति दो कि तुम्हारे शोकमें किसीके सामने मेरे आँसू न गिरें । पर आज यहीं तक रहने दो उनकी बात ।

अब रह गया मैं । जाते वक्त आपने अनुरोध किया था ब्याह करनेके लिए। कारण, इतना भार अकेला मैं नहीं ढो सकता—संगी-साथीकी ज़रूरत है । वह संगी होगी मैत्रेयी—यही आपके मनमें था । मैंने आपत्ति नहीं की, सोचा कि संसारमें पन्द्रह-आना आनन्द ही जब मिट चुका, तब बाकी एक-आनेके लिए खींचातानी न करूँगा । किन्तु वह भी आज नहीं होता दीखता,—भाभीकी मृत्युने ला दी अलंघनीय बाधा । बाधा किस बातकी ? मैत्रेयी भार तो ले सकती है, पर वह बोझ नहीं ढो सकती । यह बात मालूम कर ली है । पर मेरे लिए अबकी बार वह बोझ ही हो गया है भारी । फिर भी कहूँगा कि विपत्तिके दिनोंमें उसने हम लोगोंके लिए बहुत किया है, उसके लिए मैं उसका कृतज्ञ हूँ। समय अगर कभी आया तो उसका ऋण भूलूँगा नहीं ।

कल बहुत रात बीते वासू रो उठा । उसे किसी तरह सुला-सुलाकर मैं चला गया भाई साहबके कमरेमें । देखा कि वे जगकर किताब पढ़ रहे हैं । मैंने पूछा—‘ कौनसी किताब है भाई साहब ? ’ भाई साहबने किताब बन्द करके हँसते हुए कहा—‘ क्या करने आया है तू बता ? ’ उनकी तरफ देखकर, जो कुछ कहने गया था सो न कह सका । सोचा, सोते-सोते वासू रो उठा है, उसमें विप्रदासका क्या है ? दूसरी बात मनमें उठ आई, बोला—‘ श्राद्धके बाद आप कहाँ रहेंगे भाई साहब ? कलकत्ते ? ’

उन्होंने कहा—‘ तीर्थयात्रा करने जाऊँगा । ’

‘ लौटेंगे कब तक ? ’

भाई साहब फिर जरा हँसके बोले—‘ लौटूँगा नहीं । ’

स्तब्ध होकर उनके मुँहकी ओर खड़ा देखता रहा । सन्देह न रहा कि उनका संकल्प टल नहीं सकता । भाई साहबने गृहस्थाश्रम छोड़ दिया ।

'हाँ। उससे मेरा आशीर्वाद कह देना। कहना, सब रहा।'

मैं भागकर भाभीके सूने घरमें आ गया। फोटो उतरवानेमें उन्हें बड़ी शरम लगती थी। सिर्फ़ एक तसवीर उनकी आलमारीमें छिपी हुई रखी थी। मेरी ही उतारी हुई थी वह। उसके सामने खड़ा होकर बोला—'धन्य हो गया मैं भाभी, समझ गया आज तुम्हारा हुकम। इतनी जल्दी चली जाओगी, यह मैंने नहीं सोचा था। मगर, कहीं भी अगर हो तुम, तो देखोगी कि तुम्हारे आदेशकी मैंने उपेक्षा नहीं की। सिर्फ़ इतनी शक्ति दो कि तुम्हारे शोकमें किसीके सामने मेरे आँसू न गिरें। पर आज यहीं तक रहने दो उनकी बात।

अब रह गया मैं। जाते वक्त आपने अनुरोध किया था ब्याह करनेके लिए। कारण, इतना भार अकेला मैं नहीं ढो सकता—संगी-साथीकी ज़रूरत है। वह संगी होगी मैत्रेयी—यही आपके मनमें था। मैंने आपत्ति नहीं की, सोचा कि संसारमें पन्द्रह-आना आनन्द ही जब मिट चुका, तब बाकी एक-आनेके लिए खींचातानी न करूँगा। किन्तु वह भी आज नहीं होता दीखता,—भाभीकी मृत्युने ला दी अलंघनीय बाधा। बाधा किस बातकी? मैत्रेयी भार तो ले सकती है, पर वह बोझ नहीं ढो सकती। यह बात मालूम कर ली है। पर मेरे लिए अबकी बार वह बोझ ही हो गया है भारी। फिर भी कहूँगा कि विपत्तिके दिनोंमें उसने हम लोगोंके लिए बहुत किया है, उसके लिए मैं उसका कृतज्ञ हूँ। समय अगर कभी आया तो उसका ऋण भूलूँगा नहीं।

कल बहुत रात बीते वासू रो उठा। उसे किसी तरह सुला-सुलकर मैं चला गया भाई साहबके कमरेमें। देखा कि वे जगकर किताब पढ़ रहे हैं। मैंने पूछा—'कौनसी किताब है भाई साहब?' भाई साहबने किताब बन्द करके हँसते हुए कहा—'क्या करने आया है तू बता?' उनकी तरफ़ देखकर, जो कुछ कहने गया था सो न कह सका। सोचा, सोते-सोते वासू रो उठा है, उसमें विप्रदासका क्या है? दूसरी बात मनमें उठ आई, बोला—'श्राद्धके बाद आप कहाँ रहेंगे भाई साहब? कलकत्ते?'

उन्होंने कहा—'तीर्थयात्रा करने जाऊँगा।'

'लौटेंगे कब तक?'

भाई साहब फिर जरा हँसके बोले—'लौटूँगा नहीं।'

स्तब्ध होकर उनके मुँहकी ओर खड़ा देखता रहा। सन्देह न रहा कि उनका संकल्प टल नहीं सकता। भाई साहबने गृहस्थाश्रम छोड़ दिया।

"नहीं, उन्हें तो कोई लाने नहीं गया।"

"वासू अच्छी तरह है?"

"हाँ।"

"मुखर्जी साहब? द्विजू बाबू?"

"बड़े बाबू अच्छी तरह हैं, पर छोटे बाबू देखनेमें वैसे अच्छे नहीं मालूम होते।"

वन्दनाने पूछा—"बुखार-उखार तो नहीं आया?"

दत्तजीने कहा—"ठीक मालूम नहीं दीदी, पर काम-काज तो सब कर रहे हैं।"

वन्दना कुछ देर चुप रहकर बोली—"दत्तजी, मुझे ऐसा लगता है कि मा शायद इस दुःखके बीच अब न आयेंगीं। पर दुःख चाहे जितना भी क्यों न हो श्राद्धका आयोजन तो करना ही पड़ेगा। कुछ हो रहा है क्या?"

"हो क्यों नहीं रहा है दीदी। बूढ़े बाबूके श्राद्धके लिए जैसा हुआ था लगभग वैसा ही इन्तजाम हो रहा है।"

बात अच्छी तरह समझ न सकनेके कारण वन्दनाने विस्मयके साथ पूछा—"किसके जैसा कहा आपने, मुखर्जी साहबके पिताके श्राद्धके समान? उतनी बड़ी तैयारियाँ हो रही हैं?"

दत्तजीने कहा—"हाँ, लगभग वैसी ही। जाकर देख लीजिएगा। बड़े बाबूने छोटेको बुलाकर कहा—'द्विजू, पागलपन मत कर, सब चीज़की एक मात्रा होती है।' छोटे बाबूने तपाकसे कहा—'मात्रा होती है सो जानता हूँ, पर मात्राज्ञान तो सबका एक-सा नहीं होता भाई साहब।' बड़े बाबूने हँसके कहा—"पर तू तो सभीकी मात्राको लाँघे जा रहा है द्विजू।' छोटे बाबूने कहा—'तो आप लोगोंसे मेरी यही बिनती है कि एक बारके लिए मुझे क्षमा कर दीजिए। मैं मात्रा लंघन कर सकूँगा, पर भाभीकी मर्यादा लंघन नहीं कर सकूँगा।' इसके बाद फिर कोई कुछ नहीं बोला। अब आप अगर कुछ कर सकें तो करें। खर्च बीस-पचीस हज़ारसे कम न बैठेगा।"

"खर्च क्या सब छोटे बाबूका हो रहा है?"

"हाँ, वे ही कर रहे हैं।"

वन्दनाने पूछा—"इतना क्या उनके लिए बहुत ज्यादा मालूम होता है दत्तजी?"

"बहुत ज्यादा न होनेपर भी,—हालमें चला भी तो बहुत गया है दीदी। अब सम्हलके चलनेकी ज़रूरत है। और फिर इसके ऊपर नई आफत आनेमें क्या देर लगती है?"

"नहीं, उन्हें तो कोई लाने नहीं गया।"

"वासू अच्छी तरह है?"

"हाँ।"

"मुखर्जी साहब? द्विजू बाबू?"

"बड़े बाबू अच्छी तरह हैं, पर छोटे बाबू देखनेमें वैसे अच्छे नहीं मालूम होते।"

वन्दनाने पूछा—"बुखार-उखार तो नहीं आया?"

दत्तजीने कहा—"ठीक मालूम नहीं दीदी, पर काम-काज तो सब कर रहे हैं।"

वन्दना कुछ देर चुप रहकर बोली—"दत्तजी, मुझे ऐसा लगता है कि मा शायद इस दुःखके बीच अब न आयेंगीं। पर दुःख चाहे जितना भी क्यों न हो श्राद्धका आयोजन तो करना ही पड़ेगा। कुछ हो रहा है क्या?"

"हो क्यों नहीं रहा है दीदी। बूढ़े बाबूके श्राद्धके लिए जैसा हुआ था लगभग वैसा ही इन्तजाम हो रहा है।"

बात अच्छी तरह समझ न सकनेके कारण वन्दनाने विस्मयके साथ पूछा—"किसके जैसा कहा आपने, मुखर्जी साहबके पिताके श्राद्धके समान? उतनी बड़ी तैयारियाँ हो रही हैं?"

दत्तजीने कहा—"हाँ, लगभग वैसी ही। जाकर देख लीजिएगा। बड़े बाबूने छोटेको बुलाकर कहा—'द्विजू, पागलपन मत कर, सब चीज़की एक मात्रा होती है।' छोटे बाबूने तपाकसे कहा—'मात्रा होती है सो जानता हूँ, पर मात्राज्ञान तो सबका एक-सा नहीं होता भाई साहब।' बड़े बाबूने हँसके कहा—"पर तू तो सभीकी मात्राको लाँघे जा रहा है द्विजू।' छोटे बाबूने कहा—'तो आप लोगोंसे मेरी यही विनती है कि एक बारके लिए मुझे क्षमा कर दीजिए। मैं मात्रा लंघन कर सकूँगा, पर भाभीकी मर्यादा लंघन नहीं कर सकूँगा।' इसके बाद फिर कोई कुछ नहीं बोला। अब आप अगर कुछ कर सकें तो करें। खर्च बीस-पचीस हज़ारसे कम न बैठेगा।"

"खर्च क्या सब छोटे बाबूका हो रहा है?"

"हाँ, वे ही कर रहे हैं।"

वन्दनाने पूछा—"इतना क्या उनके लिए बहुत ज्यादा मालूम होता है दत्तजी?"

"बहुत ज्यादा न होनेपर भी,—हालमें चला भी तो बहुत गया है दीदी। अब सम्हलके चलनेकी ज़रूरत है। और फिर इसके ऊपर नई आफत आनेमें क्या देर लगती है?"

द्विजदासने कहा—"मैं भी नहीं जानता था। शायद उनके आनेका रास्ता अब तक बन्द था। पहले-पहल खुला था उस दिन जिस दिन तुम मैत्रेयीको बुलाकर उसपर इस घर-गृहस्थीका भार देनेके लिए कहकर चली गइ। मैंने आड़में छिपकर आँखें पोंछ डालीं और मन-ही-मन कहा—इतनी बड़ी मार्मिक चोट जो आसानीसे हँसते-खेलते पहुँचा सकती है उसके आगे कभी भीख न मागूँगा। पर वह प्रतिज्ञा मेरी न निभ सकी। भाभी चली गईं स्वर्ग, भाई साहबने जाहिर किया संसार-त्यागका संकल्प, एक मिनटके भूकम्पमें मानो सब कुछ धूलमें मिल गया। यह भी सह सका था, पर जब यह सुना कि घर छोड़कर वासू चला जायगा किसी अज्ञात आश्रममें, तो फिर नहीं सहा गया। एक बार सोचा कि जो कुछ है सब कल्याणीके बच्चोंको दे-दाकर मैं भी चला जाऊँ किसी तरफ़, तब सहसा ख़याल आगया तुम्हारी जाते समयकी अन्तिम बातका—तुमने मुझसे विश्वास करनेके लिए कहा था, कहा था—मेरे अत्यंत प्रयोजनके समय बन्धु अपने आप ही आ जायगा दरवाजेके पास। सोचा, यही तो मेरा अन्तिम प्रयोजनका समय है, अब और प्रयोजन कब होगा? इसीसे तुम्हें चिट्ठी लिख दी। सन्देह आना चाह रहा था मनमें, पर ज़ोरके साथ उसे दूर भगा दिया, और कहा—बन्धु अब आयेगा ही। नहीं तो झूठ हो जायगी उसकी बात, झूठ हो जायगा भाभीका अन्तिम आशीर्वाद। जो बोझ वे छोड़ गई हैं उस बोझको मैं ढोऊँगा किस बलपर?"—कहते-कहते दो बूँद आँसू फिर ढुलक पड़े।

बन्दनाने कहा—"सभी कहते हैं कि तुम बड़े अबाध्य हो, किसीका कहना नहीं मानते। एक भाभीके सिवा तुमने और किसीकी बात नहीं सुनी।"

द्विजदासने कहा—"यही तुम्हें डर है? पर क्यों नहीं सुनी, भाभी होती तो इसका जवाब देतीं।"—इतना कहकर उसने अपनी आँखें पोंछ डालीं।

वन्दना कुछ क्षण चुपचाप उसकी ओर देखती रही, फिर बोली—"जवाब मैं पा गई, अब मेरे मनमें कोई शंका नहीं है।"—कहते हुए उसने द्विजदासका हाथ अपने हाथमें खींच लिया और फिर कुछ देर तक स्थिर रहकर कहा—सिर्फ़ तुम्हारे ही चारों ओर भूकम्प हुआ हो सो बात नहीं, मेरे अन्दर भी ऐसा ही भूकम्प हो चुका है। जो कुछ धूलमें मिलना था सो मिल चुका है; पर जो टूटने-फूटनेवाला नहीं था, डिगनेवाला नहीं था, उस अखंड और अडिगको मैं आज पा गई हूँ। अब जाती हूँ भाई साहबके पास। जाते वक्त मुझे उन्होंने

द्विजदासने कहा—"मैं भी नहीं जानता था। शायद उनके आनेका रास्ता अब तक बन्द था। पहले-पहल खुला था उस दिन जिस दिन तुम मैत्रेयीको बुलाकर उसपर इस घर-गृहस्थीका भार देनेके लिए कहकर चली गइ। मैंने आड़में छिपकर आँखें पोंछ डालीं और मन-ही-मन कहा—इतनी बड़ी मार्मिक चोट जो आसानीसे हँसते-खेलते पहुँचा सकती है उसके आगे कभी भीख न मागूँगा। पर वह प्रतिज्ञा मेरी न निभ सकी। भाभी चली गईं स्वर्ग, भाई साहबने जाहिर किया संसार-त्यागका संकल्प, एक मिनटके भूकम्पमें मानो सब कुछ धूलमें मिल गया। यह भी सह सका था, पर जब यह सुना कि घर छोड़कर वासू चला जायगा किसी अज्ञात आश्रममें, तो फिर नहीं सहा गया। एक बार सोचा कि जो कुछ है सब कल्याणीके बच्चोंको दे-दाकर मैं भी चला जाऊँ किसी तरफ, तब सहसा खयाल आगया तुम्हारी जाते समयकी अन्तिम बातका—तुमने मुझसे विश्वास करनेके लिए कहा था, कहा था—मेरे अत्यंत प्रयोजनके समय बन्धु अपने आप ही आ जायगा दरवाजेके पास। सोचा, यही तो मेरा अन्तिम प्रयोजनका समय है, अब और प्रयोजन कब होगा? इसीसे तुम्हें चिट्ठी लिख दी। सन्देह आना चाह रहा था मनमें, पर ज़ोरके साथ उसे दूर भगा दिया, और कहा—बन्धु अब आयेगा ही। नहीं तो झूठ हो जायगी उसकी बात, झूठ हो जायगा भाभीका अन्तिम आशीर्वाद। जो बोझ वे छोड़ गई हैं उस बोझको मैं ढोऊँगा किस बलपर?"—कहते-कहते दो बूँद आँसू फिर ढुलक पड़े।

बन्दनाने कहा—"सभी कहते हैं कि तुम बड़े अबाध्य हो, किसीका कहना नहीं मानते। एक भाभीके सिवा तुमने और किसीकी बात नहीं सुनी।"

द्विजदासने कहा—"यही तुम्हें डर है? पर क्यों नहीं सुनी, भाभी होती तो इसका जवाब देतीं।"—इतना कहकर उसने अपनी आँखें पोंछ डालीं।

वन्दना कुछ क्षण चुपचाप उसकी ओर देखती रही, फिर बोली—"जवाब मैं पा गई, अब मेरे मनमें कोई शंका नहीं है।"—कहते हुए उसने द्विजदासका हाथ अपने हाथमें खींच लिया और फिर कुछ देर तक स्थिर रहकर कहा—सिर्फ़ तुम्हारे ही चारों ओर भूकम्प हुआ हो सो बात नहीं, मेरे अन्दर भी ऐसा ही भूकम्प हो चुका है। जो कुछ धूलमें मिलना था सो मिल चुका है; पर जो टूटने-फूटनेवाला नहीं था, डिगनेवाला नहीं था, उस अखंड और अडिगको मैं आज पा गई हूँ। अब जाती हूँ भाई साहबके पास। जाते वक्त मुझे उन्होंने

"पराई लड़की ही तो बोझ उठाया करती है अनु-दीदी। इन्हें बुलाकर मैंने कह दिया है कि इतना दुःखका भार मैं नहीं ढो सकता और उसपर वासू अगर चला गया तो—यह रहा तुम लोगोंका बलरामपुरका मुखर्जियोंका घर, और यह रहा तुम लोगोंका सात-पीढ़ीका मान-सम्मान,—शशधरके लड़कोंको यहाँ बुलाकर मैं संसारसे इस्तीफा देता हूँ। सिर्फ भाई साहब ही दे सकते हैं सो बात नहीं, द्विजू भी दे सकता है। संन्यास तो नहीं ले सकता, मैं जानता भी नहीं कि क्या चीज़ है वह,—पर रुपये-पैसेका बोझ अनायास ही फेंक-फाँककर चल दूँगा।"

अन्नदाने बन्दनाके दोनों हाथ थामकर कहा—"रुकोगी नहीं दीदी, विपिनकी राय बदलवा नहीं सकोगी? वासूको घर नहीं रख सकोगी?"

"सकूँगी अनु-दीदी।"

"और यह जो सत्यानासी मामला चल रहा है जमाई-बाबूके साथ—रुकवा नहीं सकोगी इसे?"

"हाँ, यह भी कर सकूँगी अनु-दीदी।"—क्षण-भर स्तब्ध रहकर फिर कहने लगी—"ये भी मेरे अबाध्य न होंगे, इसी शर्तपर मैं इस घरकी छोटी-बहू बननेको राजी हुई हूँ अनु-दीदी।"

बातको अच्छी तरह न समझ सकनेसे अन्नदा चुपचाप उसके मुँहकी ओर देखती रही। बन्दनाने कहा—"जो गया सो तो जा ही चुका। ऊपरसे क्या माको भी खोना पड़ेगा? मुकदमा बगैर उठाये उन्हें वापस कैसे लाया जा सकता है?"

द्विजदासने तकियेके नीचेसे चाबियोंका गुच्छा निकालकर बन्दनाके पैरोंके पास फेंक दिया और कहा—"यह लो। अबाध्य न होऊँगा कभी—आब यही शर्त मंजूर करता हूँ तुम्हारी।"

बन्दनाने चाबियोंका गुच्छा उठाकर आँचलसे बाँध लिया।

अब अन्नदाको सारा तात्पर्य समझमें आ गया। बन्दनाको छातीसे लगाकर देरतक वह स्थिर खड़ी रही, उसकी आँखोंसे सिर्फ बड़ी-बड़ी बूँदें टपकने लगीं।

× × ×

बन्दनाने विप्रदासके कमरेमें जाकर उन्हें प्रणाम किया। बोली—"भाई साहब, आ गई मैं।"

यह नया सम्बोधन विप्रदासके कानोंको कुछ अटपटा-सा लगा। पर इस बारेमें कुछ न कहकर उन्होंने पूछा—"सुन लिया था तुम आ रही हो, तुम्हारे पिताजीका तार मिला था। रास्तेमें तकलीफ तो नहीं हुई?"

"पराई लड़की ही तो बोझ उठाया करती है अनु-दीदी। इन्हें बुलाकर मैंने कह दिया है कि इतना दुःखका भार मैं नहीं ढो सकता और उसपर वासू अगर चला गया तो—यह रहा तुम लोगोंका बलरामपुरका मुखर्जियोंका घर, और यह रहा तुम लोगोंका सात-पीढ़ीका मान-सम्मान,—शशधरके लड़कोंको यहाँ बुलाकर मैं संसारसे इस्तीफा देता हूँ। सिर्फ़ भाई साहब ही दे सकते हैं सो बात नहीं, द्विजू भी दे सकता है। संन्यास तो नहीं ले सकता, मैं जानता भी नहीं कि क्या चीज़ है वह,—पर रुपये-पैसेका बोझ अनायास ही फेंक-फाँककर चल दूँगा।"

अन्नदाने बन्दनाके दोनों हाथ थामकर कहा—"रुकोगी नहीं दीदी, विपिनकी राय बदलवा नहीं सकोगी? वासूको घर नहीं रख सकोगी?"

"सकूँगी अनु-दीदी।"

"और यह जो सत्यानासी मामला चल रहा है जमाई-बाबूके साथ—रुकवा नहीं सकोगी इसे?"

"हाँ, यह भी कर सकूँगी अनु-दीदी।"—क्षण-भर स्तब्ध रहकर फिर कहने लगी—"ये भी मेरे अबाध्य न होंगे, इसी शर्तपर मैं इस घरकी छोटी-बहू बननेको राजी हुई हूँ अनु-दीदी।"

बातको अच्छी तरह न समझ सकनेसे अन्नदा चुपचाप उसके मुँहकी ओर देखती रही। बन्दनाने कहा—"जो गया सो तो जा ही चुका। ऊपरसे क्या माको भी खोना पड़ेगा? मुकदमा बगैर उठाये उन्हें वापस कैसे लाया जा सकता है?"

द्विजदासने तकियेके नीचेसे चाबियोंका गुच्छा निकालकर बन्दनाके पैरोंके पास फेंक दिया और कहा—"यह लो। अबाध्य न होऊँगा कभी—आज यही शर्त मंजूर करता हूँ तुम्हारी।"

बन्दनाने चाबियोंका गुच्छा उठाकर आँचलसे बाँध लिया।

अब अन्नदाको सारा तात्पर्य समझमें आ गया। बन्दनाको छातीसे लगाकर देरतक वह स्थिर खड़ी रही, उसकी आँखोंसे सिर्फ़ बड़ी-बड़ी बूँदें टपकने लगीं।

× × ×

बन्दनाने विप्रदासके कमरेमें जाकर उन्हें प्रणाम किया। बोली—"भाई साहब, आ गई मैं।"

यह नया सम्बोधन विप्रदासके कानोंको कुछ अटपटा-सा लगा। पर इस बारेमें कुछ न कहकर उन्होंने पूछा—"सुन लिया था तुम आ रही हो, तुम्हारे पिताजीका तार मिला था। रास्तेमें तकलीफ तो नहीं हुई?"

तक मस्तक रखकर प्रणाम करती रही। उसके उठके खड़े होनेपर विप्रदासने कहा—" आज जिसे तुमने पाया है वन्दना, उससे बढ़कर दुर्लभ धन और कुछ नहीं। यह बात मेरी हमेशा याद रखना।"

वन्दनाने कहा—" याद रखूँगी भाई साहब, एक दिनके लिए भी न भूलूँगी।"

जरा ठहरकर बोली—" एक दिन बीमारीमें आपकी सेवा की थी, आपने पुरस्कार देना चाहा था। पर उस दिन मैंने नहीं लिया था,—याद है वह बात ?"

" है।"

" आज वही पुरस्कार लेना चाहती हूँ। वासूको मैंने ले लिया।"

विप्रदासने मुसकराते हुए कहा—" ले लो।"

" उसे सिखाऊँगी मुझे 'मा' कहके पुकारना।"

" ऐसा ही करना। उसकी मा और उसके बाप—दोनोंको ही आज छोड़े जाता हूँ तुम्हारे अन्दर। और छोड़े जाता हूँ इस मुखर्जी-घरानेकी महती मर्यादा तुम्हारे हाथमें।

वन्दनाने क्षण-भर सिर झुकाये चुपचाप मानो यह भार ग्रहण कर लिया। उसके बाद वह बोली—" और एक प्रार्थना है। अपनेको पहचान न सकनेके कारण एक दिन आपके आगे मैंने अपराध किया था। आज वह भूल जाती रही, आज उसके लिए क्षमा चाहती हूँ।"

" क्षमा बहुत दिन पहले ही कर चुका बन्दना। मैं जानता था, तुम्हारी अन्तरात्माने जिसे एकाग्र मनसे चाहा है उसे तुम एक-न-एक दिन पहचानोगी ही। इसीसे, मेरे पास तुम्हें कोई शरम नहीं।"

वन्दनाकी आँखोंमें फिर आँसू भर आये, जबरन उन्हें रोकती हुई बोली—" और भी एक भिक्षा है। हम लोगोंके घर-संसारमें क्या एक दिन भी न रहेंगे आप ? अभिमान और संकोचके वश किसी भी दिन मन-भरकर आपकी सेवा नहीं कर पाई हूँ, पर वह बाधा तो अब जाती रही, अब तो मुझे संकोच नहीं रहा,—रहिए न कुछ दिन मेरे पास ? दो-चार दिन पूजा कर लूँ।"—कहकर वह छलछलाती हुई आँखोंसे उसकी ओर देखती रही, उसका आकुल कंठस्वर मानो अन्तःकरणको भेदकर बाहर निकला था।

विप्रदास मुसकराते हुए चुप रहे।

वन्दनाने कहा—" इस मुसकराहट-जुदा मौनको ही मैं सबसे ज्यादा डरती

तक मस्तक रखकर प्रणाम करती रही। उसके उठके खड़े होनेपर विप्रदासने कहा—"आज जिसे तुमने पाया है वन्दना, उससे बढ़कर दुर्लभ धन और कुछ नहीं। यह बात मेरी हमेशा याद रखना।"

वन्दनाने कहा—"याद रखूँगी भाई साहब, एक दिनके लिए भी न भूलूँगी।"

जरा ठहरकर बोली—"एक दिन बीमारीमें आपकी सेवा की थी, आपने पुरस्कार देना चाहा था। पर उस दिन मैंने नहीं लिया था,—याद है वह बात?"

"है।"

"आज वही पुरस्कार लेना चाहती हूँ। वासूको मैंने ले लिया।"

विप्रदासने मुसकराते हुए कहा—"ले लो।"

"उसे सिखाऊँगी मुझे 'मा' कहके पुकारना।"

"ऐसा ही करना। उसकी मा और उसके बाप—दोनोंको ही आज छोड़े जाता हूँ तुम्हारे अन्दर। और छोड़े जाता हूँ इस मुखर्जी-घरानेकी महती मर्यादा तुम्हारे हाथमें।

वन्दनाने क्षण-भर सिर झुकाये चुपचाप मानो यह भार ग्रहण कर लिया। उसके बाद वह बोली—"और एक प्रार्थना है। अपनेको पहचान न सकनेके कारण एक दिन आपके आगे मैंने अपराध किया था। आज वह भूल जाती रही, आज उसके लिए क्षमा चाहती हूँ।"

"क्षमा बहुत दिन पहले ही कर चुका वन्दना। मैं जानता था, तुम्हारी अन्तरात्माने जिसे एकाग्र मनसे चाहा है उसे तुम एक-न-एक दिन पहचानोगी ही। इसीसे, मेरे पास तुम्हें कोई शरम नहीं।"

वन्दनाकी आँखोंमें फिर आँसू भर आये, जबरन उन्हें रोकती हुई बोली—"और भी एक भिक्षा है। हम लोगोंके घर-संसारमें क्या एक दिन भी न रहेंगे आप? अभिमान और संकोचके वश किसी भी दिन मन-भरकर आपकी सेवा नहीं कर पाई हूँ, पर वह बाधा तो अब जाती रही, अब तो मुझे संकोच नहीं रहा,—रहिए न कुछ दिन मेरे पास? दो-चार दिन पूजा कर लूँ।"—कहकर वह छलछलाती हुई आँखोंसे उसकी ओर देखती रही, उसका आकुल कंठस्वर मानो अन्तःकरणको भेदकर बाहर निकला था।

विप्रदास मुसकराते हुए चुप रहे।

वन्दनाने कहा—"इस मुसकराहट-जुदा मौनको ही मैं सबसे ज्यादा डरती

बैठी थीं दयामयी। सवेरेकी गाड़ीसे आई हैं, अभी तक किसीको मालूम नहीं है। माकी शकल देखकर वन्दनाके हृदयको बड़ी चोट पहुँची। सोनेका-सा रंग काला-स्याह पड़ गया है, माथेमें छोटे-छोटे बाल हैं रूखे-सूखे, धूल भरी है उनमें, आँखें बैठ गई हैं, माथेपर रेखाएँ खिंच गई हैं—दुःख-शोककी ऐसी वेदनापूर्ण तसवीर उसने पहले कभी नहीं देखी। उसे याद उठ आई उस दिनकी उस ऐश्वर्यवती सर्वस्वामिनी विप्रदासकी माकी। कितनेसे दिन बीते हैं अभी! आज उनकी सारीकी सारी महिमा मानो राहकी धूलमें मिल गई है। पास जाकर उसने उन्हें प्रणाम किया, बोली—"कब आई मा, मैं तो जान भी न पाई?"

दयामयीने उसकी ठोड़ी छूकर अपने पोटुए चूमे, बोलीं—"मेरे आनेक खबरकी क्या ज़रूरत थी वन्दना? तब आया करती थी विप्रदासकी मा, इसीसे गाँव-भरके लड़के-बूढ़े सबको खबर लग जाती थी। विपिन, काम तो निबट चुका बेटा, चल न, मा-बेटे आज ही यात्रा कर दें।"

सुनकर विप्रदासने हँसते हुए कहा—"डरो मत मा, मा-बेटेकी यात्रामें विघ्न नहीं आयेगा, पर आज नहीं। वन्दनाके पिता आ रहे हैं कल, अपनी छोटी-बहूके हाथमें सब घर-गृहस्थी सम्हलाये बगैर कैसे जाओगी तुम?"

दयामयी बहुत देर तक चुप रहीं, फिर बोलीं—ऐसा ही हो विपिन। सहन नहीं होगा मुझे, ऐसा झूठ अब कभी मुँहसे न निकालूँगी। पर कै दिन बाकी हैं और?

"सिर्फ़ सात दिन मा। आज ही के दिन हमारी यात्रा शुरू हो जायगी।"

वन्दनाने कहा—"भीतर चलो मा, अपने कमरेमें।"

दयामयीने सिर हिलाकर अस्वीकार किया, बोलीं—"तुम्हारी यह बात मैं न रख सकूँगी बेटी। जितने दिन रहना है, यहीं रहूँगी, और जानेका दिन आयेगा तो यहींसे दोनों जने चल पड़ेंगे। भीतर जो कुछ है, सब तुम्हारा रहा बेटी।"

वन्दनाने जिद नहीं की, सिर्फ़ एक बार उनकी पदधूलि लेकर नीची निगाह किये बाहर चल दिया।

विप्रदासका पत्र पाकर रे साहब एक सप्ताहकी छुट्टी लेकर बलरामपुर आ पहुँचे और कन्याको द्विजदासके हाथ अर्पण करके फिर बम्बई लौट गये।

इस विवाहमें नौबत नहीं बजी, बराती और कन्या-पक्षवालोंमें किसी तरहका विवाद नहीं हुआ, स्त्रियोंने मंगल-ध्वनिकी अस्फुट, शंख बजे दबे हुए स्वरमें, —सुहाग-रात रही स्तब्ध, मौन।

बैठी थीं दयामयी। सवेरेकी गाड़ीसे आई हैं, अभी तक किसीको मालूम नहीं है। माकी शकल देखकर वन्दनाके हृदयको बड़ी चोट पहुँची। सोनेका-सा रंग काला-स्याह पड़ गया है, माथेमें छोटे-छोटे बाल हैं रूखे-सूखे, धूल भरी है उनमें, आँखें बैठ गई हैं, माथेपर रेखाएँ खिंच गई हैं—दुःख-शोककी ऐसी वेदनापूर्ण तसवीर उसने पहले कभी नहीं देखी। उसे याद उठ आई उस दिनकी उस ऐश्वर्यवती सर्वस्वामिनी विप्रदासकी माकी। कितनेसे दिन बीते हैं अभी! आज उनकी सारीकी सारी महिमा मानो राहकी धूलमें मिल गई है। पास जाकर उसने उन्हें प्रणाम किया, बोली—"कब आई मा, मैं तो जान भी न पाई?"

दयामयीने उसकी ठोड़ी छूकर अपने पोढुए चूमे, बोलीं—"मेरे आनेक खबरकी क्या ज़रूरत थी वन्दना? तब आया करती थी विप्रदासकी मा, इसीसे गाँव-भरके लड़के-बूढ़े सबको खबर लग जाती थी। विपिन, काम तो निबट चुका बेटा, चल न, मा-बेटे आज ही यात्रा कर दें।"

सुनकर विप्रदासने हँसते हुए कहा—"डरो मत मा, मा-बेटेकी यात्रामें विघ्न नहीं आयेगा, पर आज नहीं। वन्दनाके पिता आ रहे हैं कल, अपनी छोटी-बहूके हाथमें सब घर-गृहस्थी सम्हलाये बगैर कैसे जाओगी तुम?"

दयामयी बहुत देर तक चुप रहीं, फिर बोलीं—ऐसा ही हो विपिन। सहन नहीं होगा मुझे, ऐसा झूठ अब कभी मुँहसे न निकालूँगी। पर कै दिन बाकी हैं और?

"सिर्फ़ सात दिन मा। आज ही के दिन हमारी यात्रा शुरू हो जायगी।"

वन्दनाने कहा—"भीतर चलो मा, अपने कमरेमें।"

दयामयीने सिर हिलाकर अस्वीकार किया, बोलीं—"तुम्हारी यह बात मैं न रख सकूँगी बेटी। जितने दिन रहना है, यहीं रहूँगी, और जानेका दिन आयेगा तो यहींसे दोनों जने चल पड़ेंगे। भीतर जो कुछ है, सब तुम्हारा रहा बेटी।"

बन्दनाने जिद नहीं की, सिर्फ़ एक बार उनकी पदधूलि लेकर नीची निगाह किये बाहर चल दिया।

विप्रदासका पत्र पाकर रे साहब एक सप्ताहकी छुट्टी लेकर बलरामपुर आ पहुँचे और कन्याको द्विजदासके हाथ अर्पण करके फिर बम्बई लौट गये।

इस विवाहमें नौबत नहीं बजी, बराती और कन्या-पक्षवालोंमें किसी तरहका विवाद नहीं हुआ, स्त्रियोंने मंगल-ध्वनिकी अस्फुट, शंख बजे दबे हुए स्वरमें, —सुहाग-रात रही स्तब्ध, मौन।

रविवार आ गया। विप्रदास और दयामयीके जानेका दिन है आज। तीर्थ-भ्रमण एक-न-एक दिन दयामयीका समाप्त हो ही जायगा, उस दिन घर-संसारका आकर्षण शायद इसी घरमें उन्हें फिरसे खींच लावे, परन्तु यात्रा समाप्त न होगी विप्रदासकी, और कोई भी आकर्षण उसे इस घरमें फिर न ला सकेगा। यह बात सुनी बहुतोंने है। किसीने विश्वास किया है, किसीने नहीं किया।

आँगनमें मोटर खड़ी है। पास और दूर, घरके सभी कोई उपस्थित हैं। स्त्रियाँ दूसरी मंजिलके बरामदेमें खड़ी-खड़ी आँखें पोंछ रही हैं। विप्रदासने गाड़ीपर पैर रखते हुए पूछा—"द्विजूको नहीं देख रहा हूँ, कहाँ है?"

किसीने कहा—"वे घर पर नहीं हैं, किसी कामसे बाहर गये हैं।"

सुनकर विप्रदास हँसने लगे, बोले—"भाग गया! वह सिर्फ मुँहका ही बहादुर है, नहीं तो डरपोकोंका सरदार है।"

वन्दनाका हाथ पकड़े खड़ा था वासुदेव। वह बोला—"तुम कब आओगे बापू? ज़रा जल्दी आना।"

विप्रदास हँसते हुए उसके माथेपर हाथ फेरने लगे, कोई जवाब नहीं दिया।

वन्दनाने सासुके पाँव लागे और माथेसे हाथ छुआए। माने कहा—"वासू रहा छोटी बहू, और रहे मन्दिरमें तुम्हारे ससुर-कुलके राधा-गोविन्दजी। कभी अगर वापस आई तो ये दोनों चीज़ें, तुमसे सम्हाल लूँगी। इतना कहकर उन्होंने आँचलसे अपनी आँखें पोंछ लीं।

वन्दनाने दूरसे विप्रदासको प्रणाम किया। उसके बाद पास आकर सजल नेत्रोंसे रुंधे हुए कण्ठसे कहा—"कलकत्तेमें पूजावाले घरमें जो मूर्ति आपकी एक दिन छिपकर देखी थी, आज फिर वही मूर्ति मैं अपने सामने देख रही हूँ भाई साहब! आज मुझे शोक नहीं है। ठिकाना आपका भले ही न पाऊँ, पर जानती हूँ, मनके अन्दर जिस दिन आपको पुकारूँगी, आना ही होगा उस दिन आपको। कितना ही ना-ना क्यों न करते रहिए, मेरी यह बात हरगिज झूठी नहीं हो सकती।"

विप्रदास सिर्फ ज़रा हँस दिये। जिस तरह लड़केके प्रश्नके उत्तरसे अपनेको बचा गये उसी तरह वन्दनाके उत्तरको भी टाल गये।

गाड़ी चल दी।

रविवार आ गया। विप्रदास और दयामयीके जानेका दिन है आज। तीर्थ-भ्रमण एक-न-एक दिन दयामयीका समाप्त हो ही जायगा, उस दिन घर-संसारका आकर्षण शायद इसी घरमें उन्हें फिरसे खींच लावे, परन्तु यात्रा समाप्त न होगी विप्रदासकी, और कोई भी आकर्षण उसे इस घरमें फिर न ला सकेगा। यह बात सुनी बहुतोंने है। किसीने विश्वास किया है, किसीने नहीं किया।

आँगनमें मोटर खड़ी है। पास और दूर, घरके सभी कोई उपस्थित हैं। स्त्रियाँ दूसरी मंजिलके बरामदेमें खड़ीं-खड़ीं आँखें पोंछ रही हैं। विप्रदासने गाड़ीपर पैर रखते हुए पूछा—" द्विजूको नहीं देख रहा हूँ, कहाँ है ? "

किसीने कहा—" वे घर पर नहीं हैं, किसी कामसे बाहर गये हैं। "

सुनकर विप्रदास हँसने लगे, बोले—" भाग गया ! वह सिर्फ मुँहका ही बहादुर है, नहीं तो डरपोकोंका सरदार है। "

वन्दनाका हाथ पकड़े खड़ा था वासुदेव। वह बोला—" तुम कब आओगे बापू ? ज़रा जल्दी आना। "

विप्रदास हँसते हुए उसके माथेपर हाथ फेरने लगे, कोई जवाब नहीं दिया।

वन्दनाने सासुके पाँव लागे और माथेसे हाथ छुआए। माने कहा—" वासू रहा छोटी बहू, और रहे मन्दिरमें तुम्हारे ससुर-कुलके राधा-गोविन्दजी। कभी अगर वापस आई तो ये दोनों चीज़ें, तुमसे सम्हाल लूँगी। इतना कहकर उन्होंने आँचलसे अपनी आँखें पोंछ लीं।

वन्दनाने दूरसे विप्रदासको प्रणाम किया। उसके बाद पास आकर सजल नेत्रोंसे रुंधे हुए कण्ठसे कहा—" कलकत्तेमें पूजावाले घरमें जो मूर्ति आपकी एक दिन छिपकर देखी थी, आज फिर वही मूर्ति मैं अपने सामने देख रही हूँ भाई साहब ! आज मुझे शोक नहीं है। ठिकाना आपका भले ही न पाऊँ, पर जानती हूँ, मनके अन्दर जिस दिन आपको पुकारूँगी, आना ही होगा उस दिन आपको। कितना ही ना-ना क्यों न करते रहिए, मेरी यह बात हरगिज झूठी नहीं हो सकती। "

विप्रदास सिर्फ ज़रा हँस दिये। जिस तरह लड़केके प्रश्नके उत्तरसे अपनेको बचा गये उसी तरह वन्दनाके उत्तरको भी टाल गये।

गाड़ी चल दी।